Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

Sanray

महाकवि दण्डीकृत

विश्रुतचरितम्

दशकुमारचरितम्——अष्टमोच्छ्वास

रामकृष्ण शुक्ल, एम० ए०, बी० टी०

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

(दण्डी)

विश्रुत-चरितम्

(दशकुमार-चरितम्—अष्टमोच्छ्वासः)

समास-विग्रह-शब्दव्युत्पत्ति-शब्दार्थ-
हिन्दीभाषान्तर-सहित

लेखक
रामकृष्ण शुक्ल एम० ए०, बी० टी०

प्रकाशक
रामनारायणलाल बेनीप्रसाद
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
इलाहाबाद-२

१९६० [मूल्य २.०० रु०

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

प्रकाशक
रामनारायणलाल बेनीप्रसाद
इलाहाबाद–२

३ म ८६७

मुद्रक—
आजाद प्रेस, प्रयाग

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

विश्रुतचरित और आचार्य दंडी

आचार्य दंडी के विषय में एक जनश्रुति प्रसिद्ध है—

त्रयोऽग्नयस्त्रयो वेदास्त्रयो देवास्त्रयो गुणाः।
त्रयो दंडिप्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुताः॥

इस जनश्रुति के आधार पर दंडी के तीन ग्रन्थ होते हैं। परन्तु काव्यादर्श तथा दशकुमारचरित के अतिरिक्त अन्य कोई भी ऐसा ग्रन्थ नहीं प्राप्त हुआ है जो दंडी का रचा हुआ हो। कोई-कोई विद्वान् "अवन्तिसुन्दरीकथा" को दंडी का ग्रन्थ बताते हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि "छन्दोविचिति" नामक काव्य दंडी का तीसरा ग्रन्थ है। पर प्रमाणपूर्वक कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

काव्यादर्श में काव्यशास्त्र से सम्बन्ध रखने वाले प्रायः सभी विषय वर्णित हैं। इसमें प्रधानतया दो काव्यरीतियों का वर्णन है, वैदर्भीरीति तथा गौडीरीति। दंडी ने वैदर्भीरीति की बड़ी ही प्रशंसा की है।

आचार्य दंडी का द्वितीय ग्रन्थ है दशकुमारचरित। यह अत्यन्त सुन्दर गद्य ग्रन्थ है। इसमें तीन भाग हैं (१) पूर्वपीठिका (२) दशकुमारचरित (३) उत्तरपीठिका। पूर्वपीठिका में पाँच उच्छ्वास हैं, दशकुमारचरित में आठ उच्छ्वास हैं। उत्तरपीठिका अष्टम उच्छ्वास का उपसंहारमात्र है। यह अत्यन्त छोटा-सा भाग है जिसमें केवल कतिपय पृष्ठ हैं। विश्रुतचरित द्वितीय भाग अर्थात् दशकुमारचरित का आठवाँ उच्छ्वास है, जिसमें विश्रुत नामक कुमार आप-बीती सारी घटनाएँ वर्णन

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

करता है। इसकी भाषा ललित तथा मधुर है और कादम्बरी के रचयिता बाणभट्ट तथा वासवदत्ता के रचयिता सुबन्धु की भाषाओं से सरल भी है। इसमें श्लेषालङ्कार नहीं है। उपमा आदि अलंकार भी प्रचुरता से नहीं आए हैं। इस में चौरशास्त्र, मृगया-चातुर्य, कूटनीति, द्यूतक्रीडा आदि का वर्णन खूब किया गया है, जिसके कारण कुछ विद्वान् इस पर अश्लीलता का दोषारोपण करते हैं। उस समय समाज में कैसी-कैसी कुरीतियाँ प्रचलित थीं—इसका वर्णन आचार्य दंडी ने बिल्कुल स्पष्ट शब्दों में किया है।

श्री वरदाचारी का मत है कि :—

"As a prose composition, the दशकुमारचरित does not rise to a high level. There are grammatical errors, particularly in the पूर्वपीठिका। Long compounds, which are said to form the very life of prose, are practically absent. Vulgarity in sense and expression which दण्डी condemns in काव्यादर्श finds room in the work. On this ground, the critics hold that दण्डी, the author of the काव्यादर्श, could not have written this prose work. Some others hold that दण्डी was a trained rhetorician but a poor prose-writer as proved by the दशकुमारचरित. It is also held that the prose work was written as the first work and the काव्यादर्श was written later. These views, in the absence of reliable evidences, are to remain only conjectures.

दण्डी is credited with पदलालित्य *i. e.* grace in expression. The main text of the दशकुमारचरित stands to a certain extent as an illustration to this, but the अवन्तिसुन्दरीकथा, if it be Dandin's, would serve a better

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

illustration. The author, whoever he was, deserves the credit for having composed the seventh chapter in the main text without the use of the labial letters".

कुछ विद्वानों का मत है कि यह ग्रन्थ एक लेखक का लिखा हुआ नहीं है। उनका कहना है कि इस ग्रन्थ को दो पृथक्-पृथक् विद्वानों ने लिखा है। वे कहते हैं कि पूर्वपीठिका का लेखक कोई दूसरा है और द्वितीय भाग अर्थात् दशकुमारचरित का लेखक कोई भिन्न है, क्योंकि उनके मत में दोनों भागों की शैलियों में महान् अन्तर है।

महाकवि दंडी

महाकवि दंडी के विषय में प्रामाणिक रूप से कुछ भी ज्ञात नहीं। जो कुछ थोड़ा बहुत ज्ञात है वह किंवदन्तियों और जनश्रुतियों की देन है।

कुछ विद्वान् कहते हैं कि किरातार्जुनीय के रचयिता कविवर भारवि के एक परम मित्र थे जिनका नाम दामोदर था, और दंडी दामोदर के प्रपौत्र थे। कुछ विद्वान् कहते हैं कि भारवि का नाम दामोदर था, और दंडी कवि उन्ही भारवि के प्रपौत्र थे। दंडी के पिता का नाम वीरदत्त तथा माता का नाम गौरी देवी था। वीरदत्त चार भाई थे और चारों में सबसे छोटे थे। यह दर्शनशास्त्र के प्रकाण्ड पंडित थे। दंडी कवि बाल्यावस्था में ही मातृ-पितृ-विहीन हो गए थे। यह काञ्चीपुरी के निवासी थे।

दंडी के समय के विषय में भी कुछ निश्चयपूर्वक ज्ञात नहीं है। तथापि दो सीमाएँ बताई जाती हैं। बाद से बाद वाली सीमा ईसवी सन् की बारहवीं शताब्दी, तथा पहिले की सीमा ईसवी सन् की चौथी शताब्दी बताई जाती है।

वामन का समय नवीं शताब्दी बताया जाता है। वामन ने दंडी की रीतिप्रणाली को खूब विशद तथा विकसित किया है, अतः दंडी वामन के पहिले हुए होंगे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

दूसरा मत यह है। माधव के शंकर दिग्विजय में, बाणभट्ट तथा मयूरकवि के साथ-साथ, दंडी का नाम भी आया है। बाणभट्ट का समय छठीं शताब्दी ईसवी का पिछला भाग बताया जाता है। इस आधार पर यह अनुमान लगाया जाता है कि दंडी बाणभट्ट से १०० वर्ष पहिले अर्थात् पाँचवीं शताब्दी के पिछले भाग में हुए होंगे।

दशकुमारचरित में बौद्धों का वर्णन आया है। बौद्धों का इस प्रकार का वर्णन भवभूति ने भी किया है। इस आधार पर कहा जाता है कि भवभूति और दंडी समकालीन रहे होंगे। बौद्धों के विषय में ऐसा वर्णन कालिदास, बाण अथवा सुबन्धु में नहीं आया है। अतएव दंडी को कालिदास, बाण अथवा सुबन्धु का समकालीन बताना उचित न होगा।

आचार्य दंडी के विषय में बहुत सी जनश्रुतियाँ भी हैं। कहा जाता है कि आचार्य दंडी ने भामह के ग्रन्थों पर भाष्य लिखा था। उस भाष्य में उन्होंने भामह के सिद्धान्तों तथा मतों का खूब विवेचन किया है। इससे अनुमान लगाया जाता है कि आचार्य दंडी भामह के पश्चात् हुए होंगे। भामह का समय ६०० ईसवी के बाद का बताया जाता है। परन्तु कोई-कोई विद्वान् भामह का समय ५०० ईसवी के समीप मानते हैं।

कहा जाता है कि एक बार सरस्वती देवी गेंद खेल रही थीं। सरस्वती देवी के हाथों में गेंद की जो दशा हो रही थी, उसका वर्णन तीनों कवियों ने किया।

कालिदास—पयोधराकारधरो हि कन्दुकः
करेण रोषादिव ताड्यते मुहुः।
इतीव नेत्राकृति भीतमुत्पलं
स्त्रियः प्रसादाय पपात पादयोः।

भवभूति —विदितं ननु कन्दुक ते हृदयम्
प्रमदाधरपल्लवलुब्ध इव।
वनिताकर-तामरसाभिहतः
पतितः पतितः पुनरुत्पतसि।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

दण्डी —एकोऽपि त्रय इव भाति कन्दुकोऽयम्
कान्तायाः करतलरागरक्तरक्तः ।
भूमौ तच्चरणनखांशुगौरगौरः
स्वः स्थः सन्नयनमरीचिनीलनीलः ॥

परन्तु इस जनश्रुति के आधार पर दंडी, कालिदास तथा भवभूति को समकालीन मानना सर्वथा अनुचित होगा ।

(२) एक बार कालिदास और दंडी में इस बात पर विवाद हुआ कि दोनों में बड़ा कवि कौन है । विवाद के निपटारे के लिए दोनों सरस्वती देवी के पास गए और प्रार्थना की कि हे देवि, आप अपना निर्णय दीजिए । सरस्वती तुरन्त बोल उठीं—

"कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः" ।

इस पर कालिदास को बड़ा क्रोध आया । उन्होंने पुनः सरस्वती से पूछा—

"कोऽहं रण्डे—ऐ राँड, मैं क्या हूँ ।" इस पर सरस्वती देवी ने कहा "त्वमेवाहं न संशयः" ।

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम् ।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः ॥

संक्षेपतः जनश्रुतियों और किंवदन्तियों के आधार पर किसी कवि की कृति और जीवनी के संबंध में निर्णीत मत नहीं स्थिर किया जा सकता, पर अब तक जो प्रमाण अंतस्साक्ष्य और बहिस्साक्ष्य के आधार पर उपलब्ध हैं, उनके आधार पर केवल 'दशकुमारचरित' और 'काव्यादर्श' ही दंडी के प्रामाणिक और विश्वसनीय ग्रन्थ कहे जा सकते हैं । 'दशकुमारचरित' पहले की रचना है और 'काव्यादर्श' बाद की ।

जहाँ तक जीवनी का सम्बन्ध है, इस पर कुछ सीमाएँ निर्धारित हैं । बाद से बाद वाली सीमा बारहवीं शताब्दी तथा पूर्व से पूर्व वाली

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

सीमा चौथी शताब्दी है। बीच की सीमा छठीं और सातवीं शताब्दी मानी जाती है। किन्तु समसामयिक काव्यों और अन्य प्रमाणों के बल पर यही अनुमान होता है कि दंडी छठीं शताब्दी के अन्त में ही हुए होंगे। संस्कृत साहित्य के भारतीय और पाश्चात्य इतिहासों से भी इसी काल की पुष्टि होती है।

काव्य-क्षेत्र में तो निर्विवाद है कि कवि में भावों की सुमधुर अभिव्यंजना, शब्दों की सुष्ठु योजना, छंदों का निर्वाह और अलङ्कारों का अलंकरण बे-जोड़ है। जीवन-व्यापी क्रिया-कलापों के भिन्न-भिन्न अंतर्वृत्तियों का जो अंकन कवि में मिलता है, वह अपूर्व है। अपनी मनोहर शैली और पदलालित्य में तो कवि विश्व-वाङ्मय में अकेला है।

विश्रुतचरित का राजकुमार जब आप-बीती सारी घटनाओं का वर्णन करता है, तब सहसा उसकी अंतर्हित पीड़ा, असह्य वेदना और व्याकुलता की ज्वालामयी जलन भड़ककर हृदय-हृदय को झुलसा देती है और अपना अमिट प्रभाव छोड़ जाती है। यही नहीं, जहाँ कवि में सामाजिक कुरीतियों, मनोभावों और क्रियाकलापों का वर्णन है, वहाँ साथ में दार्शनिक सुझाव और विवेचन भी है। निष्कर्षतः यह कहना अत्युक्ति न होगा कि कवि दंडी की स्थिति काव्य-जगत् में सूर्य की भाँति सदा अक्षुण्ण है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

Antony 54 40 12

दशकुमारचरितम्

अष्टमोच्छ्वासः

विश्रुतचरितम्

[1]अथ सोऽप्याचचक्षे—'देव, मयाऽपि परिभ्रमता विन्ध्याटव्यां कोऽपि कुमारः क्षुधा तृषा च क्लिश्यन्नक्लेशार्हः क्वचित्कूपाभ्याशे अष्टवर्षदेशीयो दृष्टः। स च त्रासगद्गदमगदत्—महाभाग, क्लिष्टस्य मे क्रियतामार्य, साहाय्यकम्। अस्य मे प्राणापहारिणीं पिपासां प्रतिकर्तुमुदकमुदञ्चन्निह कूपे कोऽपि निष्कलो ममैकशरणभूतः पतितः। तमलमस्मि नाहमुद्धर्तुमिति।

हिन्दी अनुवाद—इसके बाद उसने (विश्रुत ने) भी कहा। महाराज, घूमते-घूमते मेरे द्वारा भी, विन्ध्याचल के वन में, क्लेश (पाने) के अयोग्य, भूख तथा प्यास से क्लेशित होता हुआ, लगभग आठ वर्ष का, एक बालक किसी कुएँ के पास देखा गया। डर के मारे गला-रुँधे हुए स्वर में वह बोला-हे महाभाग आर्य (पूज्य), कष्ट में पड़े हुए मुझ (बालक) की (आप के द्वारा) सहायता की जाय। प्राण हरने वाली मेरी प्यास को दूर करने के लिए, जल निकालता हुआ एक बूढ़ा, जो मेरा एकमात्र सहारा (शरण) था, इसी कुएँ में गिर पड़ा है। उसको निकालने के लिए मैं समर्थ नहीं हूँ।

१. अथेति क्वचिन्नास्ति।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

टिप्पणी—अथ—अनन्तरम्, इसके बाद, सप्तमोच्छ्वास में मंत्रगुप्त द्वारा वर्णित वृत्तान्त के बाद। सः—विश्रुतनामकः राजकुमारः। आचचक्षे—कथयामास, कहा, आ+चक्ष् (अदादि आत्मने०)+लिट् प्रथम पुरुष एक वचन। परिभ्रमता—अटता, घूमते हुए (मेरे) द्वारा, परि+भ्रम्+शतृ पुंलिंग तृतीया एक वचन, 'मया' का विशेषण। विन्ध्याटव्याम्—विन्ध्यारण्ये, अटवी—जंगल। विन्ध्या+अटव्याम्। 'अटव्याम्' अटवी की सप्तमी का एक वचन है, विन्ध्यायाः (विन्ध्याचलस्य) अटवी, इति विन्ध्याटवी, तस्याम् विन्ध्याटव्याम् (षष्ठी तत्पुरुष), विन्ध्याचल के जंगल में। क्षुधा—बुभुक्षया, भूख से, क्षुध् (स्त्रीलिंग), तृतीया एकवचन, क्षुत् क्षुधौ क्षुधः, क्षुधम् क्षुधौ क्षुधः, क्षुधा क्षुद्भ्याम् क्षुद्भिः इत्यादि। तृषा—पिपासया, प्यास से, तृष् (स्त्रीलिंग), तृतीया एकवचन, तृट् तृषौ तृषः, तृषम् तृषौ तृषः, तृषा तृड्भ्याम् तृड्भिः इत्यादि। क्लिश्यन्—क्लेशम् अनुभवन्, दुःखित होता हुआ, क्लिश् (दिवादि परस्मै०)+शतृ पुंलिंग, प्रथमा एक वचन, 'कुमारः' का विशेषण। क्लिश्यन्नक्लेशार्हः—क्लिश्यन्+अक्लेशार्हः। अक्लेशार्हः—अर्हति इति अर्हः योग्यः अर्ह्+अच्, 'नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः' से अर्ह् में अच् प्रत्यय जुड़ा है। क्लेशस्य अर्हः (योग्यः) इति क्लेशार्हः (षष्ठी तत्पुरुष), न क्लेशार्हः इति अक्लेशार्हः (नञ् तत्पुरुष), क्लेश न पाने योग्य कहने का तात्पर्य यह है कि वह कुमार अत्यन्त सुकुमार तथा कोमल था, अतः कष्ट सहन करने योग्य नहीं था। कूपाभ्याशे—कूपसमीपे, कुएँ के समीप। अभ्याशः—समीपम्, कूपस्य अभ्याशः इति कूपाभ्याशः तस्मिन् कूपाभ्याशे (सप्तमी तत्पु०)। अष्टवर्षदेशीयः—लगभग आठ वर्ष का, यहाँ देशीयर् प्रत्यय लगा है; "ईषदसमाप्तौ कल्पब्देश्यदेशीयरः" सूत्र से कल्प, देश्य तथा देशीय प्रत्यय "लगभग" या "कुछ कम" के अर्थ में लगाये जाते हैं, अष्टौ वर्षाणि प्रमाणं यस्य स अष्टवर्षः, ईषत् असमाप्तः अष्टवर्षः इति अष्टवर्षदेशीयः अथवा अष्टवर्षकल्पः, अथवा अष्टवर्षदेश्यः। त्रासगद्गदम्—त्रासः—डर, त्रस+घञ्; गद्गद—अव्यक्तम्, अस्पष्टम्, रुँधा हुआ स्वर, त्रासेन गद्गदम् यथा स्यात्तथा इति त्रासगद्गदम्, डर के

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

मारे रुँधे हुए गले से। अगदत्—अकथयत्, कहा, गद् धातु + लङ् प्रथम पुरुष एक वचन। महाभाग—महोदय, महान् भागः यस्य सः महाभागः तत्सम्बुद्धौ हे महाभाग (बहुव्रीहि)। क्लिष्टस्य—कष्टापन्नस्य, कष्ट में पड़े हुए (मुग्ध बालक) की, क्लिश् + क्त। आर्य—हे माननीय, हे पूजार्ह! साहाय्यकम्—साहाय्यम्, सहायता। सहायस्य भावः साहाय्यम्, सहाय + ष्यञ्, साहाय्यम् एवं साहाय्यकम्, साहाय्य + कन् (स्वार्थे)। अस्य मे—ये दोनों षष्ठ्यन्त शब्द आठ वर्ष वाले बालक के लिए आए हैं, इस मुग्ध (कुमार) की। प्राणापहारिणीम् पिपासाम्—जीवनान्तकरीं तृषाम्, प्राणों को हरने वाली प्यास को, पातुम् इच्छा पिपासा (प्यास), पा + सन् + टाप्। प्राणान् अपहर्तुं शीलमस्याः इति प्राणापहारिणी ताम् प्राणापहारिणीम्, प्राण + अप + हृ + णिनि + ङीप् (ताच्छील्ये णिनिः) स्वभाव या प्रकृति द्योतित करने के लिए 'णिनि' प्रत्यय लगाया जाता है। प्रतिकर्तुम्—दूरी-कर्तुम्, दूर करने के लिए, प्रति + कृ + तुमुन्। उदकम्—जलम्। उदञ्चन्—निष्कासयन्, आकर्षन्, निकालता हुआ, उत् + अञ्च् + शतृ प्रथमा एकवचन पुंलिङ्ग, इसका विशेष्य है "कोऽपि निष्कलः"। इह कूपे—अस्मिन् कूपे, इस कुएँ में। ध्यान देने की बात है कि क्रियाविशेषण अव्यय "इह" सङ्केतवाचक विशेषण "अस्मिन्" के तौर पर प्रयुक्त हुआ है। निष्कलः—वृद्धः, स्थविरः, बुड्ढा आदमी, निर्गताः कलाः यस्मात् स निष्कलः (बहुव्रीहि), जिसमें से सारी शारीरिक शक्ति निकल गई हो। ममैकशरणभूतः—मम + एकशरण-भूतः एकम् (केवलम्) एव शरणम् इति एकशरणम्, (कर्मधारय), एकमात्र सहारा, एकशरणं भूतः इति एकशरणभूतः, एक मात्र सहारा बना हुआ। पतितः—गिर गया, पत् + क्त, अस्मिन् कूपे पतितः—इस कुएँ में गिर गया। तमलमस्मि—तम् + अलम् + अस्मि। अलम्–समर्थः। नाहमु-द्धर्तुमिति—न + अहम् + उद्धर्तुम् + इति। उद्धर्तुम्—कूपात् निस्सारयितुम्, निकालने के लिए, उत् + हृ + तुमुन्, इस वाक्य का अन्वय इस प्रकार होगा—अहं तम् उद्धर्तुम् अलं न अस्मि—मैं उसको निकालने के लिए समर्थ नहीं हूँ। अर्थात् मैं उसको कुएँ में से नहीं निकाल सकता।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

अथाहमभ्येत्य व्रतत्या कयाऽपि वृद्धमुत्तार्य तं च बालं वंशनालीमुखोद्धृताभिरद्भिः फलैश्च पञ्चषैः शरक्षेपोच्छ्रितस्य [1]लकुचवृक्षस्य शिखरात्पाषाणपातितैः प्रत्यानीतप्राणवृत्तिमापाद्य, तरुतलनिषण्णस्तं जरन्तमब्रवम् 'तात, क एष बालः, को वा भवान्, कथं चेयमापदापन्ना' इति । सोऽश्रुगद्गदमगदत्—'श्रूयतां महाभाग । विदर्भो नाम जनपदः । तस्मिन्भोजवंशभूषणम्, अंशावतार इव धर्मस्य, अतिसत्त्वः, सत्यवादी, वदान्यः, विनीतः, विनेता प्रजानाम्, रञ्जितभृत्यः, कीर्तिमान्, उदग्रः, बुद्धिमूर्तिभ्यामुत्थानशीलः, शास्त्रप्रमाणकः शक्यभव्यकल्पारम्भी, संभावयिता बुधान्, प्रभावयिता सेवकान्, उद्भावयिता बन्धून्, न्यग्भावयिता शत्रून्, असंबद्धप्रलापेष्वदत्तकर्णः, कदाचिदप्यवितृष्णो गुणेषु, अतिनदीष्णः कलासु, नेदिष्ठो धर्मार्थसंहितासु, स्वल्पेऽपि सुकृते सुतरां प्रत्युपकर्ता, प्रत्यवेक्षिता कोशवाहनयोः, यत्नेन परीक्षिता सर्वाध्यक्षाणाम्, उत्साहयिता कृतकर्मणामनुरूपैर्दानमानैः, सद्यःप्रतिकर्ता दैवमानुषीणामापदाम्, षाड्गुण्योपयोगनिपुणः, मनुमार्गेण प्रणेता चातुर्वर्ण्यस्य, पुण्यश्लोकः, पुण्यवर्मा नामाऽऽसीत्।

हिन्दी अनुवाद—इसके अनन्तर, मैंने पास जाकर, किसी लता से, बुड्ढे को (कुएँ से) निकाल कर, बाँस की नली द्वारा निकाले हुए जल से, और बाण फेंकने से जितना ऊँचा जा सकता है उतने ऊँचे बड़हर के वृक्ष की चोटी से, पत्थर से (पत्थर मार कर) गिराए हुए (तोड़े हुए) पाँच छः फलों से, उस बालक की प्राणवृत्ति लौटालकर (उस बालक को होश में लाकर), वृक्ष के नीचे बैठ कर, उस बुड्ढे से कहा। हे माननीय, यह लड़का कौन है? अथवा आप कौन है? और यह विपत्ति कैसे आ पड़ी? वह आँसुओं के कारण गला-रुँधे हुए स्वर में कहने लगा—महानुभाव, सुना जाय (सुनिए)। विदर्भ नाम का (एक) जनपद (देश) है। उस (देश) में भोजवंश का भूषण, तथा धर्म का अंशावतार,

---

१. लिकुच।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

पवित्रकीर्ति वाला पुण्यवर्मा नाम का एक राजा था। (वह पुण्यवर्मा) अत्यन्त पराक्रमी (बलशाली), सत्यवादी, दाता, अत्यन्त विनम्र, प्रजा को शिक्षा देने वाला, (अथवा योग्यतानुसार प्रजा को दण्ड देने वाला अथवा प्रजा के ऊपर शासन करने वाला), नौकरों को प्रसन्न रखने वाला, यशस्वी, उन्नत, बुद्धि तथा स्वरूप से उन्नतिशील (दीखने वाला), शास्त्र को प्रमाण मानने वाला, जो काम अपने से हो सके, साधारण जनता के लिए हितकर हो तथा न्याययुक्त हो ऐसे कामों को करने वाला, पण्डितों का आदर करने वाला, भृत्यों पर प्रभाव रखने वाला, भाई-बन्धुओं को ऊँचा उठाने वाला, शत्रुओं का दमन करने वाला (अथवा शत्रुओं को नीचा दिखाने वाला), जिन बातों से अपना कोई सरोकार न हो उनको (अर्थात् असम्बद्ध बातों को) न सुनने वाला, गुणों से कभी भी तृप्त न होने वाला, कलाओं में अति-निपुण, धर्म-शास्त्र तथा अर्थ-शास्त्र के अत्यन्त निकट रहने वाला (अर्थात् धर्म-शास्त्र तथा अर्थ शास्त्र में प्रकाण्ड पण्डित) थोड़ी-सी भी उसकी भलाई की जाने पर प्रचुर प्रत्युपकार करने वाला, खजाना और वाहन (सेना के हाथी, घोड़े आदि) की देख-रेख रखने वाला, सभी अफसरों के ऊपर सावधानी के साथ दृष्टि रखने वाला, उचित पुरस्कार तथा सम्मान द्वारा काम करने वालों का उत्साह बढ़ाने वाला, दैवी तथा मानुषी आपदाओं को तुरन्त दूर करने वाला, छहों गुणों के उपयोग में निपुण, (तथा) महाराज मनु की आज्ञानुसार चातुर्वर्ण्य (को व्यवस्थित रखने वाला था। चारों वर्ण, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र)।

टिप्पणी--अभ्येत्य--समीपं गत्वा, अभि+आ+इ+ल्यप्, नजदीक जाकर। व्रतत्या--लतया, लता से, 'व्रतति' शब्द की तृतीया का एक वचन है। 'वल्ली तु व्रततिर्लता'। कयापि व्रतत्या--किसी लता से। उत्तार्य--बहिः निस्सार्य, ऊपर (बाहर) निकाल कर, उत्+तृ+णिच्+ल्यप्। वंशनालीमुखोद्धृताभिः अद्भिः—वंश--बाँस, मुख--छिद्र उद्धृत—निष्कासित, निकाला हुआ, बाँस की नली के द्वारा निकाले हुए (जल से); यह

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

"अद्भिः" का विशेषण है; "अद्भिः" 'अप्' शब्द की तृतीया का बहुवचन है; 'अप्' शब्द नित्य स्त्रीलिङ्ग तथा बहुवचनान्त हुआ करता है। वंशस्य नाली इति वंशनाली (षष्ठी तत्पु०), बाँस की नाली (नल) वंशनाल्याः मुखम् इति वंशनालीमुखम् (ष० तत्पु०), बाँस की नली के द्वारा; वंशनालीमुखेन उद्धृताः (निष्कासिताः) इति वंशनालीमुखोद्धृताः, ताभिः वंशनालीमुखोद्धृताभिः (तृतीया तत्पुरुष) बाँस की नाली के द्वारा निकाले लिए। अद्भिः—जलैः, जल से। शरक्षेपोच्छ्रितस्य लकुचवृक्षस्य शिखरात् पाषाण-पातितैः पञ्चषैः फलैः—तात्पर्य यह कि 'लकुच' वृक्ष (बड़हर का पेड़) बहुत ऊँचा था, इतना ऊँचा था कि उसके फल हाथ से या लग्गी से नहीं पाए जा सकते थे। इसलिए पत्थर के ढेले मार मार कर पाँच छः फल तोड़े गए। लकुचवृक्ष—बड़हर का पेड़। शर—बाण। क्षेप—फेंकना। क्षिप्+घञ्। उच्छ्रित—उच्च, ऊँचा। पाषाण—प्रस्तर-खण्ड, पत्थर। पातित—गिराए हुए, पत्+णिच्+क्त। शरस्य क्षेपः इति शरक्षेपः (षष्ठी तत्पुरुष), बाण का फेंकना, फेंकने से बाण जितना ऊँचा जाता है उस ऊँचाई को शरक्षेप कहते हैं। बाण की गति। शरक्षेपात् अपि उच्छ्रितः (उच्चः) इति शरक्षेपो-च्छ्रितः (पञ्चमी तत्पुरुष) तस्य शरक्षेपोच्छ्रितस्य, फेंकने से बाण जितना ऊँचा आकाश में जा सकता है उससे भी ऊँचा वह बड़हर का पेड़ था। शिखरात्—मूर्ध्नः, चोटी से। पाषाणैः—(प्रस्तरखण्डैः) पातितानि फलानि इति पाषाणपातितानि तैः पाषाणपातितैः फलैः—(तृतीया तत्पुरुष), पत्थरों द्वारा गिराए हुए (फलों) से। पञ्चषैः फलैः—पाँच छः फलों से, पञ्च षड् वा संख्या येषां तानि पञ्चषाणि, तैः पञ्चषैः (बहुव्रीहि), 'बहुव्रीहौ संख्येये डच् बहुगणात्' इति समासान्तो डच् प्रत्ययः, पञ्च+षष्+डच्, प्रत्यानीतप्राण-वृत्तिम्—प्रत्यानीत—फिर से वापस ला दी गई, प्रति+आ+नी+क्त। वृत्तिः—अवस्था, वृत्+क्तिन् भावे, प्राणानां वृत्तिः इति प्राणवृत्तिः (षष्ठी तत्पु०), होश-हवास, संज्ञा, चेतनाशक्ति। प्रत्यानीता (पुनः आनीता) प्राणवृत्ति, यस्य सः प्रत्यानीतप्राणवृत्तिः तम् प्रत्यानीतप्राणवृत्तिम् (बहुव्रीहि), विशेषण है "तं बालम्" का; जिसकी प्राणवृत्ति (चेतना शक्ति) फिर से

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

लौटा लाई गई हो ऐसा उस बालक को बना कर। यानी उस बालक के होश-हवास को फिर से लौटा कर। आपाद्य—कृत्वा, आ+पद्+णिच्+ल्यप्। तरुतलनिषण्णः—वृक्षस्य अधस्तात् उपविष्टः, पेड़ के नीचे बैठा हुआ, निषण्ण—बैठा हुआ, नि+सद्+क्त, तरोः तलम् इति तरुतलम् (षष्ठी तत्पुरुष), तरुतले निषण्णः (उपविष्टः) इति तरुतलनिषण्णः (सप्तमी तत्पुरुष), विशेषण है "अहम्" का। तं जरन्तम्—तं वृद्धम्, उस बुड्ढे को, जृ+शतृ+द्वितीया एक वचन। कथं चेयमापदापन्नेति—कथं च इयम् आपद् अपन्ना इति, यह विपत्ति कैसे आ पड़ी। आपन्ना—आगता, आपतिता, आ+पद्+क्त+टाप्। आपद्—विपत्तिः। अश्रुगद्गदम्—वाष्पकारणात् अस्पष्टम्, अश्रुभिः वाष्पैः गद्गदं यथा स्यात्तथा इति अश्रुगद्गदम्, आँसुओं के कारण गला रुँधा हुआ। अगदत्—उवाच, कहा, गद् (बोलना, कहना, भ्वादि परस्मै)+लङ्—प्रथमपुरुष एकवचन। श्रूयताम्—आकर्ण्यताम्, सुना जाय, श्रु धातु, कर्मवाच्य, लोट् प्रथमपुरुष एकवचन। कर्तृवाच्य में होगा "शृणु"। महाभाग—महानुभाव, भाग्यवान् महोदय, उदार सज्जन, महान् भागो यस्य स महाभागः तत्सम्बोधने हे महाभाग (बहुव्रीहि)। जनपदः—देशः। तस्मिन्—तस्मिन् विदर्भ-नामके जनपदे, उस विदर्भनामक देश में। भोजवंश भूषणम्—भोजकुलालंकारः, भोजवंश का आभूषणस्वरूप, भोजस्य वंशः इति भोजवंशः (ष० त०), तस्य भूषणम् इति भोजवंशभूषणम् (ष० त०)। धर्मस्य अंशावतार इव—धर्म के आंशिक अवतार के समान, अंशेन अवतारः इति अंशावतारः (तृतीया तत्पुरुष), आंशिक अवतार। अतिसत्त्वः—विपुलपराक्रमः, अत्यन्त पराक्रमी; अतिक्रान्तः सत्त्वम् इति अतिसत्त्वः (प्रादि समास), (अत्यादयः क्रान्ताद्यर्थे द्वितीयया)। सत्यवादी—सत्यं वदति तच्छीलः इति सत्यवादी (सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये), सत्य+वद्+णिनि। वदान्य—बहुप्रदः, उदार, दानी, "स्युर्वदान्यस्थूललक्ष्यदान-शौण्डा बहुप्रदे" इत्यमरः। सुविनीतः—सुतराम् अत्यन्तं विनीतः नम्रः इति सुविनीतः, अत्यन्त विनम्र। प्रजानां विनेता—विनेता—शिक्षाकर्ता, अथवा शासकः, प्रजाओं को शिक्षा देने वाला अथवा प्रजाओं पर शासन करने

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

वाला। रञ्जितभृत्यः—जिसके द्वारा भृत्य (सदा) प्रसन्न रक्खे जाते थे, रञ्जिताः भृत्याः येन सः रञ्जितभृत्यः (बहु०)। कीर्तिमान्—यशस्वी, कीर्तिः विद्यते अस्य इति कीर्तिमान्, कीर्ति+मतुप्। उदग्रः—उन्नतः, बहुत उच्च आचार-विचार वाला। मूर्तिबुद्धिभ्याम् उत्थानशीलः—मूर्तिः—स्वरूपम्, आकृतिः। बुद्धिः—मेधा, मतिः, मूर्तिश्च बुद्धिश्च इति मूर्तिबुद्धी, ताभ्याम् मूर्तिबुद्धिभ्याम् (द्वन्द्व)। उत्थानशीलः—उत्थान—पौरुषे, उन्नति, "उत्थानं पौरुषे तन्त्रे संनिविष्टोद्गमेऽपि च" इति विश्वः। उत्थानं शीलं यस्य सः उत्थानशीलः पौरुषस्वभावः, पुरुषार्थ अथवा उन्नति करना जिसके स्वभाव में पड़ गया था अर्थात् जो स्वभावतः पुरुषार्थी अथवा उन्नति करने वाला था। शास्त्रप्रमाणकः—शास्त्रं प्रमाणं मत्वा निखिलकार्यकर्ता, शास्त्रं प्रमाणं यस्य सः शास्त्रप्रमाणकः (बहुव्रीहि), जिसके लिए शास्त्र ही प्रमाण था, अर्थात् जो शास्त्र के नियमों के अनुसार सारा व्यवहार करता था। शक्यभव्यकल्पारम्भी—शक्य= शक्+यत्, वह कार्य जिसको कर सकना अपनी शक्ति के अन्दर हो। भव्यम्—भू+यत्, जन-लालितम् (जनप्रियम्) लोकप्रियः "शक्यं तु सुकरं कर्म, भव्यं तु जनलालितम्। कल्पं युक्तं न भङ्गेन सदैवैव समाचरेत्" इति दिवाकरः। भव्य का अर्थ "शुभ" तथा "उत्तम" भी होता है। कल्प—विधि, न्याययुक्त कर्म; "कल्पो न्याय्ये विधौ शास्त्रे, संगते ब्रह्मवासरे। कल्पद्रुमे विकल्पे च" इति महीपः। शक्यश्च भव्यश्च कल्पश्च इति शक्यभव्यकल्पः (विशेषणा-खिलपदकर्मधारय), शक्यभव्यकल्पश्चासौ आरम्भश्च इति शक्यभव्यकल्पारम्भः (विशेषणपूर्वपदकर्मधारय), शक्यभव्यकल्पारम्भः अस्ति अस्य इति शक्यभव्यकल्पारम्भी, शक्यभव्यकल्पारम्भ + इनि (अत इनिठनौ)। अथवा शक्यश्च भव्यश्च इति शक्यभव्यः (विशेषणोभयपद कर्मधारय)। शक्यभव्यः कल्पः (विधिः) इति शक्यभव्यकल्पः (विशेषणपूर्वपदकर्मधारय)। शक्यभव्यकल्पम् आरभते इति शक्यभव्यकल्पारम्भी, शक्यभव्यकल्प+आ+रभ्+णिनि। वह व्यक्ति जो सरलता से किए जा सकने वाले, तथा साधारण लोगों को अच्छे लगने वाले एवं चिरस्थायी (अथवा न्याययुक्त) कार्यों को करता था। बुधान् [illegible] मानधनादिना

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

पंडितान् विदुषः सम्यक् भावयिता समीचीनेन प्रकारेण समादरकर्ता, विद्वानों का सम्मान करने वाला (धन तथा ऊँची ऊँची पदवियाँ देकर विद्वानों का आदर करता था)। सम्+भू+णिच्+तृन्। "न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम्" सूत्र के अनुसार "तृन्" से बने हुए शब्दों के योग में षष्ठी नहीं, प्रत्युत द्वितीया होती है। अतएव "बुधान्", "सेवकान्", "बन्धून्", "शत्रून्" आदि सभी शब्द द्वितीयान्त हैं। "तृच्" और तृन्" दो पृथक्-पृथक् प्रत्यय हैं, दोनों के अर्थ एक ही हैं, दोनों एक समान होते हैं। अन्तर केवल इतना है कि तृन्नन्त शब्दों के योग में द्वितीया होती है और तृजन्त शब्दों के योग में षष्ठी होती है। सेवकान् प्रभावयिता—सेवकों के ऊपर रोआब रखने वाला, प्र+भू+णिच्+तृन्। बन्धून् उद्भावयिता—ज्ञातीनां संवर्धकः, बिरादरीवालों तथा भाइयों की उन्नति कराने वाला, उत्+भू+णिच्+तृन्। शत्रून् न्यग्भावयिता—अरीणां दमनकर्ता, शत्रुओं का दमन करने वाला (कुचलने वाला)। असम्बद्धप्रलापेषु—अप्रासङ्गिकवार्तासु, निरर्थकवचनेषु, नञ्+सम्+बन्ध्+क्त, सम्यक् बद्धाः इति सम्बद्धाः। न सम्बद्धाः इति असम्बद्धाः (नञ् तत्पुरुष), अप्रासङ्गिक। असम्बद्धाश्च ते प्रलापाश्च इति असम्बद्धप्रलापाः तेषु (कर्मधारय), प्रलाप—बड़बड़ाना, व्यर्थ की बातें। अदत्तकर्णः—दत्तौ कर्णौ येन सः दत्तकर्णः (बहुव्रीहि), जो कान दिया करता हो यानी सुना करता था, न दत्तकर्णः इति अदत्तकर्णः (नञ् तत्पुरुष), जो व्यर्थ की बातों में कान नहीं देता था, जो व्यर्थ की बातें नहीं सुना करता था। गुणेषु अवितृष्णः—विगता तृष्णा यस्य सः वितृष्णः (बहुव्रीहि)। विरक्त, जिसकी तृष्णा चली गई हो, जिसका पेट भर गया हो, जो सन्तुष्ट हो गया हो। न वितृष्णः इति अवितृष्णः (नञ् तत्पुरुष), जो गुणों की तरफ से विरक्त नहीं था अर्थात् गुणों में सदा अनुरक्त रहता था, जो दिन प्रतिदिन अधिकाधिक गुण प्राप्त करने में तत्पर रहता था। अथवा गुणवान् पुरुषों के प्रति जिसकी बड़ी आसक्ति थी। नदीष्णः—निपुणः, "नदीष्णाभिज्ञ-निष्णात-प्रवीण-निपुणा अपि" इत्यमरः, नदी+स्ना+क (आतोऽनुपसर्गे कः) [आकारान्त धातु के पूर्व यदि उपसर्ग न हो और कोई

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

संज्ञा उसके साथ समास में आने वाली हो तो क प्रत्यय लगाया जाता है और धातु का "आ" लुप्त हो जाता है। फिर "निनदीभ्यां स्नातेः कौशले" सूत्र से "स्ना" के 'स्' को 'ष्' हो जाता है। इस सूत्र का अर्थ है निपूर्वक तथा नदीपूर्वक स्ना धातु के स को ष् हो जाता है यदि सम्पूर्ण शब्द का अर्थ "कुशल" या "निपुण" हो]। कलासु—कलाओं में; कलाएँ चौंसठ कही जाती हैं। धर्मार्थसंहितासु नेदिष्ठः—धर्मशास्त्रार्थशास्त्रयोः सर्वदा संलग्नः। धर्मश्च अर्थश्च इति धर्मार्थौ (द्वन्द्व), तयोः संहिताः इति धर्मार्थसंहिताः तासु धर्मार्थसंहितासु (षष्ठी), धर्मशास्त्र तथा अर्थशास्त्र में अति निकटवर्ती। अर्थात् सर्वदा संलग्न। "धर्म" तथा "अर्थ" के द्वन्द्व समास के बाद "संहिता" शब्द आता है, अतः "संहिता" शब्द प्रत्येक के साथ जुड़ जायगा [द्वन्द्वान्ते द्वन्द्वारम्भे च श्रूयमाणं पदं प्रत्येकं सम्बध्यते] —अर्थात् धर्मसंहिता में एवं अर्थसंहिता में सर्वदा संलग्न रहता था। अन्तिक+इष्ठन्= नेदिष्ठः, अत्यन्त समीपवर्ती, "अन्तिकबाढयोर्नेदसाधौ" नियम से "अन्तिक" के स्थान में "नेद" हो गया। फिर 'इष्ठन्' से मिलकर "नेदिष्ठः" बन गया। सुकृते—सत्कर्मणि, उस (राजा) के लिए (थोड़ा भी) सुन्दर कार्य या उपकार किए जाने पर। सुतराम्—अत्यन्तम्। प्रत्युपकारकर्ता—उपकार के बदले में उपकार करने वाला, प्रति+उप+कृ+तृच्। कोशवाहनयोः प्रत्यवेक्षिता—कोश—खजाना; वाहन—सेना के अश्व, हाथी इत्यादि, खजाने तथा सेना के अश्व एवं गजादि का। प्रत्यवेक्षिता—अनुसन्धानकर्ता, सावधानी से देखभाल रखने वाला, प्रति+अव+ईक्ष्+तृच्। यहाँ चूँकि "तृच्" प्रत्यय लगा है, अतएव 'कोशवाहनयोः' में षष्ठी है। इसी प्रकार "सर्वाध्यक्षाणाम् परीक्षिता" "कृतकर्मणाम् उत्साहयिता" एवं "दैवमानुषीणाम् आपदाम् प्रतिकर्ता" आदि में "तृच्" प्रत्यय है, इसीलिए कोशवाहनयोः, सर्वाध्यक्षाणाम्, कृतकर्मणाम्, दैवमानुषीणाम्, आदि में षष्ठी है। यत्नेन परीक्षिता सर्वाध्यक्षाणाम्—बड़ी सावधानी से सभी अफसरों के ऊपर देख-भाल रखने वाला। परि+ईक्ष्+तृच्। सर्वे च ते अध्यक्षाः इति सर्वाध्यक्षाः तेषाम् सर्वाध्यक्षाणाम् (कर्मधारय)। कृतकर्मणाम्—कृतानि कर्माणि यैः ते

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

कृतकर्माणः तेषाम् कृतकर्मणाम् (बहुव्रीहि), जो लोग उस राजा का काम कर देते थे अथवा अपने कर्तव्य का पालन भली भाँति करते थे उनका। उत्साहयिता—उत्साहवर्धकः, उत्साह बढ़ाने वाला, उत् + सह् + णिच् + तृच् । अनुरूपैः—योग्यैः, समुचितैः । दानमानैः—धनादिदानेन समादरकारणेन च, दानानि च मानानि च इति दानमानानि तैः दानमानैः (द्वन्द्व) । सद्यः—त्वरितम्, तुरन्त । प्रतिकर्ता—शमयिता, दूरीकर्ता । दूर करने वाला । प्रति+कृ+तृच् । दैवमानुषीणाम् आपदाम्—दैवद्वारा की गई हुई तथा मनुष्यों द्वारा की गई हुई आपदाओं का, दैव्यश्च मानुष्यश्च इति दैवमानुष्यः तासाम् दैवमानुषीणाम् (विशेषणोभयपद कर्मधारय), दैवी आपदाएँ तथा मानुषी आपदाएँ ये हैं—हुताशनो जलं व्याधिर्दुर्भिक्षं मरणं तथा । इति पञ्चविधं दैवं मानुषं व्यसनं ततः । आयुक्तकेभ्यः चौरेभ्यः परेभ्यो राजवल्लभात् । पृथिवीपतिलोभाच्च नराणां पञ्चधा मतम् (कामन्दकी नीति १३ । २०) । षाड्गुण्योपयोगनिपुणः—षड्गुणाः—छः गुण—"सन्धिर्ना विग्रहो यानमासनं द्वैधमाश्रयः । षड्गुणाः शक्तयस्तिस्रः प्रभावोत्साहमन्त्रजाः" (अमर) अर्थात् सन्धि—शत्रु के साथ सुलह कर लेना, विग्रह—लड़ाई करना, यानम्—शत्रु पर चढ़ाई करना, आसनम्—ठहरे रहना और मौका देखते रहना, द्वैधम्—शत्रु पक्ष में फूट डाल देना, आश्रयः—किसी अन्य राजा का आश्रय लेना अर्थात् उससे सहायता लेना । षट् च ते गुणाः इति षड्गुणाः, षड्गुणा एव षाड्गुण्यम् षड्गुण+ष्यञ् स्वार्थे षाड्गुण्यस्य उपयोगः इति षाड्गुण्योपयोगः (षष्ठी तत्पुरुष), षाड्गुण्योपयोगे निपुणः इति षाड्गुण्योपयोगनिपुणः (सप्तमी तत्पुरुष) । मनुमार्गेण—मनुविहितपद्धत्या, मनु के मार्ग से, मनु के बताए हुए नियमों के अनुसार, मनोः मार्गः इति मनुमार्गः तेन मनुमार्गेण (षष्ठी तत्पुरुष) । प्रणेता—नायकः, ले चलने वाला, प्र+नी+तृच् । चातुर्वर्ण्यस्य—चत्वारो वर्णाः, चतुर्वर्णाः, चतुर्वर्णाः एव चातुर्वर्ण्यम् तस्य चातुर्वर्ण्यस्य, चतुर्वर्ण+ष्यञ् स्वार्थे, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र—ये ही चार वर्ण हैं । पुण्यश्लोकः—पवित्र कीर्तिः, पवित्र कीर्ति वाला, पुण्यः (पवित्रः) श्लोकः (यशः) यस्य सः पुण्यश्लोकः

CC-0.Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

(बहुव्रीहि) । परम्परया इतने लोग पुण्यश्लोक माने जाते हैं—"पुण्यश्लोको नलो राजा पुण्यश्लोको युधिष्ठिरः । पुण्यश्लोका च वैदेही पुण्यश्लोको जनार्दनः" । पुण्यवर्मा—यह उस राजा का नाम है जिसके अनेक गुणों का वर्णन ऊपर किया गया है ।

स पुण्यैः कर्मभिः प्राप्य पुरुषायुषम्, पुनरपुण्येन प्रजानामगण्यताममरेषु । तदनन्तरमनन्तवर्मा नाम तदायतिरवनिमध्यतिष्ठत् । स सर्वगुणैः समृद्धोऽपि दैवाद्दण्डनीत्यां नात्याद्दतोऽभूत् । तमेकदा रहसि वसुरक्षितो नाम मन्त्रिवृद्धः, पितुरस्य बहुमतः, प्रगल्भवागभाषत—'तात, सर्वैवाऽऽत्मसंपदभिजनात्प्रभृत्यन्यूनैवात्रभवति लक्ष्यते । बुद्धिश्च निसर्गपट्वी कलासु नृत्यगीतादिषु चित्रेषु च काव्यविस्तरेषु प्राप्तविस्तारा तवेतरेभ्यः प्रतिविशिष्यते । तथाऽप्यसावप्रतिपद्याऽऽत्मसंस्कारमर्थशास्त्रेषु, अनग्निशोधितेव हेमजातिर्नातिभाति बुद्धिः । बुद्धिहीनो हि भूभृदत्युच्छ्रितोऽपि परैरध्यारुह्यमाणमात्मानं न चेतयते । न च शक्तः साध्यं साधनं वा विभज्य वर्तितुम् । अयथावृत्तश्च कर्मसु प्रतिहन्यमानः स्वैः परैश्च परिभूयते । न चावज्ञातस्याऽऽज्ञा प्रभवति प्रजानां योगक्षेमयोराराधनाय[1] । अतिक्रान्तशासनाश्च प्रजा यत्किंचनवादिन्यो यथाकथंचिद्वर्तिन्यः सर्वाः स्थितीः संकिरेयुः । निर्मर्यादाश्च[2] लोका लोकादितोऽमुतश्च स्वामिनमात्मानं च भ्रंशयेयुः । आगमदीपदृष्टेन खल्वध्वना सुखेन वर्तते लोकयात्रा । दिव्यं हि चक्षुर्भूतभवद्भविष्यत्सु, व्यवहितविप्रकृष्टादिषु च विषयेषु शास्त्रं नामाप्रतिहतवृत्ति । तेन हीनः सतोरप्यायतविशालयोर्लोचनयोरन्ध एव जन्तुरर्थदर्शनेष्वसामर्थ्यात् । अतो विहाय बाह्यविद्यास्वभिषङ्गमागमय दण्डनीतिं कुलविद्याम्, तदर्थानुष्ठानेन चाऽऽवर्जितशक्तिसिद्धिरस्खलितशासनः शाधि चिरमुदधिमेखलामुर्वीम्' इति ।

---

१. क्षेमसाधनाय । २. निर्मर्यादाश्च...

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

अवनिम्—पृथ्वीम् । अध्यतिष्ठत्—बैठा, अधि+स्था+लङ् प्रथम पुरुष एकवचन । अवनिम् अध्यतिष्ठत्—पृथ्वी पर बैठा (शासन करने लगा) "अधिशीङ्स्थासां कर्म" नियम से अधि पूर्वक स्था धातु के योग में "अवनिम्" में द्वितीया हुई है। सर्वगुणैः—सब गुणों से, सर्वे च ते गुणाः इति सर्वगुणाः तैः (कर्मधारय) । समृद्धः—युक्तः। दैवात्—विधिवशात्, संयोग से। दण्डनीत्याम्—राजनीतौ, दण्डनीति यानी राजनीति में। नात्याद्दतोऽभूत्—न अत्यादृतः अभूत्, न अभिरुचिवान् आसीत्, अधिक दिलचस्पी लेने वाला न था। रहसि—एकान्ते, रहस् शब्द नपुंसकलिंग है, रहः रहसी रहांसि इत्यादि पयस् के समान रूप चलते हैं। मन्त्रिवृद्धः—मन्त्रिषु मन्त्रिणां वा वृद्धः इति मन्त्रिवृद्धः (सप्तमी अथवा षष्ठी तत्पुरुष)। पितुरस्य—पितुः अस्य, उसके पिता का। "पितुः" में जो षष्ठी हुई है वह "मतिबुद्धि पूजार्थेभ्यश्च" नियम से हुई है। बहुमतः—अत्यन्तम् आदृतः, बड़ा सम्मानपात्र। प्रगल्भवाक्—निर्भीकवक्ता, प्रगल्भा (प्रौढ़ा अनुभवपूर्णा इति यावत् निर्भीकावा) वाक् यस्य सः प्रगल्भवाक् (बहुव्रीहि), अनुभव से भरी हुई अथवा निडर वाणी थी जिसकी। सर्वैव—सर्वा+एव, सभी। आत्मसम्पद्—वैयक्तिक गुण (अथवा विशेषताएँ), आत्मनः सम्पत् इति आत्मसम्पत् (ष० त०)। अभिजनात्—वंश इत्यादि, अभिजन कुलम्, वंशः, प्रभृति—इत्यादि। अन्यूनैवात्रभवति—अन्यूना+एव+अत्रभवति; न न्यूना (स्वल्पा) इति अन्यूना (नञ्तत्पुरुष)। अन्यूना—अस्वल्पा, विपुला। अत्रभवति—श्रीमति, श्रीमान् में, अत्रभवान् एवं तत्रभवान् आदरसूचक शब्द हैं। निकटस्थ अथवा सम्मुखस्थ व्यक्ति को "अत्रभवान्" द्वारा तथा दूरस्थ व्यक्ति को "तत्रभवान्" द्वारा सम्बोधित करते हैं। "अत्रभवति" सप्तमी एक वचन का रूप है 'अत्रभवत्' शब्द का। लक्ष्यते—दृश्यते, दिखाई पड़ती है। निसर्गपट्वी—प्रकृतिनिपुणा, निसर्ग—स्वभाव, पट्वी—पटुः, निपुणा। निसर्गेण पट्वी इति निसर्गपट्वी, प्रकृति से ही निपुण। अन्वय इस प्रकार होगा—"नृत्यगीतादिषु चित्रेषु च काव्यविस्तरेषु प्राप्तविस्तारा,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

निसर्गपट्वी तव बुद्धिः इतरेभ्यः प्रतिविशिष्यते। नृत्यं च गीतं च इति नृत्यगीते (द्वन्द्व), नाच और गाना। नृत्यगीते आदी यासां ताः नृत्यगीतादयः तासु नृत्यगीतादिषु (बहु०) कलासु, नृत्यगीतादि कलाओं में। काव्यविस्तरेषु—काव्यस्य (साहित्यस्य) विस्तराः इति काव्यविस्तराः तेषु काव्यविस्तरेषु (षष्ठी तत्पुरुष), साहित्य के क्षेत्र में। "विस्तर" और "विस्तार" में अन्तर है, काव्य तथा ग्रन्थादि के प्रसंग में "विस्तर" शब्द का प्रयोग होता है, और शेष स्थलों पर "विस्तार" शब्द का प्रयोग होता है। देखिए यहीं पर प्राप्तविस्तारा शब्द आया है, जिसका अर्थ है प्राप्त कर लिया गया है विस्तार (विस्तृतत्व) जिसके द्वारा ऐसी तुम्हारी बुद्धि, प्राप्तः विस्तारो यथा सा प्राप्तविस्तारा (बहुव्रीहि)। तवेतरेभ्यः—तव इतरेभ्यः। इतरेभ्यः—अन्येभ्यः पुरुषेभ्यः, अन्य पुरुषों की अपेक्षा। प्रतिविशिष्यते—विशिष्टाऽस्ति, बढ़कर है। तथाप्यसावप्रतिपद्यात्मसंस्कारम्—तथापि असौ अप्रतिपद्य आत्मसंस्कारम्। असौ—सा बुद्धिः। अप्रतिपद्य—अलब्ध्वा, न पाकर, बिना प्राप्त किए हुए। आत्मसंस्कारम्—अपना संस्कार (उत्कर्ष, ज्ञान, शिक्षा), आत्मनः संस्कारः इति आत्मसंस्कारः तम् आत्म-संस्कारम् (षष्ठी तत्पुरुष)। अर्थशास्त्रेष्वनग्निशोधितेव—अर्थशास्त्रेषु अनग्निशोधिता इव। अर्थशास्त्रेषु—नीतिशास्त्रेषु, आन्वीक्षिक्यादिषु। उदाहरणार्थ, चाणक्य का अर्थशास्त्र, शुक्र की नीति, कामन्दकी नीति। अनग्निशोधिता—अग्नौ शोधिता इति अग्निशोधिता (सप्तमी तत्पुरुष), आग में शुद्ध की गई हुई। न अग्निशोधिता इति अनग्निशोधिता (नञ् तत्पुरुष), जो आग में शुद्ध न की गई हो। नातिभाति—न अतिभाति, न अत्यन्तं शोभते। अधिक सुशोभित नहीं होती। भूभृत्—राजा, पहाड़। बुद्धिहीनः—मूर्खः—बुद्ध्या हीनः इति बुद्धिहीनः (तृतीया तत्पुरुष)। अत्युच्छ्रितोऽपि—अति उच्छ्रितः अपि, अत्युन्नतोऽपि, अत्यन्त ऊँचा होने पर भी अर्थात् अत्यन्त उच्च कोटि (पदवी) का होता हुआ भी। परैः—शत्रुभिः, शत्रुओं द्वारा। अध्यारुह्यमाणम्—आक्रम्यमाणम्, चढ़ा जाता हुआ, आक्रमण किया जाता हुआ, अधि+आ+रुह्+कर्मणि शानच्। न चेतयते—न बुध्यते, नहीं समझ पाता (क्योंकि वह बुद्धि से हीन है)। यहाँ पर राजा

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

की उपमा पहाड़ से दी गई है। राजनीति के ज्ञान से रहित राजा जड़ पहाड़ के तुल्य है। इसमें जितनी बातें कही गई हैं वे राजा तथा पहाड़ दोनों ही में घटती हैं। जितने विशेषण हैं उनके दो दो अर्थ हैं। देखिए—अत्युच्छ्रितः—राजा के प्रसंग में "बड़ी ऊँची हैसियत वाला"; पहाड़ के प्रसंग में "बहुत ऊँचा"। परैः—शत्रुभिः (राजा के पक्ष में); जनैः लोकैः (पर्वत के पक्ष में)। अध्यारुह्यमाणम्—आक्रम्यमाणम् (राजा के पक्ष में); चढ़ा जाता हुआ (पर्वत के पक्ष में)। न च शक्तः—समर्थो न भवति, नहीं समर्थ होता। साध्यम्—कार्यम्। साधनम्—करणम्, जरिया। विभज्य—अलग अलग कर। वर्तितुम्—व्यवहर्तुम्, व्यवहार करने के लिए, काम करने के लिए, वृत्+तुमुन्। क्या कार्य हमें सिद्ध करना है और उसके लिए किन किन साधनों का आश्रय लेना चाहिए—इस बात को वह ठीक-ठीक नहीं समझ पाता, बल्कि दोनों वस्तुओं को मिला-मिलू कर गड़बड़गोला कर देता है। अयथावृत्तः—योग्यचरित्रहीनः। यथा (उचितं) वृत्तं (आचरणं) यस्य सः यथावृत्तः (बहुव्रीहि) न यथावृत्तः इति अयथावृत्तः (नञ् तत्पुरुष), अनुचित विधि से व्यवहार करने वाला। प्रतिहन्यमानः—विफलीभवन्, असाफल्यम् लभमानः, असफलता पाता हुआ, प्रति+हन्+कर्मणि शानच्। स्वैः—आत्मीयैः जनैः, अपने लोगों द्वारा। परैः च—अन्यैः अथवा शत्रुभिः, अन्य लोगों द्वारा अथवा शत्रुओं द्वारा। परिभूयते—तिरस्क्रियते, तिरस्कार किया जाता है, तिरस्+कृ+कर्मणि शानच्। अवज्ञातस्य—तिरस्कृतस्य, तिरस्कार किये गए हुए उस (राजा) की, अव+ज्ञा+क्त। न प्रभवति—समर्था न भवति, नहीं समर्थ होती। योगक्षेमयोः—योगश्च क्षेमश्च इति योगक्षेमौ तयोः योगक्षेमयोः (द्वन्द्व), योग और क्षेम के। योग—अप्राप्तस्य प्राप्तिः योगः, जो चीजें मनुष्य को न प्राप्त हों उनको प्राप्त करना 'योग' कहलाता है, और प्राप्त वस्तुओं की रक्षा करना 'क्षेम' कहलाता है। "अप्राप्तप्रापणं योगः क्षेमः प्राप्तस्य रक्षणम्। द्वयं च साधयेद्भूपः प्रजानां विधिवत् प्रदः"। तात्पर्य यह कि राजा को ऐसे उपाय करने चाहिएँ कि जो वस्तुएँ प्रजा के पास नहीं हैं या राज्य में नहीं हैं उन्हें प्राप्त

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

संकिरेयुः सम्, कॄ, विधि; अथवा, ...

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

करे, और जो वस्तुएँ पहिले ही से राज्य में अथवा प्रजा के पास हैं, अथवा जिन वस्तुओं को उसने प्राप्त कर लिया है उनकी सावधानीपूर्वक रक्षा करे। आराधनाय—साधनाय, प्राप्तये। यहाँ चतुर्थी का प्रयोग क्यों हुआ—इस विषय में सिद्धान्त-कौमुदीकार कहते हैं "अलमिति पर्याप्त्यर्थग्रहणम्—तेन दैत्येभ्यो हरिरलम् प्रभुः समर्थः शक्तः इत्यादि। अतिक्रान्तशासनाः—अतिक्रान्तानि शासनानि याभिः, ताः (बहुव्रीहि), शासन (राजाज्ञा तथा राजनियमों) को उल्लंघन करने वाली (प्रजाएँ)। यत्किञ्चनवादिन्यः—जो ही चाहती हैं सो ही कहने लगती हैं, यत्किञ्चन वदन्ति तच्छीलाः इति यत्किञ्चनवादिन्यः, यत्किञ्चन+वद्+णिनि (ताच्छील्ये)+ङीप्। यथा-कथञ्चिद् वर्तिन्यः—यथेच्छं व्यवहरन्त्यः—जैसा चाहती हैं वैसा बरतने लगती हैं, यथाकथञ्चित् वर्तितुं शीलमेतासामिति यथाकथञ्चिद्वर्तिन्यः, यथा-कथञ्चिद्+वृत्+णिनि (ताच्छील्ये)+ङीप्। सर्वाः स्थितीः—अखिलां मर्यादाम्, सारी मर्यादाओं को। संकिरेयुः—विशृंखलयेयुः, छिन्न भिन्न कर डालती हैं, यह विधि लकार वर्तमान के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। निर्मर्यादाः—निर्गता मर्यादा येभ्यः ते निर्मर्यादाः (लोकाः)—बहुव्रीहि। अथवा निर्गताः मर्यादाभ्यः इति निर्मर्यादाः (प्रादि तत्पुरुष)—"निरादयः क्रान्ता-द्यर्थे पंचम्या" नियम से क्रान्त या गत अर्थ में निर् इत्यादि उपसर्ग पंचम्यन्त के साथ समस्त होते हैं। लोकादितोऽमुतश्च—लोकात् इतः अमुतः च, इस तथा उस लोक से, मर्त्यलोक से तथा परलोक से। इतः लोकात्—अस्मात् मृत्युलोकात्, इस लोक से। इदम्+तसिल्=इतः। अमुतः लोकात्, अदस्+तसिल्, उस लोक से। भ्रंशयेयुः—पातयेयुः (गिरा देते हैं) भ्रष्ट कर देते हैं। यहाँ भी विधि लकार वर्तमान के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। आगमदीपदृष्टेन अध्वना—आगम—शास्त्र। अध्वना—मार्गेण, रास्ते से। अध्वन् शब्द है, अध्वा अध्वानौ अध्वानः, अध्वानम् अध्वानौ अध्वनः आदि रूप चलते हैं। आगमः (शास्त्रम्) एव दीपः इति आगमदीपः (शास्त्ररूपी दीपक)—अवधारणा पूर्व पद कर्मधारय, तेन

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

दृष्टः इति आगमदीपदृष्टः तेन आगम-दीप-दृष्टेन (तृतीया तत्पुरुष), शास्त्र-रूपी दीपक से देखे गये हुये (रास्ते से)। खलु—निश्चयेन। सुखेन—सुख-पूर्वकम्। "प्रकृत्यादिभ्यः उपसंख्यानम्" इति तृतीया। लोकयात्रा—लोकस्थितिः, लोकस्य यात्रा इति लोकयात्रा, संसार की यात्रा। दिव्यचक्षुः—दैवी नेत्र। व्यवहितविप्रकृष्टेषु—व्यवहित—परस्पर अलग अलग। जो चीज अलग करती है उसे व्यवधान कहते हैं, वि+अव+धा+क्त। विप्रकृष्ट—दूरस्थ। व्यवहिताश्च विप्रकृष्टाश्च ते व्यवहितविप्रकृष्टाः तेषु (विशेषणोभयपद कर्मधारय) यह विशेषण है "विषयेषु" का। भूताश्च भवन्तश्च भविष्यन्तश्च इति भूतभवद्भविष्यन्तः तेषु भूतभवद्भविष्यत्सु विषयेषु (विशेषणाखिलपद कर्मधारय)। अप्रतिहतवृत्ति—जिसकी वृत्ति (गति) की बिल्कुल कहीं भी रुकावट न हो। प्रतिहता वृत्तिः यस्य तत् प्रतिहतवृत्ति (बहुव्रीहि), न प्रतिहतवृत्ति इति अप्रतिहतवृत्ति (नञ् तत्पुरुष) "शास्त्रम्" का विशेषण है। न भूतकाल की घटनाओं के समझने में, न वर्तमान काल की घटनाओं के समझने में, न भविष्य काल की घटनाओं के समझने में शास्त्र की गति रुक सकती है। जो विषय परस्पर अलग अलग हैं, एक दूसरे से बिल्कुल सम्बद्ध नहीं हैं तथा जो विषय बहुत दूर-दूर के हैं उनको भी समझने में शास्त्र की गति के लिए कोई रुकावट नहीं। शास्त्र ऊपर लिखी हुई सभी बातों को बिना किसी अड़चन के समझ लेता है। तेन हीनः—दिव्य-चक्षुषा रहितः अथवा शास्त्रेण रहितः, उस दिव्य चक्षु यानी शास्त्र से हीन पुरुष। सतोः अपि—होते हुए भी। आयतविशालयोः लोचनयोः—आयत—लम्बी; विशाल—बड़ी। आयते च विशाले च इति आयत-विशाले तयोः आयतविशालयोः (विशेषणोभयपद कर्मधारय), लोचनयोः "अनादरे षष्ठी" नियम से "लोचनयोः" में षष्ठी हुई है। "अनेकसंशयोच्छेदि परोक्षार्थस्य दर्शकम्। सर्वस्य लोचनं शास्त्रं यस्य नास्त्यन्ध एव सः।" जन्तुः—प्राणी। अर्थशास्त्रेषु असामर्थ्यात्—

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

राजनीति-ज्ञानाभावात्, न सामर्थ्यम् इति असामर्थ्यम् तस्मात् असामर्थ्यात् (नञ् तत्पुरुष), राजनीति में ज्ञान न होने के कारण। विहाय—त्यक्त्वा, छोड़कर, वि+हा+ल्यप्। बाह्यविद्यासु—नीतिविद्येतरविद्यासु, बाहरी विद्याओं में, बहिः भवाः बाह्याः, बाह्याश्च ताः विद्याः इति बाह्य-विद्याः तासु (कर्मधारय)। अभिषङ्गम्—अभिनिवेशम्, अभिरुचिम्, आसक्तिम्, अभि+सञ्ज्+घञ्। बाह्यविद्यासु अभिषङ्गम् विहाय—बाहरी विद्याओं में आसक्ति त्याग कर। आगमय—उपार्जय, लभस्व, प्राप्त करो, आ+गम् णिच् लोट् मध्यम पुरुष एकवचन। दंडनीतिम्—राजनीतिम्, राजनीति को। स्वकुलविद्याम्—स्वस्य कुलमिति स्वकुलम् (षष्ठी तत्पुरुष), तस्य विद्या इति स्वकुलविद्या ताम् स्वकुलविद्याम् (षष्ठी तत्पुरुष), अपने कुल में सनातन से चली आई हुई विद्या को अर्थात् दंडनीति को। **तदर्थानुष्ठानेन**=तन्नियमानुसारं व्यवहरणेन, तस्य अर्थाः (नियमाः) इति तदर्थाः (षष्ठी तत्पुरुष), तेषाम् अनुष्ठानम् इति तदर्थानुष्ठानम् तेन तदर्थानुष्ठानेन (षष्ठी तत्पुरुष), उसके नियमों का पालन करने से। अनुष्ठानम्—परिपालनम्, पालन करना, अनुसरण करना, अनु+स्था+ल्युट्। आवर्जित-शक्तिसिद्धिः—आवर्जिता (प्राप्ता) शक्तीनां सिद्धिः येन, तथोक्तः त्वम् (बहु०), जिसने शक्तियों की सिद्धि प्राप्त कर ली हो ऐसे बनकर तुम, यानी तीनों शक्तियों की सिद्धि प्राप्त करके। शक्तियाँ तीन बतलाई गई हैं, शक्तयस्तिस्रः प्रभावोत्साहमन्त्रजाः—प्रभुशक्ति, उत्साहशक्ति, मन्त्रशक्ति। प्रभुशक्ति—शासन-शक्ति। उत्साह-शक्ति—जोश। मन्त्रशक्ति—अच्छी अच्छी राय देने वाले मन्त्री। अस्खलित-शासनः—अप्रतिहताज्ञः, स्खलितं शासनं यस्य स स्खलितशासनः (बहु०), न स्खलित-शासनः इति अस्खलितशासनः (नञ् तत्पुरुष), जिसकी आज्ञा (कभी) उल्लङ्घित न की जाती हो ऐसे बनकर (तुम)। शाधि—शासन कुरु, शासन करो, शास् धातु अदादिगणी परस्मैपदी, लोट् मध्यमपुरुष एकवचन। चिरम्—चिरकाल-पर्यन्तम्, बहुत काल तक। उदधिमेखलाम्—समुद्र-परिवेष्टिताम्। उदधि—समुद्र, मेखला—करधनी। उदधिः मेखला यस्याः

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

सा उदधिमेखला ताम् उदधिमेखलाम् (बहु०), जिसकी करधनी समुद्र है ऐसी पृथ्वी को यानी जो चारों ओर समुद्र से घिरी हुई है ऐसी पृथ्वी को। **उर्वीम्**—पृथ्वीम्, पृथ्वी को।

एतदाकर्ण्य 'स्थान एव गुरुभिरनुशिष्टम्। तथा क्रियते' इत्यन्तःपुरमविशत्। तां च वार्तां पार्थिवेन प्रमदासंनिधौ प्रसङ्गेनोदीरितामुपनिशम्य समीपोपविष्टश्चित्तानुवृत्तिकुशलः प्रसादवित्तो गीतनृत्यवाद्यादिष्वबाह्यो बाह्यनारीपरायणः पटुरयन्त्रितमुखो बहुभङ्गिविशारदः परमर्मान्वेषणपरः परिहासयिता परिवादरुचिः पैशुन्यपण्डितः सचिवमण्डलादप्युत्कोचहारी सकलदुर्नयोपाध्यायः कामतन्त्रकर्णधारः कुमारसेवको विहारभद्रो नाम स्मितपूर्वं व्यज्ञापयत्—'देव, दैवानुग्रहेण यदि कश्चिद्राजनं भवति विभूतेः, तमकस्मादुच्चावचैरुपप्रलोभनैः कदर्थयन्तः स्वार्थं साधयन्ति-धूर्ताः। तथाहि, केचित्प्रेत्य किल लभ्यैरभ्युदयातिशयैराशामुत्पाद्य, मुण्डयित्वा शिरः, बद्ध्वा दर्भरज्जुभिः, अजिनेनाच्छाद्य, नवनीतेनोपलिप्य, अनशनं च शाययित्वा, सर्वस्वं स्वीकरिष्यन्ति। तेभ्योऽपि घोरतराः[१] पाषण्डिनः पुत्रदारशरीरजीवितान्यपि मोचयन्ति। यदि कश्चित्पटुजातीयो नास्यै मृगतृष्णिकायै हस्तगतं त्यक्तुमिच्छेत् तमन्ये परिवार्याहुः—एकामपि काकिणीं कार्षापणलक्षमापादयेम, शस्त्रादृते सर्वशत्रून् घातयेम, एकशरीरमात्रमपि मर्त्यं चक्रवर्तिनं विदधीमहि, यद्यस्मदुद्दिष्टेन मार्गेणाचर्यते' इति।

हिन्दी अनुवाद—यह सुनकर (उस राजा अनन्तवर्मा ने कहा)—'आप के द्वारा उचित ही उपदेश दिया गया है। ऐसा (ही) किया जाता है (अर्थात् करूँगा)'—ऐसा कहकर (वह) अन्तःपुर (रनिवास) में घुस गया। स्त्रियों के समीप राजा (अनन्त वर्मा) द्वारा,

१. पाखण्डिनः।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

प्रसङ्गवशात् कही हुई उस बात को सुनकर, समीप में ही बैठा हुआ, विहारभद्र, जो राजा की चित्तवृत्ति के अनुसरण करने में कुशल था, (राजा की) कृपाओं के कारण प्रसिद्ध था, गीत, नृत्य, बाजा आदि में तन्मय रहता था, बाहरी स्त्रियों (दूसरों की स्त्रियों) में लवलीन, प्रवीण, अनियन्त्रित मुख वाला (जो ही चाहता था वही बोलने वाला), अनेक प्रकार की वक्रोक्ति (टेढ़ी मेढ़ी बातें) बोलने में दक्ष, दूसरों की त्रुटि (छिद्र) खोजने में तत्पर, हँसाने वाला, निन्दा में रुचि रखने वाला, चुगलखोरी में पंडित, मंत्रिमंडल से भी घूस लेने वाला, सब प्रकार के अनर्थों का उपाध्याय (आचार्य), कामशास्त्र का कर्णधार (प्रधान नाविक) तथा बाल्यावस्था से ही राजा का सेवक था (ऐसा वह विहारभद्र) मुस्कराहट के साथ निवेदन करने लगा—महाराज, यदि भाग्य की कृपा से कोई व्यक्ति ऐश्वर्य का पात्र हो जाता है, तो धूर्त लोग अकस्मात्, ऊँचे-नीचे (अर्थात् विविध प्रकार के) प्रलोभनों से उसे तंग करते हुए, अपना मतलब गाँठते हैं। उदाहरणार्थ—कोई कोई (तो), मरने के बाद मिलने वाले प्रचुर ऐश्वर्यों (अभ्युदयातिशय) की आशा पैदाकर, सिर मुँडवा कर, कुश की रस्सी से बांधकर, मृगचर्म से ढककर (मृगचर्म ओढ़ा कर), मक्खन से उसे लेप कर, बिना खिलाए-पिलाए सुलाकर, (उसका) सारा धन आत्मसात् कर लेते हैं (शब्दानुवाद "कर लेंगें")। उनसे भी अधिक भयंकर पाखण्डी लोग (उससे) पुत्र, स्त्री, शरीर एवं प्राण तक छुड़वा देते हैं। यदि कोई होशियार व्यक्ति हुआ और इस मृगतृष्णा (मिथ्या आशा) के लिए (मिथ्या आशा में फँसकर), हाथ के धन को नहीं छोड़ना (देना नहीं) चाहता, तो दूसरे लोग उसे घेर कर कहते हैं कि अगर हमारे दिखाए हुए मार्ग से चला जाय तो (हम) एक कौड़ी का भी लाख कार्षापण बनवा सकते हैं, बिना शस्त्र के (ही) सारे शत्रुओं को मरवा सकते हैं, किसी भी पुरुष को, चाहे उसके पास केवल अपना शरीर-मात्र ही हो, चक्रवर्ती बना सकते हैं।

टिप्पणी—स्थाने एव—उचितम् एव, ठीक ही। गुरुभिः—श्रीमद्भिः, अत्रभवद्भिः, आप के द्वारा। अनुशिष्टम्—अनु+शास्+

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

क्त, उपदेश दिया गया। गुरुभिःअनुशिष्टम्—यह कर्मवाच्य है, इसका कर्तृवाच्य होगा "गुरवः अनुशिष्टवन्तः—आप ने उपदेश दिया है"। तथा क्रियते—ऐसा (ही) किया जाता है यानी ऐसा ही किया जायगा (ऐसा ही करूँगा)। अन्तःपुरम्—हर्म्यम्, महल, रनिवास। पार्थिवेन—राज्ञा, राजा (अनन्त वर्मा) द्वारा। प्रमदासन्निधौ—स्त्रीणां समीपे, स्त्रियों के समीप में, प्रमदानां सन्निधिः इति प्रमदासन्निधिः तस्मिन् प्रमदासन्निधौ (षष्ठी तत्पुरुष)। प्रसङ्गेन—बातों बातों में। उदीरिताम्—कथिताम्, कही हुई, उत्+ईर्+क्त+टाप्। उपनिशम्य—श्रुत्वा, सुनकर, उप+नि+शम्+ल्यप्। समीपोपविष्टः—निकटे आसीनः, समीप में बैठा हुआ, समीपे उपविष्टः इति समीपोपविष्टः (सप्तमी तत्पुरुष), उप+विश्+क्त। चित्तानुवृत्तिकुशलः—अनुवृत्ति—अनुसरणम्, अनुसार चलना, चित्तस्य अनुवृत्तिः इति चित्तानुवृत्तिः (षष्ठी तत्पुरुष), अनु+वृत्+क्तिन्, चित्तानुवृत्तौ कुशलः पटुः इति चित्तानुवृत्तिकुशलः (सप्तमी तत्पुरुष), राजा की चित्तवृत्ति (मर्जी) के अनुसार चलने में निपुण। प्रसादवित्तः—प्रसाद—कृपा, प्रसन्नता; वित्तः—विश्रुतः, विख्यातः। उसके ऊपर राजा की कृपा रहती थी—इस बात में प्रसिद्ध था। राजा की कृपा के कारण प्रसिद्ध। प्रसादेन (राजकृपया) वित्तः प्रसिद्ध इति प्रसादवित्तः (तृतीया तत्पुरुष)। वादित्र—वाद्यम्, बाजा। अबाह्यः—न बहिर्भूतः, न बाह्यः इति अबाह्यः (नञ् तत्पुरुषः), बाहर नहीं था, यानी गीत, नृत्य, तथा बाजों का भी ज्ञान रखता था। बाह्यनारी-परायणः—वेश्यासक्तः अथवा परस्त्रीषु अभिनिवेशवान्। बाह्य—बाहरी, दूसरे लोगों की। परायणः—आसक्तः; बाह्याश्च ताः नार्यः इति बाह्यनार्यः (कर्मधारय), बाहरी स्त्रियाँ; पराए लोगों की स्त्रियाँ; अथवा वेश्याएँ। तासु परायणः इति बाह्यनारीपरायणः (सप्तमी तत्पुरुष), पराए लोगों की स्त्रियों में आसक्त, उनसे प्रेम करने वाला। अयन्त्रितमुखः—असंयतवाक्, वाच्यावाच्यज्ञानहीनो बहुभाषी, यन्त्रितं मुखं यस्य सः यन्त्रितमुखः (बहु०), जिसके मुँह में ताला दिया हो, न यंत्रितमुखः

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

इति अयन्त्रितमुखः (नञ् तत्पुरुष), जिसके मुँह में ताला नहीं लगा था, यानी जो मनमानी बोलता था। बहुभङ्गिविशारदः—वक्रोक्ति-चतुरः। भङ्गि—वक्रभाषित, तानाजनी, टेढ़ी-मेढ़ी बातें, व्यङ्ग्यभरी बातें; विशारद—निपुण; बह्व्यश्च ताः भङ्गयश्च इति बहुभङ्गयः (कर्मधा०) तासु विशारदः इति बहुभङ्गिविशारदः (सप्तमी तत्पुरुष)। "भङ्गिः" तथा "भङ्गी" दोनों शब्द प्रचलित और शुद्ध हैं एवं स्त्रीलिंग हैं। मर्म—छिद्र, दोष। परेषां मर्माणि इति परमर्माणि (ष० त०), तेषाम् अन्वेषणम् अनु-संधानम् (खोजना) इति परमर्मान्वेषणम् (ष० त०) परमर्मान्वेषणम् एव परं प्रधानं कर्म यस्य सः परमर्मान्वेषणपरः (बहु०)। परमर्मान्वेषणपरः—परच्छिद्रान्वेषणपरायणः अर्थात् दूसरों के दोष खोजने में लगा हुआ। परिहासयिता—हँसाने वाला, परि+हस्+णिच्+तृच्। परिवाद-रुचिः—परनिन्दारसिकः, पराए की निन्दा करने में तथा सुनने में बड़ी दिलचस्पी रखने वाला। परिवादः—निन्दा; परिवादे रुचिः प्रीतिः अभि-निवेश इति यावत् यस्य सः परिवाद रुचिः (बहुव्रीहि)। पैशुन्यपंडितः—परोक्ष-निन्दाकरणपटुः। पैशुन्य—चुगलखोरी, पिशुनस्य कर्म भावो वा पैशुन्यम्, पिशुन+ष्यञ्, पैशुन्ये पंडितः इति पैशुन्यपंडितः (सप्तमी तत्पुरुष)। उत्कोच—गुप्तरूपेण गृहीतं धनम्, घूस। उत्कोचहारी—द्रव्यग्रहणपरः, घूस लेने वाला, उत्कोचं हरति तच्छीलः इति उत्कोचहारी, उत्कोच+हृ+णिनि। सकल—अखिल, सारे। दुर्नय—अनर्थ, व्यसन, बुराइयाँ। उपाध्यायः—आचार्यः। कामतन्त्रम्—कामशास्त्रम्। कर्णधार—मल्लाह, नाविक, जहाज चलाने वाला, यानी नेता। कामतन्त्रस्य (कामशास्त्रस्य) अथवा कामतन्त्रे कर्णधारः (नाविकः) इति कामतन्त्रकर्णधारः (सप्तमी अथवा षष्ठी तत्पुरुष)। कुमार-सेवकः—कुमारावस्थायाः प्रभृति सेवकः इति कुमार-सेवकः (कुमारावस्था से ही राजा का सेवक)। स्मित-पूर्वम्—सस्मितम्, मुस्कुराहट के साथ स्मित—मुस्कुराहट, स्मि+क्त, स्मितं पूर्वं यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात्तथा स्मितपूर्वम्। व्यज्ञापयत्—अकथयत्, वि+ज्ञा+णिच्+लङ् प्रथम पुरुष एकवचन। दैवानुग्रहेण—भाग्यस्य प्रसादेन,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

दैवम्—भाग्यम्; अनुग्रहेण—कृपया, दैवस्य अनुग्रहः इति दैवानुग्रहः तेन दैवानुग्रहेण (षष्ठी तत्पुरुष)। भाजनम्—पात्रम्। विभूतेः—ऐश्वर्यस्य, धनदौलत का। अकस्मात्—न कस्मादपि कारणात् इति अकस्मात् अर्थात् निष्कारणम्। उच्चावचैः—नानाविधैः, उदञ्चि च अवाञ्चि च इति उच्चावचानि तैः उच्चावचैः (मयूरव्यंसकादि से निपातनात् सिद्धिः), ऊँची तथा नीची अर्थात् विविध प्रकार की। उपप्रलोभनैः—लालचों से। कदर्थयन्तः—पीडयन्तः, तंग (हैरान) करते हुए, कदर्थ धातु+शतृ प्रत्यय प्रथमा बहुवचन। "कदर्थ" नाम धातु है। कुत्सितः अर्थः कदर्थः। तथा हि—उदाहरणार्थ। केचित्—केचन पुरुषाः, कोई-कोई, यह शब्द प्रधानक्रिया "स्वीकरिष्यन्ति" का कर्ता है। प्रेत्य—मरणानन्तरम्, आगामिनि जन्मनि, मरने के बाद, आगामी जन्म में, प्र+इण्+ल्यप्। लभ्यैः—प्राप्यैः, मिलने वाले, लभ्+यत्, "पोरदुपधाद् यत्" सूत्र से "यत्" प्रत्यय लगा है। प्रेत्य लभ्यैः—मरणानन्तरं ये अभ्युदया लभ्यन्ते तेषां कथनैः, मरने के बाद (दूसरे जन्म में) मिलने वाले। अभ्युदयातिशयैः—ऐश्वर्यबाहुल्यैः, ऐश्वर्य की अधिकता से अभ्युदय—ऐश्वर्य। अतिशय—उत्कर्ष अथवा बाहुल्य, आधिक्य। अभ्युदयस्य अतिशयाः इति अभ्युदयातिशयाः तैः अभ्युदयातिशयैः (षष्ठीतत्पुरुष), ऐश्वर्य के उत्कर्षों (या बाहुल्य) से, यानी अच्छे-अच्छे (अथवा बहुत अधिक) ऐश्वर्य से यानी, ऐश्वर्य मिलने की लालच पैदा कर। किल—निश्चयेन; तात्पर्य यह है कि धूर्त लोग यह विश्वास दिलाते हैं कि निश्चय ही मरने पर अभ्युदयोत्कर्ष मिलता है। शिरः मुंडयित्वा—शिरः-केशानां वपनं कारयित्वा, सिर मुँडवाकर मुंड+क्त्वा। बद्ध्वा—बाँधकर, बन्ध्+क्त्वा। दर्भरज्जुभिः—दर्भ—कुश; रज्जु—रस्सी, दर्भाणां रज्जवः इति दर्भरज्जवः ताभिः, दर्भरज्जुभिः (षष्ठी तत्पुरुष), कुशों की रस्सियों से। अजिनेन—कृष्ण मृग चर्मणा, काले मृग के चमड़े से। आच्छाद्य—परिवेष्ट्य, ढककर, ओढ़ाकर, आ+छद्+णिच्+ल्यप्। नवनीतेन—हैयंगवीनेन, मक्खन से। उपलिप्य—लपेटकर, पोतकर, उप+लिप्+ल्यप्। अन-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

शनम्—भोजनहीनम्, बिना भोजन दिए, न विद्यते अशनम् (भोजनम्) यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात्तथा (बहुव्रीहि)। शाययित्वा—लेटाकर, सुलाकर, शी+णिच्+ल्यप्। सर्वस्वम्—सकलधनम्, सारा धन। सर्वं—सारा; स्व—धन, सर्वं च तत् स्वम् च इति सर्वस्वम् (कर्मधारय)। स्वीकरिष्यन्ति—गृह्णन्ति, ले लेते हैं। अक्षरशः—अनुवाद होगा "ले लेंगे"। परन्तु यह लृट् लकार वर्तमान काल के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। तेभ्यः अपि घोरतराः—उनसे भी ज्यादा खतरनाक या भयंकर। पाषंडिनः—धूर्ताः, धोखेबाज। 'पाखंडी' तथा 'पाषंडी' दोनों ही रूप प्रचलित हैं। पाखंडम् अथवा पाषंडम् विद्यते एषामिति पाखंडिनः अथवा पाषंडिनः, पाखंड (षंड)+इनि।

विहारभद्र इस स्थल पर उन लोगों की निन्दा कर रहा है अथवा उन लोगों को ताना मार रहा है जो भोले-भाले लोगों को संन्यासी बनने की शिक्षा दिया करते हैं। जो संन्यासी बनता है उसे सिर मुँडाना पड़ता है, मूँज की रस्सी की करधनी पहनना पड़ता है, मृगचर्म अथवा व्याघ्रचर्म ओढ़ना पड़ता है, शरीर में मक्खन पोतना पड़ता है और निराहार व्रत करना पड़ता है। जब वह मनुष्य संन्यासी हो जाता है तब कोई चालबाज उसका सारा धन लूट लेता है।

पुत्रदारशरीरजीवितानि—पुत्राश्च दाराश्च शरीरं च जीवितं च इति पुत्रदारशरीरजीवितानि (द्वन्द्व)। दार—स्त्री। यह शब्द नित्य पुंल्लिंग बहुवचनान्त होता है। इसके रूप-दाराः दारान् दारैः दारेभ्यः दारेभ्यः दाराणाम् दारेषु। जीवितानि—प्राणान्। मोचयन्ति—त्याजयन्ति, छुड़वा देते हैं, मुच्+णिच् लट् लकार प्रथम पुरुष बहुवचन। पटुजातीयः—पटुप्रकारः, होशियार ढँग का। "जातीयर्" प्रत्यय "प्रकार" के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, सारांश यह कि यदि कोई होशियार ढँग का पुरुष हुआ तो। मृगतृष्णिकायै—मिथ्याशायै, मृगतृष्णा के लिये, झूठी आशाओं के लिये। हस्तगतम्—स्वहस्तस्थितम्, हाथ में स्थित, हस्ते गतम् इति हस्तगतम्

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

(द्वितीया तत्पुरुष), "द्वितीया श्रितातीत-पतित-गतात्यस्त-प्राप्तापन्नैः" से "गत" शब्द के साथ द्वितीयान्त का समास होता है। त्यक्तुम्—विहातुम्, त्यागने के लिये, त्यज्+तुमुन्। अन्ये—अपरे राजनीतिज्ञाः इति भावः। दूसरे राजनीतिज्ञ लोग। "नास्य" का "न" जायगा प्रधान क्रिया "इच्छेत्" के साथ, "न इच्छेत्" अर्थात् न इच्छा करे। परिवार्य—घेरकर, परि+वृ+णिच्+ल्यप्। एकाम् अपि—एक भी। काकिणीम्—वराटिका, कौड़ी को। कार्षापणलक्षम् आपादयेम—कार्षापण एक सिक्का था जो एक आने से कुछ अधिक मूल्य का हुआ करता था। किसी-किसी का मत है, कि कार्षापण सोलह पण (पैसे) का हुआ करता था। कार्षापणानां लक्षम् इति कार्षापणलक्षम् (षष्ठी तत्पुरुष)। आपादयेम—पहुँचा सकते हैं, बनवा सकते हैं। यानी एक कौड़ी के भी लाखों आने या चवन्नियाँ बनवा सकते हैं। उन धूर्तों के कहने का तात्पर्य यह है कि हम लोग एक कौड़ी की लागत से लाखों रुपये उपार्जन करवा सकते हैं। शस्त्रात् ऋते—बिना शस्त्र के ही, "ऋते" माने "विना", "अन्यारादितरर्तेदिक्शब्दाञ्चूत्तरपदाजाहियुक्ते" नियम से "ऋते" के योग में "शस्त्रात्" में पञ्चमी हुई है। घातयेम—वधं कारयितुं शक्नुमः, मरवा सकते हैं, हन् धातु+णिच् विधि उत्तम पुरुष बहुवचन। एकशरीर-मात्रम् अपि मर्त्यम्—शरीरम् एव इति शरीरमात्रम्, एकं शरीरमात्रं विद्यते यस्य स एकशरीरमात्रः तम् एकशरीरमात्रम् (मर्त्यम्)—बहुव्रीहि समास। किसी भी पुरुष को जिसके पास केवल शरीरमात्र हो। विदधी-महि—कुर्वीमहि, कर दें, वि+धा+विधिलिङ् लकार उत्तम पुरुष बहुवचन। कहने का तात्पर्य यह है कि चाहे वह मनुष्य अकेला ही हो, चाहे उसके पास कोई भी सहायक न हो, तो भी हम उसे चक्रवर्ती बना सकते हैं। अस्मदु-द्दिष्टेन मार्गेण—अस्मत्कथितेन विधिना, हमारे बताये हुये रास्ते से, अस्मद्+उद्दिष्टेन; उद्दिष्ट=उत्+दिश् धातु+क्त; अस्माभिः उद्दिष्टः प्रदर्शितः इति अस्मदुद्दिष्टः तेन अस्मदुद्दिष्टेन (तृतीया तत्पुरुष), "मार्गेण" का विशेषण है। आचर्यते—कार्यं क्रियते, चला जाता है,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

कर्मवाच्य । यह वर्तमान काल विधिलकार के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है; आचर्यते का अर्थ है "आचर्येत"—चला जाय, काम किया जाय, व्यवहार किया जाय ।

स पुनरिमान्प्रत्याह—'कोऽसौ मार्गः' इति । पुनरिमे ब्रुवते—ननु चतस्रो राजविद्यास्त्रयी वार्तान्वीक्षिकी दण्डनीतिरिति । तासु तिस्रस्त्रयीवार्तान्वीक्षिक्यो महत्यो मन्दफलाश्च । तास्तावदासताम् । अधीष्व तावद्दण्डनीतिम् । इयमिदानीमाचार्यविष्णुगुप्तेन मौर्यार्थे षड्भिः श्लोकसहस्रैः संक्षिप्ता । सैवेयमधीत्य सम्यगनुष्ठीयमाना यथोक्तकर्मक्षमा इति । स 'तथा' इत्यधीते शृणोति च । तत्रैव जरां गच्छति । तत्तु किल शास्त्रं शास्त्रान्तरानुबन्धि । सर्वमेव वाङ्मयमविदित्वा न तत्त्वतोऽधिगंस्यते । भवतु कालेन बहुनाऽल्पेन वा तदर्थाधिगतिः । अधिगतशास्त्रेण चादावेव पुत्रदारमपि न विश्वास्यम् । आत्मकुक्षेरपि कृते तण्डुलैरियद्भिरियानोदनः सम्पद्यते, इयत ओदनस्य पाकायैतावदिन्धनं पर्याप्तमिति मानोन्मानपूर्वकं देयम् ।

हिन्दी अनुवाद—फिर वह इनसे कहता है "वह मार्ग कौन है ?" फिर वे (धूर्त) कहते हैं—निश्चय ही, चार राजविद्याएँ हैं (१) त्रयी (यानी वेदत्रयी, तीनों वेद ऋक्, यजुः, साम), (२) वार्ता (गुप्तचर सम्बन्धी शास्त्र) (३) आन्वीक्षिकी (आत्मविज्ञान, यानी तर्कशास्त्र तथा दर्शनशास्त्र), (४) दंडनीति (राजनीति) । उनमें से ये तीन—यानी त्रयी, वार्ता, आन्वीक्षिकी—बहुत बड़ी हैं और कम फल (लाभ) देने वाली हैं । इसलिये उन्हें रहने (जाने) दो । पहिले दंडनीति (राजनीति) पढ़ो । इस समय यह (राजनीति), आचार्य विष्णुगुप्त द्वारा, चन्द्रगुप्तमौर्य के लिए, छः हजार श्लोकों में संक्षिप्त कर डाली गई है । वही पढ़ी जाकर, अच्छी तरह व्यवहार में लाई जाती हुई उचित फल देने में समर्थ होगी । वह (धनी व्यक्ति) "अच्छी बात है" ऐसा कहकर अध्ययन करने लगता है और श्रवण करता है । उसी में वृद्धावस्था

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

को प्राप्त हो जाता है। वह शास्त्र (और) अन्य शास्त्रों से सम्बन्धित है, अतः बिना सारे शास्त्रों को जाने हुये वह ठीक ठीक समझ में नहीं आता (ठीक ठीक समझा नहीं जा सकेगा)। अस्तु, (मान लिया कि) अधिक या थोड़े समय में उसकी प्राप्ति हो गई। तथापि शास्त्र पढ़ लेने वाले के द्वारा, पहिले ही, पुत्र तथा स्त्री का भी विश्वास नहीं किया जाता, (यानी शास्त्र पढ़ लेने वाला पुरुष सबसे पहिले यह करता है कि स्त्री तथा पुत्रादि पर से विश्वास हटा लेता है)। अपने पेट के लिये भी "इतने चावल से इतना भात तैयार होता है, इतने भात के पकाने के लिए इतना इन्धन काफी है" इस प्रकार तौल नाप कर (चीजें) दी जाने लगती हैं।

टिप्पणी—स पुनरिमान् प्रत्याह—स पुनः इमान् प्रति आह। "अभितः परितः समया निकषा हा प्रति योगेऽपि" नियम से "प्रति" के योग में "इमान्" में द्वितीया हुई है। ब्रुवते—कथयन्ति, ब्रू धातु लट् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन, इसका कर्ता "इमे" है। चतस्रः राजविद्याः—चार राजविद्याएँ, राज्ञां विद्याः इति राजविद्याः (षष्ठी तत्पुरुष)। वे चारों राजविद्याएँ ये हैं: (१) "त्रयी", (२) वार्ता, (३) आन्वीक्षिकी, (४) दंडनीति। "त्रयी" माने वेदत्रयी—तीनों वेद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद। "वार्ता" माने गुप्तचर-सम्बन्धी विज्ञान, गुप्तचर किन्हें बनाना चाहिये, कैसे बनाना चाहिए, उन्हें क्या शिक्षा दी जानी चाहिए, उनसे गुप्तसमाचार पाकर किस प्रकार बरतना चाहिए आदि-आदि। "आन्वीक्षिकी" कहते हैं उस विद्या को जिसके द्वारा मनुष्य अपने आप को देखता है, अपनी जाँच करता है और अपने आप को समझता है। आन्वीक्षिकी में तर्कशास्त्र, तथा दर्शनशास्त्र आते हैं। अनु ईक्ष्यते अनया विद्यया इति आन्वीक्षिकी। "दण्ड" का अर्थ है शासन, राज्य-संचालन और "दंडनीति" कहते हैं राजनीति को। राजा को शासन किस प्रकार चलाना चाहिए, राज्य कैसे करना चाहिए, किस राजा से सन्धि करनी चाहिए, किससे युद्ध करना चाहिए, प्रजा पर किन-किन

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

चीजों पर कर लगाना चाहिए, कितना कर लगाना चाहिए, प्रजा के हितार्थ राजा को क्या-क्या काम करना चाहिए आदि-आदि बातों का ज्ञान दंडनीति अर्थात् राजनीति से होता है।

मन्दफलाः—निकृष्टफलदायिन्यः, मन्दं (स्वल्पं) फलं यासां ताः मन्द-फलाः (बहुव्रीहि), कम फल देने वाली। तास्तावदासताम्—ताः तावद् आसताम्, "ताः (वे)" प्रथमा बहुवचन है, और कर्ता है "आसताम्" का। "आसताम्", "आस्" धातु का लोट् लकार का प्रथम पुरुष बहुवचन का रूप है। आसताम् का शब्दार्थ है "बैठी रहें"। ताः तावद् आस-ताम्—वे विद्याएँ बैठी रहें यानी उन विद्याओं को रहने दो। अधीष्व—पढ़, अध्ययन करो। तावत्—प्रथमम्, पहिले। विष्णुगुप्त—चाणक्य का दूसरा नाम है "विष्णुगुप्त"। मौर्यार्थे—चन्द्रगुप्तमौर्याय, चन्द्रगुप्त मौर्य के लिए, मौर्याय इति मौर्यार्थे। षड्भिः श्लोक-सहस्रैः—छः हजार श्लोकों द्वारा (में)। संक्षिप्ता—संक्षिप्त कर दी गई है, सम्+क्षिप्+क्त+टाप्। सैवेयमधीत्य—सा एव इयम् अधीत्य। अधीत्य—पढ़ी जाकर। सम्यगनुष्ठीयमाना—सम्यक् अनुष्ठीयमाना, सम्यक्—समीचीनेन प्रकारेण, भली-भाँति। अनुष्ठीयमाना—व्यवह्रियमाणा, अनु+स्था+कर्मणि शानच्+टाप्, व्यवहार में लाई जाती हुई, यानी यदि उसके अनुसार भली-भाँति कार्य किया जाय। यथोक्तकर्मक्षमा इति—अभीष्टफलप्रदा। यथोक्तम् (उचितम्, समीचीनम्) च तत् कर्म (फलम्) इति यथोक्तकर्म (कर्मधारय) तस्मिन् क्षमा (समर्था)—सप्तमी तत्पुरुष—उचित फल देने में समर्थ। सः—वह राजा। तथेत्यधीते—एवमस्तु इति कथयित्वा पठितुमारभते। तथा इति अधीते, 'ऐसा ही होगा' ऐसा कह कर अध्ययन करता है। जराम्—वृद्धावस्थाम्। तत् शास्त्रं सर्वशास्त्रानुबन्धि—तत् शास्त्रम् अन्यैः शास्त्रैः सम्बद्धं वर्तते, वह शास्त्र सभी शास्त्रों के साथ-साथ बँधा हुआ है, यानी अन्य शास्त्रों से जुड़ा हुआ है। अतः जब तक वे सभी शास्त्र न पढ़ लिये जायँ, तब तक दंडनीति शास्त्र समझ में नहीं आता। सर्वाणि च तानि

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

शास्त्राणि इति सर्वशास्त्राणि (द्विगु) सर्वशास्त्राणि अनुबध्नाति तच्छीलम् इति सर्वशास्त्रानुबंधि, सर्वशास्त्र + अनु + बन्ध णिनिस्ताच्छील्ये। शास्त्रान्तरानुबन्धि—ऐसा पाठ होने पर यह विग्रह होगा "अन्यानि शास्त्राणि इति शास्त्रान्तराणि (मयूर व्यंसकादि)। तानि अनुबध्नाति तच्छीलम् इति शास्त्रान्तरानुबन्धि। शास्त्रान्तराणि का अर्थ है "दूसरे शास्त्र"। वाङ्मयम्—शास्त्रम्। अविदित्वा—अज्ञात्वा, बिना जाने हुए, नञ + विद् + क्त्वा। तत्त्वतः—वस्तुतः, ठीक ठीक। न अधिगंस्यते—न प्राप्स्यते, नहीं प्राप्त होगी, अधि + गम् + कर्मणि + लृट्। भवतु—अस्तु, खैर। बहुना अल्पेन वा कालेन तदधिगतिः—बहुत काल में या थोड़े काल में उसकी प्राप्ति हो ही गई। चिरकालेन न्यूनेन कालेन वा राजनीतिशास्त्रस्य अध्ययनं सम्पन्नम्। "अपवर्गे तृतीया" नियम से बहुना अल्पेन कालेन में तृतीया हुई है। तस्य (दण्डनीतिशास्त्रस्य) अधिगतिः इति तदधिगतिः—(षष्ठी तत्पुरुष)। अधिगति—प्राप्ति। अधि + गम् + क्तिन्। अधिगत-शास्त्रेण—अधीत-राजनीति-शास्त्रेण। अधिगतानि (अधीतानि प्राप्तानि वा) शास्त्राणि येन सः अधिगतशास्त्रः तेन अधिगतशास्त्रेण (बहुव्रीहि), प्राप्त कर लिए गए हैं शास्त्र जिसके द्वारा उस पुरुष द्वारा। चादावेव—च आदौ एव। आदौ—प्रथमम्, पहिले। "आदि" शब्द की सप्तमी का एकवचन। पुत्रदारम्—पुत्रकलत्रम्, पुत्र और स्त्री। पुत्राश्च दाराश्च एतेषां समाहारः पुत्रदारम्, समाहार द्वन्द्व। "द्वन्द्वश्च प्राणितूर्यसेनाङ्गानाम्" नियम से पुत्रदारम् में समाहारद्वन्द्व हुआ है क्योंकि पुत्र तथा दारा कुटुम्ब के प्राणी हैं। न विश्वास्यम्—नहीं विश्वास किए जाने चाहिएँ यानी इनका भी विश्वास जाता रहता है। वि + श्वस् + णिच् + ण्यत्। आत्मकुक्षेः—स्वोदरस्य, आत्मन्—अपना। कुक्षि—कोख, पेट, आत्मनः कुक्षिः इति आत्मकुक्षिः तस्य आत्मकुक्षेः (षष्ठी तत्पुरुष), अपने पेट के। कृते—लिए; अव्यय है। इयद्भिः—एतावद्भिः, इतने से, इदं परिमाणमेषाम् इति इयन्तः। इयान् इयन्तौ इयन्तः इयन्तम् इयन्तौ इयतः इयता इयद्भ्याम् इयद्भिः आदि इयत् शब्द के रूप चलते हैं। "इयद्भिः" तृतीया बहुवचन है और

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

"तण्डुलैः" का विशेषण है। इयद्भिः तण्डुलैः—इतने चावलों से। इयान्—इतना। प्रथमा एकवचन, विशेषण है "ओदनः" का। ओदनः—भक्तम्, भात। इयान् ओदनः—इतना भात। सम्पद्यते—सम्पन्नः भवति, तैयार होता है। "इयतः" षष्ठी एकवचन है, विशेषण है "ओदनस्य" का। पाकाय—रन्धनाय, पकाने के लिए, पच्+घञ्। एतावत् इन्धनम्—इयत् काष्ठम्, इतना ईंधन, लकड़ी। पर्याप्तम्—काफी है। मानोन्मानपूर्वकम्—मान—नाप। उन्मान—तौल। मानं च उन्मानं च इति मानोन्माने (द्वन्द्व), मानोन्माने पूर्वं यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात् तथा मानोन्मानपूर्वकम्, नाप तथा जोख कर। देयम्—दिया जाना चाहिए यानी दिया जाता है, दा+यत्। "अचो यत्" नियम से स्वरान्त दा धातु में यत् प्रत्यय जोड़ा गया है।

उत्थितेन च राज्ञा ताडितात्ताडिते मुखे मुष्टिमध्यमुष्टि वाग्य-
न्तरीकृत्य कृतहलमायव्ययजातमहः प्रथमेऽष्टमे भागे श्रोतव्यम्।
शृण्वत एवास्य द्विगुणमपहरन्ति तेऽक्षयदधूर्ताश्चत्वारिंशच्चाण-
क्योपदिष्टानाहरणोपायान्सहस्रधाऽऽत्मबुद्ध्यैव ते विकल्पयितारः।
द्वितीयेऽन्योन्यं विवदमानानां प्रजानामाक्रोशाहन्यमानकर्णः कष्टं
जीवति। तत्रापि प्राड्विवाकादयः स्वेच्छया जयपराजयौ
[1]विदधानाः, पापेनाकीर्त्या च भर्तारमात्मानञ्चार्थैर्योजयन्ति।
तृतीये स्नातुं भोक्तुं च लभते। भुक्तस्य यावदन्नःपरि-
णामस्तावदस्य विपभयं न शाम्यत्येव। चतुर्थे हिरण्यप्रति-
ग्रहाय हस्तं प्रसारयन्नेवोत्तिष्ठति। पञ्चमे मन्त्रचिन्तया महान्त-
मायासमनुभवति। तत्रापि मन्त्रिणो मध्यस्था[2] इवान्योन्यं मिथः
सम्भूय, दोषगुणौ दूतचारवाक्यानि शक्याशक्यतां देशकालकार्या-
वस्थाश्च स्वेच्छया विपरिवर्तयन्तः स्वपरमित्रमण्डलान्युप-
जीवन्ति। बाह्याभ्यन्तरांश्च कोपान्गूढमुत्पाद्य प्रकाशं प्रशमयन्त इव

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

१. विवादधनाः। २. मध्यस्थायिनः।

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

स्वामिनमवशमवगृह्णन्ति । षष्ठे स्वैरविहारो मन्त्रो वा सेव्यः । सोऽस्यैतावान्स्वैरविहारकालो[1] यस्य तिस्रस्त्रिपादोत्तरा नाडिकाः । सप्तमे चतुरङ्गबलप्रत्यवेक्षणप्रयासः । अष्टमेऽस्य सेनापतिसखस्य विक्रमचिन्ताक्लेशः ।

हिन्दी अनुवाद—उठे हुए राजा द्वारा, धुले हुए या न धुले हुए मुँह में, मुट्ठी अथवा आधी मुट्ठी, भीतर करके (पेट में डालकर), राज्य के सारे आय-व्यय का हिसाब, दिन के पहले आठवें पहर में सुना जाना चाहिए। चाणक्य के बताये हुए, चोरी के चालीस उपायों को, अपनी बुद्धि से, हजारों प्रकार का बना लेने वाले वे धूर्त अध्यक्ष (अफसर) उस (राजा) के सुनते ही सुनते, दूना धन चुरा लेते हैं।

दूसरे पहर में, आपस में लड़ती हुई प्रजाओं के शोरगुल से, (उसका) कान जला (फटा) जाता है, (और वह) कष्ट पूर्वक जीता है। वहाँ भी न्यायकर्ता लोग (प्राड्विवाकादयः), स्वेच्छानुसार, जीत तथा हार करते हुए, राजा को पाप एवं अपकीर्ति से, और अपने को धन से, जोड़ लेते हैं (यानी स्वयं तो घूस घास लेकर अपना जेब गरम करते हैं और राजा बेचारा बदनामी तथा पाप का भागी होता है)।

तीसरे पहर में नहाने तथा खाने पाता है। खा चुकने पर, जब तक अन्न का परिपाक नहीं हो जाता, तब तक उसके (मन में से) विष का भय शान्त नहीं होता (यानी जब तक उसके पेट में भोजन हजम नहीं हो जाता तब तक उसके मन में यह चिंता बनी रहती है कि कहीं किसी ने मेरे भोजन में जहर तो नहीं दे दिया)।

भोजन करके चौथे पहर, सुवर्ण (राज-कर) लेने के लिए हाथ फैलाये हुए ही उठता है। पाँचवें में, मन्त्र की चिंता से (मन्त्रियों से सलाह लेने की चिन्ता में) महान क्लेश का अनुभव करता है (भोगता है)। वहाँ भी, मन्त्री लोग, मध्यस्थों के समान, आपस में मिलकर, दोष तथा गुण

---

१. सोऽयं स्वैरविहारकालो दृश्यते।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

को, दूतों तथा गुप्तचरों की बातों को, शक्यता (साध्यता) तथा अशक्यता (असाध्यता) को, देश काल तथा कार्य की अवस्था को स्वेच्छानुसार बदलते हुए उलटा-सीधा (अनाप-शनाप) राजा को समझाते हुए, अपने मित्रों के धन पर तथा शत्रुओं के मित्रों के धन पर जीविका निर्वाह करते हैं। बाहरी तथा भीतरी क्रोधों (झगड़ों) को गुप्त रूप से (छिपे छिपे) पैदा कर, प्रकट रूप में (ऊपरी तौर से) (उन झगड़ों को) शान्त सा करते हुए, राजा को विवश बनाकर अपने चंगुल में कर लेते हैं।

छठें में स्वेच्छापूर्वक विहार करे अथवा राय-मशविरा (परामर्श) करे। उसके स्वेच्छाविहार (आमोद-प्रमोद) का यही इतना समय होता है जिसकी ३¾ नाडी (दंड) अवधि होती है। सातवें में चतुरङ्गिनी सेना की देखभाल की परेशानी उठानी पड़ती है। आठवें में सेनापति के साथ विक्रम की चिन्ता का क्लेश उठाना पड़ता है (अर्थात् यह चिन्ता करनी पड़ती है कि किस राजा के ऊपर आक्रमण करना चाहिए, कब आक्रमण करना चाहिए, किस प्रकार आक्रमण करना चाहिए इत्यादि इत्यादि)।

टिप्पणी—उत्थितेन—उठे हुए के द्वारा, उत्+स्था+क्त। उत्थितेन राज्ञा—उठे हुए राजा द्वारा। क्षालिताक्षालिते—क्षालित—धोया हुआ, क्षल्+क्त। अक्षालित—न धोया हुआ, न क्षालितम् इति अक्षालितम् (नञ् तत्पुरुष), क्षालितं वा अक्षालितं वा इति क्षालिताक्षालितं, (विशेषणोभयपदकर्मधारय), तस्मिन् क्षालिताक्षालिते अर्थात् चाहे मुँह धुला हो या न धुला हो। धुले हुए अथवा न धुले हुए मुँह में। अथवा क्षालिताक्षालितं मुखं यस्य स क्षालिताक्षालितमुखः तेन क्षालिताक्षालितमुखेन राज्ञा (बहुव्रीहि), धोया हुआ या न धोया हुआ हो मुख जिसका ऐसे राजा द्वारा। मुष्टिम्—मुट्ठी भर (अन्न)। अर्धमुष्टिम्—आधी मुट्ठी (अन्न)। अभ्यन्तरीकृत्य—भुक्त्वा, अन्दर करके यानी पेट में डालकर (अर्थात् खाकर)। कृत्स्नम्—सम्पूर्णम्, सारा। आयव्ययजातम्—आय-व्ययं, आयश्च व्ययश्च इति आयव्ययौ तयोः जातम् समूहः

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

इति आयव्ययजातम् (षष्ठी तत्पुरुष) "द्वन्द्वान्ते श्रूयमाणं पदं प्रत्येकं सम्बध्यते" नियम से "आयजातम् तथा व्ययजातम्" समझना चाहिए। आय—आमदनी। व्यय—खर्च। जात—समूह। अह्नः—दिवसस्य, दिन के। प्रथमे अष्टमे भागे—पहले आठवें भाग में। श्रोतव्यम्—सुना जाना चाहिए, श्रु+तव्य, कहने का तात्पर्य यह कि राजा को सबसे पहिले पहर में आमदनी तथा खर्च का हिसाब सुनना तथा जाँचना पड़ता है। शृण्वतः—सुनते सुनते। श्रु धातु शतृ प्रत्यय, पुंलिंग षष्ठी एकवचन, विशेषण है "अस्य" का। शृण्वतः एव अस्य—शृण्वन्तं राजानम् अनादृत्य, उसके सुनते ही सुनते, "षष्ठी चानादरे" नियम से शृण्वतः अस्य—में षष्ठी हुई है। सारांश यह कि उस राजा की जरा भी परवाह न कर उसके देखते देखते, उसके सुनते सुनते, धूर्त लोग दुगुना धन चुरा लेते हैं। अध्यक्ष-धूर्ताः—धूर्ता राजकर्मचारिणः। अध्यक्ष—अफसर लोग, धूर्ताः अध्यक्षाः इति अध्यक्षधूर्ता (मयूर व्यंसकादित्वात् समासः)। द्विगुणम्-दुगुना, द्वौ गुणौ यस्य यस्मिन् वा तत् द्विगुणम् (बहुव्रीहि)। चाणक्योपदिष्टान्—चाणक्य-वर्णितान्, चाणक्य के द्वारा बताए गए हुए, चाणक्येन उपदिष्टाः इति चाणक्योपदिष्टाः तान् चाणक्योपदिष्टान् (तृतीया तत्पुरुष), विशेषण है "आहरणोपायान्" का। उपदिष्ट= उप+दिश्+क्त। आहरणोपायान्—स्तेयप्रकारान्। आहरण—चोरी, आ+हृ+ल्युट्, आहरणस्य उपायाः प्रकाराः इति आहरणोपायाः तान् आहरणोपायान् (षष्ठी तत्पुरुष), चोरी के उपायों अथवा तरीकों को। चत्वारिंशत्—चालीस। चत्वारिंशत् चाणक्योपदिष्टान् आहरणोपायान्—चाणक्य ने चोरी के चालीस उपाय बताए हैं। सहस्रधा—सहस्रप्रकारैः, हजारों तरह से, सहस्र+धा। "प्रकार" का अर्थ द्योतित करने के लिए धा प्रत्यय जोड़ा जाता है; इसी प्रकार द्विधा, त्रिधा, चतुर्धा, पञ्चधा आदि शब्द बनते हैं। आत्मबुद्ध्या एव—स्वकीयेन नैपुण्येन, अपनी बुद्धि से ही, बुद्धि—बुध् धातु+क्तिन् प्रत्यय

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

(स्त्रियाम्), आत्मनः (स्वस्य) बुद्धिः इति आत्मबुद्धिः तया आत्मबुद्ध्या (षष्ठी तत्पुरुष)। विकल्पयितारः—रचयितारः,—कल्पना कर लेंगे या बना लेंगे, वि+कल्प् (भ्वादि आत्मनेपदी+लुट् लकार प्रथम पुरुष बहुवचन) यहाँ पर यह अनद्यतनभविष्यकाल वर्तमान काल के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। इसका मतलब है—"रचयन्ति" अर्थात् "बना लेते हैं"। संक्षेपतः यह आशय है कि यद्यपि चाणक्य ने अपनी पुस्तक में चोरी के चालीस ही उपाय बताए हैं, पर वे धूर्त अफसर, अपनी बुद्धि और तिकड़मबाजी से, हजार उपाय सोच लेते हैं, और उन हजारों उपायों से राजा या धनी व्यक्ति को ठगा करते हैं और उसका धन लूटा करते हैं।

द्वितीये—दूसरे आठवें भाग में यानी ७½ बजे प्रातः से ९ बजे प्रातः तक उसे मुकदमे सुन कर न्याय करना पड़ता है। प्रजा के लोग आपस में झगड़ा करते हैं और अपने मुकदमे राजा के पास लाते हैं। राजा को मुकदमे सुनकर फैसला देना पड़ता है। वे मुकद्दमे ऐसे झंझट वाले तथा झुँझलाहट पैदा करने वाले होते हैं कि उन्हें सुनकर उस बेचारे राजा के कान जले चले जाते हैं। अन्योन्यम्—परस्परम्, आपस में। विवदमानानाम्—कलहं कुर्वाणानां, झगड़ती हुई (प्रजाओं) का, वि+वद्+शानच्=टाप्, विशेषण है "प्रजानाम्" का। अन्योन्यं विवदमानानाम् प्रजानाम्—आपस में लड़ती हुई प्रजाओं के। आक्रोशात्—चीत्कारशब्दात्, शोर गुल से। आ+क्रुश+घञ्। जब प्रजाएँ झगड़ती हुई आती हैं तो वे एक दूसरे को गाली गुफ्ता देती हुई और जोर जोर से एक दूसरे को दोषी ठहराती हुई आती हैं। दह्यमानकर्णः—दह्यमानौ कर्णौ यस्य सः दह्यमानकर्णः (बहुव्रीहि): जला जाता है कान जिसका ऐसा वह बेचारा राजा। कष्टम्—कष्टपूर्वकम्, क्रिया विशेषण अव्यय है, "जीवति" प्रधान क्रिया की विशेषता बताता है।

तत्र अपि—वहाँ भी, मुकदमों में भी। प्राड्विवाकादयः—पृच्छति इति प्राट्, विविनक्ति इति विवाकः प्राड् च विवाक च इति प्राड्विवाकौ,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

तौ आदी येषां ते प्राड्विवाकादयः (बहुव्रीहि), अच् समासान्तः । राजा के दरबार में कुछ ऐसे अफसर हुआ करते थे जो मुद्दई तथा मुद्दालेह (वादी तथा प्रतिवादी) से सारी बातें पूछते थे, उन्हें "प्राट्" कहते थे। उसके बाद वे ही विवेचना करते थे और फैसला देते थे। इससे उन्हें "विवाक्" कहते थे। राजा प्रायः उनके फैसलों को मान लिया करता था। राजा अदालत में "प्रेसिडेण्ट" या "चेयरमैन" की हैसियत से बैठा करता था। बाकी मुकद्दमा सुनने-सुनाने का काम वे ही अफसर लोग किया करते थे। वे प्राड्विवाक कहे जाते थे। विदधाना—कुर्वाणाः, करते हुए, वि+धा+शानच् । स्वेच्छया जयपराजयौ विदधानाः—स्वेच्छा-पूर्वक जय तथा पराजय बनाते हुए, मनमानी जीत तथा हार का फैसला देते हुए, यानी जिसे चाहते हैं उसे जिता देते हैं, जिसे चाहते थे उसे हरा देते हैं। सच्चे न्याय की परवाह बिल्कुल नहीं करते हैं। अकीर्त्या—अपयशसा, बदनामी से, न कीर्तिः इति अकीर्तिः तया अकीर्त्या (नञ् तत्पुरुष), पापेन अकीर्त्या च भर्तारं योजयन्ति—राजा के ऊपर पाप तथा अपकीर्ति चढ़ाते हैं, (उसकी बदनामी करवाते हैं) और उसे पाप का भागी बनाते हैं। आत्मानम् च अर्थैः योजयन्ति—स्वान् धनैः पूर्णान् कुर्वन्ति, अपने को धन से युक्त बनाते हैं; अपने तो धन कमाते हैं, प्रजा से ऐंठकर द्रव्य संचित करते हैं।

अदण्ड्यान् दण्डयन् राजा, दण्ड्यांश्चैवाप्यदण्डयन् ।
अयशो महदाप्नोति नरकं चैव गच्छति ॥

(मनु) अर्थात् जो राजा अदण्ड्य व्यक्तियों को गलती से अथवा जबर्दस्ती से दण्ड देता है और दण्डनीय व्यक्तियों को बेदाग छोड़ दिया करता है वह महान् अपयश का भागी होता है और नरक जाता है। भुक्तस्य—भुक्तवतः, भोजन कर चुके हुए (राजा) का; यह अद्भुत शब्द है, इस शब्द की साधनिका विचित्र है। भुज्+क्त=भुक्तम् अर्थात् भोजनम् । भुक्तम् अस्यास्तीति भुक्तः अर्थात् भुक्तवान् पुरुषः, तस्य भुक्तवतः अस्य राज्ञः। इसी प्रकार किरातार्जुनीय में आया है "विदितोऽस्मि" ... न वर्णिलिंगी विदितः

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

समाययौ युधिष्ठिरं द्वैतवने वनेचरः । "विदितः" का अर्थ है "विदितवान्"। यहाँ "भुक्त" शब्द से अच् प्रत्यय किया गया है । तब, भुक्तः पुंलिंग शब्द बना । अर्श आदिभ्योऽच् से अच् प्रत्यय हुआ है । अन्धःपरिणामः—अन्धस्—भात, अन्न । अन्धः अन्धसी अन्धांसि आदि रूप चलते हैं । परिणामः—परिपाकः, हजम होना, परि+नम्+घञ् । अन्धसः (ओदनस्य अन्नस्य वा) परिणामः (परिपाकः) इति अन्धः परिणामः, (षष्ठी तत्पुरुष), भात (अन्न) का परिपाक (हजम हो जाना) । विषभयम्—गरल-शंका विषात् भयम् इति विषभयम् (पञ्चमी तत्पुरुष), विष (जहर) से भय । भय=भी+अच् । एरच् सूत्र से ईकारान्त "भी" धातु में भाव अर्थ में अच् प्रत्यय जुटा है । न शाम्यत्येव—न शाम्यति एव, न दूरीभवति, नहीं ही शान्त होता । कामन्दकीनीति में कहा गया है कि निम्नलिखित चीजों में सदा विष की आशंका रहा करती है—

> यानें, शय्यासने, पाने, भोज्ये, वस्त्रे, विभूषणे ।
> सर्वत्रैवाप्रमत्तः स्याद् वर्जयेत् विषदूषितम् ॥

तृतीये अष्टमे भागे—९ बजे से १०½ बजे तक । चतुर्थे अष्टमे भागे—१०½ बजे से १२ बजे तक, उसे अफसरों तथा प्रजा के लोगों से उपहार लेना पड़ता है । उपहार लेने के लिए उसे हाथ पसारना पड़ता है । उसी पर विहारभद्र व्यङ्ग्य कस रहा है । हिरण्य-प्रतिग्रहाय—हिरण्य – सुवर्ण, परन्तु यहाँ 'हिरण्य' का साधारण अर्थ लेना चाहिए "धन, रुपया पैसा" । प्रतिग्रह—ग्रहणम्, प्रति+ग्रह्+अप् । ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च—सूत्र से भाववाचक अप् प्रत्यय लगा है । हिरण्यस्य प्रतिग्रहः इति हिरण्यप्रतिग्रहः तस्मै हिरण्यप्रतिग्रहाय (षष्ठी तत्पुरुष), सुवर्ण (रुपया पैसा, धन) के लेने के लिए । प्रसारयन्नेव—प्रसारयन् एव फैलाए हुए ही, प्र+सृ+णिच्+शतृ । पञ्चमे अष्टमे भागे—१२ बजे से १½ बजे तक । मन्त्रचिन्तया—मन्त्रस्य चिन्ता इति मन्त्रचिन्ता, तया मंत्रचिन्तया (षष्ठी तत्पुरुष), मंत्र की चिन्ता से, यानी मंत्रियों के साथ बैठकर राय मशविरा करना पड़ता है । महान्तम्

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

आयासम् अनुभवति—विपुलं क्लेशं सहते, महान् क्लेश भोगता है, आयास—मानसिक परेशानी, आ+यस्+घञ्। मध्यस्था इव—उदासीना इव, निष्पक्ष पुरुषों के सदृश, मध्ये तिष्ठन्ति इति मध्यस्थाः, मध्य+स्था+क। यह प्रकट करते हुए कि हम किसी भी पक्ष की तरफ नहीं हैं—न तो हम वादी की तरफ हैं, न प्रतिवादी की तरफ। मिथः—रहसि, एकान्ते। सम्भूय—मिलित्वा, मिलकर, सम्+भू+ल्यप्। दोषगुणौ दूतचार-वाक्यानि शक्याशक्यतां देशकालकार्यावस्थाः स्वेच्छया विपरिवर्तयन्तः—राय-मशविरे में वे धूर्त लोग क्या करते हैं कि राजा को उलटा-सीधा समझाते हैं। यदि कोई राजनीतिक योजना दोषयुक्त है तो उसे महा लाभकारी तथा गुणकारी बताते हैं, और यदि लाभकारी अथवा गुणकारी योजना हुई, तो उसे दोषयुक्त तथा हानिकारी बता देते हैं। दूताश्च चाराश्च इति दूतचाराः (द्वन्द्व), तेषां वाक्यानि इति दूतचार-वाक्यानि (षष्ठी तत्पुरुष)। दोषश्च गुणश्च इति दोषगुणौ (द्वन्द्व)। शक्याशक्यताम्—शक्यं च अशक्यं च इति शक्याशक्ये (द्वन्द्व), तयोः भावः शक्याशक्यता। शक्यता—शक्य+तल्+टाप्। देशश्च कालश्च कार्यञ्च इति देशकालकार्याणि (द्वन्द्व) तेषाम् अवस्थाः इति देशकाल-कार्यावस्थाः (षष्ठी तत्पुरुष)। दूतचार-वाक्यानि—अफसरों, गुप्तचरों एवं राजदूतों द्वारा लाए गए हुए समाचारों को भी वे उलट-पुलट देते हैं, अथवा उन्हें उलटा-सीधा करके समझा देते हैं। यदि किसी राजदूत ने कुछ समाचार भेजा है तो उसे वे अण्ट-शण्ट तरीके से उलट फेरकर राजा के सामने पेश करते हैं। शक्याशक्यताम्—फलाँ राजनीतिक योजना शक्य है, कार्यान्वित हो सकती है; फलाँ अशक्य है, कार्यान्वित नहीं हो सकती—इस विषय को भी उलटा-पुलटा कर देते हैं, शक्य योजना को अशक्य बता देते हैं, और अशक्य योजना को शक्य बता देते हैं। देशकालकार्यावस्थाः—देश—फलाँ योजना के लिये फलाँ देश ठीक पड़ेगा, अमुक स्थान पर अमुक योजना चालू करने से सफलता प्राप्त होगी, फलाँ स्थान पर या देश में वह योजना चालू करने से असफलता होगी—इस तरह उलटा समझाते हैं। काल—फलाँ

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

काल (समय) में फलाँ योजना चलाने से कार्य-सिद्धि होगी, फलाँ काल में चलाने से कार्यहानि होगी—इस बात को भी ठीक-ठीक नहीं समझाते, बल्कि उलटा-पुलटा ही समझाते हैं। काय—फलाँ योजना द्वारा फलाँ कार्य सधेगा, फलाँ कार्य नहीं सधेगा—इत्यादि बातों को भी गलत-सलत समझाते हैं। विपरिवर्तयन्तः—विपर्यासयन्तः—उलटते पुलटते हुए, वि+परि+वृत्+णिच्+शतृ प्रथमा बहुवचन। स्वपरमित्र मण्डलानि—मित्राणां मण्डलानि इति मित्रमण्डलानि (ष० त०), स्वेषां मित्रमण्डलानि अथ च परेषां मित्रमण्डलानि इति स्व—पर—मित्रमण्डलानि। अथवा स्वे (आत्मीयाः) च परे (शत्रवः) च इति स्वपरे (द्वन्द्व), तेषाम् मित्रमण्डलानि इति स्वपरमित्रमण्डलानि (षष्ठी तत्पु०)। द्वन्द्वान्ते श्रूयमाणं पदं प्रत्येकं सम्बध्यते। अपने मित्रों की मण्डली को भी चूसते हैं तथा शत्रुओं की मित्र-मण्डली को भी चूसते हैं—इस प्रकार वे अपनी जीविका चलाते हैं। बाह्या-भ्यन्तरान् च कोपान्—बाह्याश्च आभ्यन्तराश्च इति बाह्याभ्यन्तराः तान् बाह्या-भ्यन्तरान् (द्वन्द्व), बहिः भवाः बाह्याः—बाहरी, बहि+ष्यञ्, अभ्यन्तरे भवाः आभ्यन्तरा—भीतरी, अभ्यन्तर+अण्। कोपान्—कलहान्, झगड़ों को। बाह्य झगड़े वे होते हैं जो अन्यदेशीय राजाओं द्वारा अथवा अरण्यनिवासियों द्वारा अथवा दूरस्थदेशनिवासियों द्वारा उठाए जाते हैं। आभ्यन्तर (भीतरी) झगड़े वे होते हैं जो अपनी ही प्रजा द्वारा, अपने ही देशवासियों तथा अमात्यों द्वारा उठाए जाते हैं। गूढ़म्—गुप्तरूपेण, छिपे तौर से, क्रियाविशेषण अव्यय है, "उत्पाद्य" की विशेषता बताता है। प्रकाशम्—जाहिरा तौर पर, दुनिया को दिखलाने के लिए, यह भी क्रियाविशेषण अव्यय है। प्रशमयन्तः इव—शान्तिं प्रापयन्तः—शान्त करते हुए से, प्र+शम्+णिच्+शतृ प्रथमा बहुवचन। प्रकाशं प्रशमयन्तः इव—दुनिया को दिखावेंगे कि देखो हम लोग झगड़ों को शांत कर रहे हैं। अवशम् अवगृह्णन्ति—निस्सहायं कृत्वा स्ववशे कुर्वन्ति, उसे सब प्रकार निस्सहाय बनाकर सोलहों आने अपने चंगुल में कर लेते हैं। षष्ठे अष्टमे भागे—१½ बजे से ३ बजे तक; छठें पहर अवश्य उसे इतनी स्वतंत्रता मिलती है कि चाहे वो वह अपना समय आमोद-प्रमोद

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

में बितावे चाहे मन्त्रियों से राय-मशविरा करे। स्वैरविहारः—स्वेच्छापूर्वकं भ्रमणादिक क्रीडादिकं वा। स्वैरं यथा स्यात् तथा विहारः आमोदप्रमोदः, स्वेच्छानुसार मनोरञ्जन आदि। अपने मनमाना सैर सपाटा। मन्त्रः वा सेव्यः—मन्त्रणा कार्या—अथवा मन्त्र (राय-मशविरा) सेवन करे (ध्यान देवे), राय-मशविरे में समय बितावे, सेव्य—सेव्+यत्। सोऽयं स्वैरविहार-कालः दत्ताम्—वह स्वैरविहार वाला समय जले (भाड़ में जाय)। त्रिपादोत्तरा नाडिकाः—त्रयः पादाः उत्तराः (अधिकाः) यासां ताः त्रिपादोत्तराः नाडिकाः, अधिक यानी $\frac{3}{4}$, । (बहु०)। नाडी—$1\frac{1}{2}$ घण्टे की एक नाडी होती है। तिस्रः त्रिपादोत्तरा नाडिका—तीन तथा $\frac{3}{4}$ नाडियाँ यानी $3\frac{3}{4}$ नाडियाँ। सप्तमे अष्टमे भागे—३ बजे शाम से $4\frac{1}{2}$ बजे शाम तक। इस अवधि में उसे चतुरङ्गिनी सेना का निरीक्षण करना पड़ता है। चतुरङ्गबल-प्रत्यवेक्षण-प्रयासः—चत्वारि अङ्गानि विद्यन्ते यस्मिन् तत् चतुरङ्गम् (बहुव्रीहि), सेना के चार अङ्ग ये हैं—गजसेना, अश्वसेना, पैदल सेना, रथसेना। चतुरङ्ग च तद्बलम् इति चतुरंग-बलम् (कर्मधारय) यानी चतुरंगिनी सेना। बल—सेना। चतुरंग बलस्य-प्रत्यवेक्षणम् (निरीक्षणम—देखभाल, जाँच पड़ताल) इति चतुरंग-बलप्रत्य-वेक्षणम् (षष्ठी तत्पुरुष), तस्य प्रयासः (क्लेशः) इति चतुरंग-बलप्रत्यवेक्षण-प्रयासः (षष्ठी तत्पुरुष), चतुरंगिणी सेना की देखभाल करने का कष्ट (परेशानी)। अष्टमे—यानी $4\frac{1}{2}$ बजे शाम से ६ बजे शाम तक। सेना-पतिसखस्य—सैन्याध्यक्षेण सह इत्यर्थः सेनापतेः सखा इति सेनापतिसखः (षष्ठी तत्पुरुष), सेनापति का साथी बनकर, यानी सेनापति को साथ लेकर। राजाहःसखिभ्यष्टच् से समासान्त टच् प्रत्यय जोड़ा गया है। इस नियम का अर्थ है "यदि तत्पुरुष समास के अन्त में राजन्, अहन्, सखि शब्द आवें तो टच् प्रत्यय लगाया जाता है।" विक्रमचिन्तालेशः—विक्रमस्य चिन्ता इति विक्रमचिन्ता (षष्ठी तत्पुरुष), विक्रम करने की फिक्र, अर्थात्—किस राजा के ऊपर विक्रम (पराक्रम) दिखलाना है, आक्रमण करना है,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

कब करना है, कैसे करना है आदि आदि । विक्रमचिन्तायाः क्लेशः इति विक्रमचिन्ता-क्लेशः (षष्ठी तत्पुरुष), विक्रम करने की फिक्र का क्लेश ।

पुनरुपास्यैव संध्यां, प्रथमे रात्रिभागे गूढपुरुषा द्रष्टव्याः । तन्मुखेन चातिनृशंसाः [1]शस्त्राग्निरसप्रणिधयोऽनुष्ठेयाः । द्वितीये भोजनानन्तरं श्रोत्रिय इव स्वाध्यायमारभते । तृतीये तूर्यघोषेण संविष्टश्चतुर्थपञ्चमौ शयीत किल । कथमिवास्याजस्र-[2]चिन्तायासविह्वलमनसो वराकस्य निद्रासुखमुपनमेत् ? पुनः षष्ठे शास्त्रचिन्ताकार्यचिन्तारम्भः । सप्तमे तु मन्त्रग्रहो दूताभिप्रेषणानि च । दूताश्च नामोभयत्र प्रियाख्यानलब्धानर्थान् वीतशुल्कबाधवर्त्मनि वाणिज्यया वर्धयन्तः, कार्यमविद्यमानमपि क्लेशेनोत्पाद्यानवरतं भ्रमन्ति । अष्टमे पुरोहितादयोऽभ्येत्यैनमाहुः—'अद्य दृष्टो दुःस्वप्नः । दुःस्था ग्रहाः शकुनानि चाशुभानि । शान्तयः क्रियन्ताम् । सर्वमस्तु सौवर्णमेव होमसाधनम् । एवं सति कर्म गुणवद्भवति । ब्रह्मकल्पा इमे ब्राह्मणाः । कृतमेभिः स्वस्त्ययनं कल्याणतरं भवति । ते चामी कष्टदारिद्र्या बह्वपत्या यज्वानो वीर्यवन्तश्चाद्याप्यप्राप्तप्रतिग्रहाः । दत्तं चैभ्यः स्वर्ग्यमायुष्यमरिष्टनाशनं च भवति' इति बहु-बहु दापयित्वा तन्मुखेन स्वयमुपांशु भक्षयन्ति । तदेवमहर्निशमविहितसुखलेशमायासबहुलमविरलकदर्थनं च नयतो नयज्ञस्यास्तां चक्रवर्तिता, स्वमण्डलमात्रमपि दुरारक्ष्यं भवेत् । शास्त्रज्ञसमाज्ञातो हि यद्ददाति, यन्मानयति, यत्प्रियं ब्रवीति तत्सर्वमतिसन्धातुमित्यविश्वासः । अविश्वास्यता हि जन्मभूमिरलक्ष्म्याः । यावता च [3]नयेन विना न लोकयात्रा स लोकत एव सिद्धः । न तत्र शास्त्रेणार्थः । स्तनंधयोऽपि हि तैस्तै-

१. शस्त्राग्निप्रणिधयः । २. चिन्तायासैः विह्वलमनसो वा कस्य ।

३. 'नयेन विना न याति लोकयात्रा,'

'समयेन विना लोकयात्रा'

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

रूपायैः स्तनपानं जनन्या लिप्सते । तदपास्यातियन्त्रणामनुभवन्तं यथेष्टमिन्द्रियसुखानि । ये ऽप्युपदिशन्ति 'एवमिन्द्रियाणि जेतव्यानि, एवमरिषड्वर्गस्त्याज्यः, सामादिरुपायवर्गः स्वेषु परेषु चाजस्रं प्रयोज्यः, संधिविग्रहचिन्तयैव नेयः कालः, स्वल्पोऽपि सुखस्यावकाशो न देयः' इति, तैरप्येभिर्मन्त्रिबकैर्युष्मत्तश्चौर्यार्जितं धनं दासीगृहेष्वेव भुज्यते । के चैते, वराकाः ? येऽपि मन्त्रकर्कशास्तन्त्रकर्तारः शुक्राङ्गिरसविशालाक्षबाहुदन्तिपुत्रपराशरप्रभृतयस्तैः किमरिषड्वर्गो जितः कृतं वा तैः शास्त्रानुष्ठानम् । तैरपि हि प्रारब्धेषु कार्येषु दृष्टे सिद्ध्यसिद्धी । पठन्तश्चापठद्भिरतिसन्धीयमाना बहवः । नन्विदमुपपन्नं देवस्य, यदुत सर्वलोकस्य वन्द्या जातिः, आयातयामं वयः, दर्शनीयं वपुः, अपरिमाणा विभूतिः । तत्सर्वं सर्वाविश्वासहेतुना सुखोपभोगप्रतिबन्धिना बहुमार्गविकल्पनात्सर्वकार्येष्वमुक्तसंशयेन तन्त्रावापेन मा कृथा वृथा ।

हिन्दी अनुवाद—फिर सन्ध्योपासन करते ही, रात्रि के पहले भाग में गुप्तचर देखे जाने चाहिएँ (यानी गुप्तचरों से मिलना चाहिए); और उन्हीं के द्वारा, शस्त्रद्वारा मारने वाले दूत, अग्नि लगाने वाले दूत, रस (विष) देने वाले दूत नियुक्त किए जाने चाहिएँ (नियुक्त करना पड़ता है)। दूसरे पहर भोजन के अनन्तर, वेद-पाठी विद्यार्थी की तरह (वह) स्वाध्याय (अपनी पढ़ाई) शुरू कर देता है। तीसरे पहर बाजों के साथ सोया हुआ वह चौथे और पाँचवें पहर तक सोवे (अर्थात् जब उसके सोने का समय आता है तो बिगुल या नगाड़ा या अन्य कोई बाजा बजाया जाता है ताकि सब को पता हो जाय कि अब राजा साहब शयन करने गए)। निरन्तर चिन्ता के क्लेश से व्याकुल उस बेचारे के (पास) भला कैसे निद्रा का सुख आवे। फिर छठें पहर शास्त्र की चिन्ता तथ कार्य की चिन्ता ... है। ... में राय-मशविरा

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

लेना तथा दूत आदि भेजना होता है और दूत लोग दोनों जगह (अपने राजा के यहाँ तथा शत्रु के यहाँ) मीठी-मीठी बातों द्वारा पाए हुए धन को, शुल्क (महसूल) की बाधा से रहित मार्ग से, व्यापार द्वारा बढ़ाते हुए, कार्य न होने पर भी, प्रयत्नपूर्वक (जबर्दस्ती) (काम) पैदा कर, निरंतर घूमते रहते हैं।

आठवें पहर, पुरोहित आदि उसके पास आकर कहते हैं—आज (एक) बुरा स्वप्न दिखाई पड़ा है। ग्रह (नक्षत्र) बुरे पड़े हैं और अशुभ शकुन हुए हैं। शान्ति की जानी चाहिए। होम की सारी सामग्री सुवर्ण की होवे (होनी चाहिए)। ऐसा होने पर काम (फल) लाभ-दायक होता है (होगा)। ये ब्राह्मण ब्रह्मा के तुल्य हैं। इनके द्वारा किया हुआ स्वस्त्ययन बड़ा कल्याणकारी होगा (अक्षरार्थ 'होता है')। ये कष्ट तथा गरीबी से पीडित हैं, तथा बहुत बाल-बच्चे वाले, यज्ञ करने वाले, (बड़े) वीर्यवान् (तेजस्वी) हैं और इन्होंने आजतक दान नहीं लिया है। इनको दिया हुआ दान स्वर्गदायक, आयुवर्धक, एवं अरिष्ट (दुर्भाग्य) नाशक होगा (अक्षरार्थ 'होता है')। इस प्रकार कहकर बहुत सा धन दिलाकर, उनके द्वारा स्वयम् एकान्त में खा जाते हैं।

तो इस प्रकार, दिनरात, जरा भी सुख पाए बिना, क्लेशों (परेशानियों) से भरा हुआ, निरंतर कष्टों से परिपूर्ण जीवन व्यतीत करने वाले नीतिज्ञ राजा की चक्रवर्तिता दूर रहे (उसके लिए तो) अपने राज्य की ही रक्षा करना मुश्किल हो जाता है। 'शास्त्रज्ञ' नाम से प्रसिद्ध पुरुष जो भी देता है, जो भी सम्मान करता है, जो भी प्रिय वचन बोलता है, वह सब ठगने के लिए (करता) है ऐसा अविश्वास (लोगों में प्रचलित हो जाता है)। (अपने ऊपर लोगों का) विश्वास न होना अलक्ष्मी (दरिद्रता) की जन्मभूमि है। जितनी नीति के बिना लोकयात्रा (जीविका) नहीं चल पाती उतनी नीति तो संसार से ही प्राप्त हो जाती है (मालूम हो जाती है)। उसके लिए शास्त्र से क्या लाभ (शास्त्र पढ़ने की

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

क्या आवश्यकता)। दुधमुँहा बच्चा भी भिन्न-भिन्न उपायों द्वारा माता का स्तन-पान प्राप्त करने की इच्छा करता है। इसलिए, अतियन्त्रणा (अत्यधिक परेशानी) त्याग कर, स्वेच्छानुसार, इन्द्रियसुखों को भोगिए।

जो लोग ऐसा उपदेश देते हैं कि "इस प्रकार से इन्द्रियाँ जीती जानी चाहिएँ, इस प्रकार छहों शत्रुओं को त्यागना चाहिए, और साम, दान, दण्ड, भेद इत्यादि उपाय अपने लोगों तथा शत्रु-पक्ष के लोगों पर निरन्तर प्रयोग किया जाना चाहिए, संधि तथा विग्रह की चिन्ता में ही समय व्यतीत किया जाना चाहिए, जरा-सा भी सुख का अवकाश नहीं दिया जाना चाहिए," उन बगुला-सरीखे मन्त्रियों द्वारा, आप से चोरी करके कमाया हुआ धन, वेश्याओं के घरों में ही भोगा जाता है।

और ये बेचारे क्या हैं? मन्त्र के विषय में बड़े बड़े नियमों का पालन करके जीवन व्यतीत करने वाले शुक्र, आङ्गिरस, विशालाक्ष, बाहुदन्तिपुत्र, पराशर इत्यादि जो शास्त्रकार तथा तन्त्रकार थे, क्या उन लोगों द्वारा अरिषड्वर्ग—छः शत्रु—जीत लिया गया था? (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर ये छः मनुष्य के शत्रु कहे जाते हैं क्योंकि ये ही आत्मा की धृति को बिगाड़ते हैं)। क्या उन लोगों द्वारा शास्त्रानुष्ठान किया गया था (अर्थात् क्या वे लोग शास्त्रानुसार चले थे)। प्रारम्भ किये हुए कार्यों में उनके द्वारा भी सफलता तथा विफलता देखी गई थी (अर्थात् जो कार्य वे लोग प्रारम्भ करते थे वे सबके सब सफल ही नहीं हो जाते थे; कोई सफल होते थे और कोई विफल होते थे)। बहुत से पढ़ने-लिखने वाले लोग बे पढ़े-लिखे हुओं द्वारा ठग लिए जाते हैं।

महाराज को निम्नलिखित वस्तुएँ प्राप्त हैं—सारे संसार द्वारा पूज्य (वन्दनीय) कुल; नई उम्र, देखने योग्य शरीर, तथा अपरिमित ऐश्वर्य। इसलिए इन सब चीजों को ऐसे तन्त्रावाप से व्यर्थ न कीजिए जो सभी लोगों के अविश्वास का कारण है, जो सुख के उपभोग में अड़चन डालने वाला है, जो बहुत से मार्ग बतलाने के कारण, सभी कार्यों में संशय पैदा करने वाला है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

टिप्पणी—उपास्यैव सन्ध्याम्—सन्ध्योपासनं कृत्वा । उपास्य एव सन्ध्यांम्, सन्ध्योपासन करके ही, यानी ज्योंही सन्ध्योपासन किया त्योंही यानी ६ बजे से ७½ बजे तक । गूढपुरुषाः—गुप्तचराः, जासूस । तन्मुखेन—उन (जासूसों) के द्वारा, तेषां मुखेन इति तन्मुखेन (षष्ठी तत्पुरुष) । अतिनृशंसाः—अतिक्रूराः, अत्यन्तं निर्दयाः । प्रणिधयः—दूताः । शस्त्राग्निरसप्रणिधयः—शस्त्रप्रणिधयः, अग्निप्रणिधयः, रसप्रणिधयः, शस्त्र द्वारा मार डालने वाले दूत, अग्नि लगाकर घर आदि जला कर मार डालने वाले दूत तथा रस (विष) देकर मार डालने वाले दूत । शस्त्रं च अग्निश्च रसश्च इति शस्त्राग्निरसाः तेषु (द्वन्द्व) दक्षाः प्रणिधयः (मध्यमपदलोपी स०) इति शस्त्राग्निरस-प्रणिधयः । अनुष्ठेयाः—नियोक्तव्याः, नियुक्त करने पड़ते हैं, अनु+स्था+यत् । "अचोयत्" नियम से स्था में यत् प्रत्यय लगा । द्वितीये—रात्रि में ७½ बजे से ६ बजे तक । श्रोत्रियः इव—वेदाध्यायी छात्र इव, वेद पढ़ने वाले विद्यार्थी के समान । श्रोत्रियः छन्दोऽधीते—सूत्र से । "जन्मना जायते शूद्रः संस्कारैः द्विज उच्यते । वेदाध्यायी भवेद् विप्रः त्रिभिः श्रोत्रिय उच्यते" । स्वाध्यायम्—वेदाध्ययन को स्वाध्याय कहते हैं अथवा ब्रह्मतत्वचिन्तन को भी स्वाध्याय कहते हैं ।

तृतीये—६ बजे से १०½ बजे तक । तूर्यघोषेण—वाद्यनादेन, बाजे की आवाज के साथ । तूर्य—बाजा । घोष—शब्द, तूर्याणां घोषः इति तूर्य-घोषः तेन तूर्यघोषेण । संविष्टः—शयितः, सुप्तः, सोया हुआ, सम्+विश्+क्त । संवेशः शयने स्थाने सत्समारोहणेऽपि च इत्यजयः । तूर्यघोषेण संविष्ट—बाजे की आवाज के साथ सोया हुआ । जब राजा शयन करने जाता था तो बड़े जोर से बाजा बजाया जाता था ताकि जनता को मालूम हो जाय कि इस समय राजा साहब सोने जा रहे हैं । चतुर्थपञ्चमौ शयीत—चौथे तथा पाँचवें पहर तक सोवे—१०½ बजे से १½ बजे तक । कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

द्वितीया सूत्र से चतुर्थपञ्चमौ में द्वितीया हुई है। कथम् इव—केन प्रकारेण, भला कैसे। अस्य—वराकस्य नृपस्य, बेचारे राजा के। अजस्र-चिन्तायासविह्वलमनसः—निरन्तरम् आधिव्याकुलचेतसः—अजस्र—निरन्तर। आयास—क्लेश, परेशानी। विह्वल—व्याकुल। निरन्तर की चिन्ता के क्लेश से विह्वल है मन जिसका। अजस्रं चिन्ता इति अजस्र-चिन्ता, अजस्रचिन्तायाः आयासः इति अजस्रचिन्तायासः, (षष्ठी तत्पुरुष), अजस्रचिन्तायासेन विह्वलं मनः यस्य सः अजस्रचिन्तायास-विह्वलमनाः तस्य अजस्रचिन्तायासविह्वलमनसः (बहु०)। वराकस्य—दीनस्य, बेचारे के; यह "अस्य नृपस्य" का विशेषण है, वृ+षाकन्। जल्पभिक्षकुट्ट-लुण्टवृङः षाकन् से वृ में षाकन् प्रत्यय जुड़ा है। आगमेत्—आग-च्छेत्, आवे। निद्रासुखम्—निद्रा का सुख, निद्रायाः सुखम् इति निद्रा-सुखम् (षष्ठी तत्पुरुष)। मन्त्रग्रहः—सचिवेभ्यः मन्त्रणायाः आदानम्—राय-मशविरा लेना, मन्त्रस्य (परामर्शस्य) ग्रहः इति मन्त्रग्रहः (षष्ठी तत्पुरुष)। दूताभिप्रेषणानि—दूतों को भेजना, दूतानाम् अभिप्रेषणानि इति दूताभिप्रेषणानि (षष्ठी तत्पुरुष)। दूताः च नाम—प्रसिद्ध ही है कि दूत लोग। उभयत्र—दोनों स्थानों में यानी अपने स्वामी के यहाँ तथा जहाँ विदेश में भेजे जाते हैं वहाँ भी (या शत्रु के यहाँ भी)। प्रियाख्यान-लब्धान्—प्रिय—प्यारी प्यारी, मीठी-मीठी। आख्यान—वाणी, वचन। लब्धान्—प्राप्तान्, पाये हुए, लभ्+क्त, मीठी-मीठी बातें कह (बोल) कर प्राप्त किए हुए धन को। प्रियं च तद् आख्यानम् इति प्रियाख्यानम् (कर्मधारय), प्रियाख्यानेन लब्धाः इति प्रियाख्यान-लब्धाः तान् प्रियाख्यानलब्धान् (तृतीया तत्पुरुष)। अर्थान्—धनानि। वीत शुल्क बाध वर्त्मनि—शुल्क—चुंगी, महसूल, राज कर। वीत—गत, वि+इ+क्त, निकल गई है, नहीं रह गई है। वर्त्मन्—रास्ता, जिस रास्ते या सड़क पर चुङ्गी या महसूल न लगता होगा, माफ होगा उस रास्ते से वे आवेंगे ताकि चुंगी या महसूल न देना पड़े। शुल्कस्य बाधा इति शुल्कबाधा (षष्ठी त०), वीता (निर्गता) शुल्कबाधा यस्मिन्

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

तत् वीतशुल्कबाधम् (बहुव्रीहि), वीतशुल्कबाधं च तद् वर्त्म इति वीतशुल्कबाधवर्त्म, तस्मिन् वीतशुल्कबाधवर्त्मनि (कर्मधारय)। वाणिज्यया—व्यापार द्वारा, वणिजः भावः कर्म वा वाणिज्यम्, वणिज् +यत्+टाप्। वर्धयन्तः—वृद्धिं प्रापयन्तः। बढ़ाते हुए, इसको "अर्थान्" के साथ जोड़िए, वृध्+णिच्+शतृ प्रथमा बहुवचन। क्लेशेन—प्रयत्न-पूर्वकम्। अनवरतम्—निरन्तरम्। उत्पाद्य—पैदा कर के, उत्+पद्+णिच्+ल्यप्। दुःस्वप्नः—दुष्टः स्वप्नः इति दुःस्वप्नः (कर्मधार), खराब स्वप्न। अभ्येत्य—समीपं गत्वा, अभि+आ+इण्+ल्यप्, पास आकर। दुःस्थिताः—अशुभाः—दुष्टे स्थाने स्थिताः इति दुःस्थिताः, बुरे स्थान पर बैठे हुए (पड़े हुए)। स्थिताः—स्था+क्त। स्वपो नन् से स्वप् धातु में नन् प्रत्यय जोड़कर स्वप्नः भाववाचक शब्द बना। सौवर्णम्—हेममयम्, सोने का बना हुआ, सुवर्णस्य विकारः सौवर्णम्, सुवर्ण+अण्। होमसाधनम्—होमपात्राणि—होम का सामान, होमस्य साधनम् इति होमसाधनम् (षष्ठी तत्पुरुष)। कर्म—कार्यम्, फलम्। गुणवन्—लाभकारि, गुणाः विद्यन्ते अस्मिन् इति गुणवत्, गुण+मतुप्। ब्रह्मकल्पाः—विरिञ्चितुल्यः, ब्रह्मा के समान ब्रह्माणः ईषत् न्यूनाः इति ब्रह्मकल्पाः, "ईषदसमाप्तौ कल्पब्देश्यदेशीयरः" नियम से ईषन्न्यूनार्थ में कल्पप् प्रत्यय जुड़ा है। एभि कृतं स्वस्त्ययनम्—इन लोगों के द्वारा किया गया हुआ स्वस्त्ययन या मगलपाठ। ते चामी—ते च अमी; असौ अमू अमी, अमुम् अमू अमून् इत्यादि अदस् के रूप चलते हैं।

कष्टदारिद्र्यवन्तः—कष्टवन्तः दारिद्र्यवन्तश्च, कष्टं च दारिद्र्यं च इति कष्टदारिद्र्ये (द्वन्द्व), कष्टदारिद्र्ये विद्येते एषाम् इति कष्टदारिद्र्यवन्तः, कष्टदारिद्र्य+मतुप् कष्ट वाले तथा दरिद्रता वाले। बह्वपत्याः—बहुसन्तानवन्तः—बहूनि अपत्यानि (सन्ततयः) येषां ते बह्वपत्याः (बहुव्रीहि) जिनके बहुत बाल बच्चे हों। यज्वानः—याज्ञिकाः, यज्ञ

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
करने वाले, यज्+वनिप् । यज्वन् शब्द के रूप चलते हैं—यज्वा यज्वानौ यज्वानः यज्वानम् यज्वानौ यज्वनः । वीर्यवन्तः—तेजस्विनः, पराक्रमवन्तः, वीर्यं विद्यते एषामिति वीर्यवन्तः, वीर्य+मतुप् । अद्यापि—आज तक भी । अप्राप्तप्रतिग्रहा—न प्राप्तः प्रतिग्रहः (दानं) यैः ते अप्राप्तप्रतिग्रहाः (बहुव्रीहि) । (१) दान न लेने वाले अथवा (२) दान न पाने वाले—दोनों ही अर्थ हो सकते हैं, परन्तु "दान न लेने वाले" अधिक उपयुक्त जँचता है । वर्तमान प्रसंग में यही अर्थ मेल खाता है । पुरोहितों को राजा के सामने यह दरशाना है कि ये ब्राह्मण बड़े ही स्वाभिमानी तथा उच्चकोटि के हैं, ये लोग दान लेना घृणित कार्य समझते हैं । इसी से इन्होंने आज तक किसी से दान नहीं लिया । अतः इन्हें दान देना अत्यंत पुण्योत्पादक होगा । स्वर्ग्यम्—स्वर्गदायकम्, स्वर्ग देने वाला, स्वर्गाय हितम् इति स्वर्ग्यम्, स्वर्ग+यत् । आयुष्यम्—आयुर्वर्धकम्, आयु के लिये हितकर, आयुषे हितम् इति आयुष्यम्, आयुस्+यत् । अरिष्टनाशनम्—अरिष्ट—दुर्भाग्य, अरिष्टस्य नाशनम् इति अरिष्टनाशनम् (ष० त०), दुर्भाग्य का नाशक । बहु बहु—बहुत सा (धन) । दापयित्वा—दिलवा कर, दा+णिच्+ल्यप् । तन्मुखेन—उन ब्राह्मणों के द्वारा, तेषां (ब्राह्मणानां) मुखेन इति तन्मुखेन (ष० त०) । उपांशु—एकान्ते, छिपकर । तदेवमहर्निशम्—तत् एवम् अहर्निशम् ।

अहर्निशम्—रात्रिन्दिनम्, अहनि निशि च इति अहर्निशम्, दिन रात । अविदित सुखलेशम्—लेश—जरा भी, थोड़ा भी । सुखस्य लेशः इति सुखलेशः (ष० त०), न विदितः सुखलेशः यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात् तथा, जिसमें सुख का लेशमात्र भी न मिले इस प्रकार जीवन व्यतीत करना । आयासबहुलम्—विपुलक्लेशपूर्वकम् आयासः बहुलः यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात्तथा आयासबहुलम्, क्लेशों से भरा हुआ । अविरलकदर्थनम्—निरंतर-दुःखपूर्वकम् । अविरल—निरन्तर । कदर्थनम्—परेशानी । अविरलं कदर्थनं यस्मिन्

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

कर्मणि तद् यथा स्यात् तथा अविरलकदर्थनम्, निरन्तर परेशानी सहते हुये। नयतः—नी धातु+शतृ प्रत्यय षष्ठी एकवचन, 'नयज्ञस्य' इसका विशेष्य है। "नयतः" का कर्म कारक "जीवनम्" छिपा हुआ है।

नयज्ञस्य—नय-नीति, राजनीति, जानातीति ज्ञः, ज्ञा+क, नयस्य (राजनीतेः) ज्ञः इति नयज्ञः तस्य नयज्ञस्य, राजनीति जानने वाले राजा की। चक्रवर्तिता—चक्रवर्तीपन, चक्रवर्तिन्+तल्। आस्ताम्—दूरे तिष्ठतु (दूर) रहे, आस् धातु लोट् लकार, प्रथम पुरुष एकवचन। स्वमंडल-मात्रम् अपि—स्वमण्डलम् एव स्वमण्डलमात्रम्, अपना राज्य भी। दुरारक्ष्यम्—दुःखेन आरक्षितुं योग्यम् इति दुरारक्ष्यम्, जिसकी बड़ी कठिनता से रक्षा हो सकती हो, यानी अपने राज्य तक की रक्षा करना मुश्किल हो जाता है। दुर्—आ+रक्ष्+यत्। शास्त्रज्ञसमाज्ञातः—शास्त्रज्ञ—राजनीति शास्त्र का जाने वाला, समाज्ञातः—प्रसिद्धः। शास्त्रज्ञः इति समाज्ञातः इति शास्त्रज्ञसमाज्ञातः, "यह राजनीतिशास्त्र का जानने वाला है" इस प्रकार प्रसिद्ध। अतिसन्धातुम्—वञ्चयितुम्, ठगने के लिये, अति+सम्+धा+तुमुन्। अविश्वासः—अप्रतीतिः—न विश्वासः इति अविश्वासः (नञ् तत्पुरुष)। प्रजा के हृदय में इस प्रकार का अविश्वास जम जाता है कि यह राजा जो कुछ देता है या सम्मान करता है या प्रिय वचन बोलता है सो सब ठगने के लिए करता है।

अविश्वास्यता—न विश्वास्यः इति अविश्वास्यः (नञ् तत्पुरुष), तस्य भावः, विश्वास न किया जाना। अलक्ष्म्याः—दारिद्र्यस्य, न लक्ष्मीः इति अलक्ष्मीः तस्याः अलक्ष्म्याः, दारिद्र्यस्य, गरीबी की। यावता नयेन विना—जितनी राजनीति के बिना, पृथग्विनानानाभिस्तृतीयान्यतरस्याम् नियम से विना के योग में नयेन में तृतीया हुई है। यावता भी तृतीया एकवचन का रूप है, नयेन का विशेषण है। यावान् यावन्तौ यावन्तः यावन्तम् यावन्तौ यावतः यावता यावद्भ्याम् यावद्भिः इत्यादि

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

रूप चलते हैं। लोकयात्रा—लोकस्थितिः, जीवनम्, संसार में रहना। सः—नयः, उतनी नीति। लोकतः एव—संसार से ही, लोगों से ही, लोक+तसिल्। सिद्धः—सिद्ध हो जाता है, प्राप्त हो जाता है। तत्र—उसमें, वा उसके लिए।

न शास्त्रेण अर्थः—शास्त्रेण न किमपि प्रयोजनम्, शास्त्र पढ़ने की आवश्यकता नहीं, शास्त्र पढ़ने से कोई लाभ नहीं। स्तनन्धयः अपि—स्तन्यपायी शिशुरपि, स्तन पीने वाला शिशु भी यानी नन्हा सा दुधमुँहा बच्चा भी। तैस्तैः उपायैः—विविधैः उपायैः। लिप्सते—लब्धुम् इच्छति इति लिप्सते, प्राप्त करने की इच्छा (कोशिश) करता है, लभ्+सन्+लट्। तद्—इसलिए। अपास्य—त्यक्त्वा, अप+अस्+ल्यप्। अतियन्त्रणाम्—महत्कष्टम्, अत्यधिक दुःख या परेशानी को, अतिशयिता यन्त्रणा इति अतियन्त्रणा ताम् अतियन्त्रणाम्। अतियन्त्रणाम् अपास्य--अत्यधिक परेशानी को त्याग कर। अनुभूयन्ताम्—अनुभव की जायँ, भोगी जायँ, अनु+भू कर्मवाच्य, लोट् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन, इसका कर्ता है "इन्द्रियसुखानि"। इसका कर्तृवाच्य यों होगा—'भवान् इन्द्रियसुखानि अनुभवतु' अथवा 'त्वम् इन्द्रियसुखानि अनुभव'—तुम इन्द्रिय सुखों को भोगो। यथेष्टम्—इष्टमनतिक्रम्य इति यथेष्टम् (अव्ययीभाव समास), स्वेच्छानुसार।

येऽप्युपदिशन्ति—ये अपि उपदिशन्ति, जो लोग भी यह उपदेश देते हैं। एवम् इन्द्रियाणि जेतव्यानि—अमुक प्रकार से इन्द्रियाँ जीती जानी चाहिएँ, जि+तव्य—जेतव्य। एवम् अरिषड्वर्गः त्याज्यः—इस प्रकार छः शत्रुओं का वर्ग त्यागा जाना चाहिए, त्यज्+ण्यत्=त्याज्य। षण्णां वर्गः इति षड्वर्गः (ष० त०), अरीणां (शत्रूणां) षड्वर्गः इति अरिषड्वर्गः (ष० त०), छः शत्रु ये हैं—(१) काम (२) क्रोध (३) लोभ (४) मोह (५) मद (६) मत्सर। ये छः मनुष्य की आत्मा के परम शत्रु हैं, ये ही बुद्धि को बिगाड़ते हैं। गीता के सोलहवें अध्याय में भगवान् कृष्ण ने कहा है—

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत् त्रयं त्यजेत् ॥

काम क्रोध मद लोभ सब, नाथ नरक के पन्थ । (तुलसीदास)

तात तीनि अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ ।
मुनि विज्ञान ज्ञान निधि करहिं निमिष महँ छोभ ॥ (तुलसीदास)

सामाद्युपायवर्गः—साम आदिः येषां ते सामादयः (बहु०), सामादयश्च ते उपायाः इति सामाद्युपायाः (कर्मधारय), सामाद्युपायानां वर्गः इति सामाद्युपायवर्गः (षष्ठी तत्पुरुष) । साम दान दण्ड भेद—ये ही चार उपाय हैं जिन्हें राजे महाराजे प्रयोग में लाया करते हैं । स्वेषु—आत्मीयेषु जनेषु, अपने लोगों पर । परेषु—शत्रुपक्षीयेषु जनेषु, शत्रु पक्ष के लोगों पर । अजस्रम्—निरन्तरम् । प्रयोज्यः—प्रयोग किया जाना चाहिए, प्र+युज्+यत् । सन्धिविग्रहचिन्तया एव—सन्धि तथा विग्रह (युद्ध) की चिन्ता से ही, सम्+धा+कि=सन्धि । सन्धिश्च विग्रहश्च इति सन्धिविग्रहौ (द्वन्द्व), सन्धिविग्रहयोः चिन्ता इति सन्धि-विग्रहचिन्ता तया सन्धिविग्रहचिन्तया (षष्ठी तत्पुरुष), किस राजा से सन्धि करनी चाहिए, किस राजा से विग्रह (युद्ध) करना चाहिए इत्यादि चिन्ता में । नेयः कालः—समयः यापयितव्यः समय बिताया जाना चाहिए, नी+यत्, अचोयत् सूत्र से नी धातु में यत् प्रत्यय लगा है । मन्त्रिबकैः—धूर्तसचिवैः, मन्त्रिणः बकाः इव इति मन्त्रिबकाः, बगुले के समान धोखेबाज मन्त्री लोगों द्वारा । कुत्सितानि कुत्सितैः सूत्र से समास हुआ है । मनु का वचन है—

अधोदृष्टिः नैष्कृतिकः स्वार्थ-साधनतत्परः ।
शठो मिथ्याविनीतश्च बकवृत्तिचरो द्विजः ॥

युष्मत्तः—आप से, युष्मद्+तसिल् । चौर्यार्जितम् धनम्—स्तेय-प्राप्तं द्रव्यम्—चौर्येण अर्जितम् इति चौर्यार्जितम् (तृतीया तत्पुरुष),
CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

चोरी द्वारा कमाया गया हुआ, चोरस्य भावः कर्म वा चौर्यम् । अर्जितम्—कमाया हुआ, अर्ज्+क्त । युष्मत्तः चौर्यार्जितं धनम्—आप से चोरी द्वारा कमाया हुआ धन । दासीगृहेषु—वेश्याभवनेषु वेश्याओं के घरों में, दासीनां (वेश्यानां) गृहेषु (ष० त०)। भुज्यते—भोगा जाता है, कर्मवाच्य। इसका कर्तृवाच्य होगा—युष्मत्तः चौर्यार्जितं धन दासीगृहेषु एव भुञ्जते। चैते—च एते । के च एते वराकाः—ये बेचारे क्या हैं, इन बेचारों का क्या कहना है । मन्त्रकर्कशाः—मन्त्रे (मन्त्रविषये) कर्कशाः (कठिनव्रतपालनकर्तारः), मन्त्रों के मामलों में बड़े कठिन नियम पालन करते हुए जीवन व्यतीत करने वाले। शास्त्रतन्त्रकाराः—शास्त्रकाराः तन्त्रकाराश्च । शास्त्रकाराः राजनीतिशास्त्रकर्तारः । तन्त्रकाराः तन्त्रग्रन्थकर्तारः, तन्त्र सम्बन्धी ग्रन्थों के बनाने वाले। शुक्र—आङ्गिरस—विशालाक्ष—बाहुदन्तिपुत्र—पराशर प्रभृतयः—शुक्र ने "शुक्रनीति" लिखी है। आङ्गिरस ने 'आङ्गिरसस्मृति' बनाई है जिसे 'बृहस्पति स्मृति' भी कहते हैं। अङ्गिरसः अपत्यं पुमान् आङ्गिरसः अर्थात् बृहस्पतिः, अङ्गिरस्+अण् । विशालाक्ष—शिव । शिव जी ने 'शिवस्मृति' बनाई है। पराशर मुनि ने 'पराशर-स्मृति' बनाई है । शुक्रश्च आङ्गिरसश्च विशालाक्षश्च बाहुदन्तिपुत्रश्च पराशरश्च प्रभृतिः आदिः येषां ते शुक्राङ्गिरस विशालाक्ष-बाहुदन्तिपुत्र-पराशर-प्रभृतयः (बहु०)।

शास्त्रानुष्ठानम्—शास्त्राणाम् अनुष्ठानम् (अनुसरणम्) इति शास्त्रानुष्ठानम् (षष्ठी तत्पुरुष) । तैः अपि—शुक्राङ्गिरस—विशालाक्ष—बाहुदन्तिपुत्र—पराशरैः । प्रारब्धेषु कार्येषु—प्रारम्भ किए हुए कार्यों में, प्र+आ+रभ्+क्त । दृष्टे—प्रथमा द्विवचन, विशेषण है "सिद्ध्यसिद्धी" का, दृश्+क्त+टाप्, दृष्टा दृष्टे दृष्टाः । सिद्धिश्च असिद्धिश्च इति सिद्ध्यसिद्धी (द्वन्द्व) । सिद्ध्यसिद्धी दृष्टे—सफलता तथा असफलता देखी गई हैं; यह कर्मवाच्य है। इसका कर्तृवाच्य होगा "ते प्रारब्धेषु कार्येषु सिद्ध्यसिद्धी दृष्टवन्तः"—उन लोगों ने भी प्रारम्भ किए हुए कार्यों में

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

सफलता तथा विफलता का अनुभव किया है। यानी किसी किसी कार्य में उन्हें सफलता मिली है, किसी किसी कार्य में असफलता भी मिली है। ऐसा नहीं है कि उन्हें सोलहों आने सफलता ही सफलता मिली हो, विफलता कभी हुई ही न हो।

अतिसन्धीयमानाः बहवः—वञ्च्यमाना अनेके पुरुषाः। अति+सम्+धा+कर्मणि शानच्, ठगे जाते हुए बहुत से लोग (देखे जाते हैं)। ननु इदम् उपपन्नं देवस्य—क्या महाराज को ये बातें प्राप्त नहीं हैं अर्थात् आप को ये चीजें प्राप्त हैं। यदुत=यद् उत, उदाहरणार्थ। सर्वलोकवन्द्या जातिः—अखिल लोक समादृतं कुलम्, सर्वे च ते लोकाः इति सर्वलोकाः (कर्मधारय), सर्वलोकैः वन्द्या (वन्दनीया, पूज्या) इति सर्वलोकवन्द्या (तृतीया तत्पुरुष), सारे संसार द्वारा वन्दनीय। जातिः—जन्म, कुलम् वा। अयातयामम्—यामः—उपभोगकालः; न यातः (गतः) यामः यस्य तत् अयातयामम् (बहुव्रीहि), विशेषण है "वयः" का। वयः—उम्र, वयस् शब्द नपुंसकलिंग है, वयः वयसी वयांसि आदि रूप चलते हैं। अयातयामं वयः—अर्थात् नवं वयः, ऐसी उम्र जिसका उपभोग काल (सुख भोगने का समय) निकल नहीं गया है अर्थात् नई उम्र। वपुः—शरीरम्।

अपरिमाणा विभूतिः—अपरिमितम् ऐश्वर्यम्, जिसकी कोई नाप-तौल नहीं है ऐसा ऐश्वर्य, न विद्यते परिमाणं यस्याः सा अपरिमाणा (बहुव्रीहि)। विभूतिः—ऐश्वर्यम्, वि+भू+क्तिन्। तत् सर्वम्—उन सब चीजों को, सर्वलोकवंद्या जाति, नई उम्र तथा दर्शनीय शरीर को। मा कृथा वृथा—व्यर्थ न कीजिए। "न माङ्‌योगे" नियम से "अकृथाः" का 'अ' 'मा' के योग में लुप्त हो गया।

सर्वाविश्वासहेतुना तन्त्रावापेन—तन्त्रं स्वराष्ट्रचिन्ता स्यादावापस्त्वरिचिन्तनम्—कहा कहते हैं 'अपने राष्ट्र के विषय में सोचना, तथा

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

उसकी देखभाल रखना'। आवाप—शत्रु के बारे में चिन्ता करना आवाप कहलाता है। तन्त्रं च आवापश्च इत्यनयोः समाहारः तन्त्रावापः तेन तन्त्रावापेन (द्वन्द्व), ऐसे तन्त्रावाप के द्वारा जो सभी लोगों के अविश्वास रखते हैं ऐसे तन्त्रावाप से अपनी जाति, अपनी उम्र तथा अपने शरीर को व्यर्थ न कीजिए। सर्वेषाम् अविश्वासः इति सर्वाविश्वासः (ष० त०), तस्य हेतुः इति सर्वाविश्वासहेतुः तेन सर्वाविश्वासहेतुना (षष्ठी तत्पुरुष)।

सुखोपभोगप्रतिबन्धिना—विलासानुभूत्यवरोधकेन, प्रतिबन्धी—अड़चन डालने वाला, सुखानाम् उपभोगः इति सुखोपभोगः (ष० त०)। प्रतिबध्नाति इति प्रतिबन्धी, प्रति+बन्ध्+णिनिः (ताच्छील्ये) सुखोपभोगस्य प्रतिबन्धी (अवरोधकः) इति सुखोपभोगप्रतिबन्धी तेन सुखोपभोगप्रतिबन्धिना तन्त्रावापेन, (ष० त०)। सुखों के भोगने में अड़चन पैदा करने वाले तन्त्रावाप से। अथवा सुखोपभोगं प्रतिबध्नाति तच्छीलः इति सुखोपभोगप्रतिबन्धी, तेन (उपपद तत्पुरुष)। बहुमार्गविकल्पनात्—बहवश्च ते मार्गाः इति बहुमार्गाः (कर्मधारय), बहुमार्गाणां विकल्पनम् (विधानम्, रचनम्), इति बहुमार्ग-विकल्पनम् तस्मात् बहुमार्गविकल्पनात् (षष्ठी तत्पुरुष), बहुत से तरीके निर्माण करने (बतलाने) के कारण। तन्त्रावाप अभीष्टसिद्धि के लिए एक नहीं बल्कि अनेक तरीके बतलाता है, कोई एक मार्ग निश्चयपूर्वक नहीं बतलाता। इसलिए पढ़ने वाले के मन में सदा संशय बना रहता है कि हमने अमुक मार्ग का अनुसरण किया है, पता नहीं कार्य सफल होगा या नहीं। शायद हमने दूसरा मार्ग अनुसरण किया होता तो अवश्य सफलता मिलती—इत्यादि शंकाएँ सर्वदा बनी रहती हैं। सर्वकार्येषु—सभी कामों में, सर्वाणि च तानि कार्याणि इति सर्वकार्याणि तेषु सर्वकार्येषु। अमुक्तसंशयेन तन्त्रावापेन—ऐसे तन्त्रावाप द्वारा जिसमें से संशय नहीं गया रहता यानी जिसमें सदा संशय बना रहता है, न मुक्तः संशयः यस्मिन् सः अमुक्त-संशयः तेन अमुक्तसंशयेन (बहु०), विशेषण है "तन्त्रावापेन" का।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

सर्वकार्येषु अमुक्तसंशयेन तन्त्रावापेन—सभी कार्यों में जो संशय से युक्त हैं ऐसे तन्त्रावाप द्वारा, किसी भी कार्य में जो संशय से मुक्त नहीं है ऐसे तन्त्रावाप द्वारा।

सन्ति हि ते दन्तिनां दश सहस्राणि, हयानां लक्षत्रयम्, अनन्तं च पादातम्। अपि च पर्णान्येव हेमरत्नैः कोशगृहाणि। सर्वश्चैव जीवलोकः समग्रमपि युगसहस्रं भुञ्जानो न ते कोष्ठागाराणि रेचयिष्यति। किमिदमपर्याप्तं[1] यदन्यार्जनायासः क्रियते। जीवितं हि नाम जन्मिनां चतुःपञ्चान्यहानि। तत्रापि भोगयोग्य-मल्पाल्पं वयःखण्डम्। अपण्डिताः पुनरर्जयन्त एव ध्वंसन्ते। नार्जितस्य[2] वस्तुनः लवमप्यास्वादयितुमीहन्ते। किं बहुना। राज्य-भारं भारक्षमेष्वन्तरङ्गेषु भक्तिमत्सु समर्प्य, अप्सरःप्रतिरूपा-भिरन्तःपुरिकाभी रममाणा गीतसंगीतपानगोष्ठीश्च यथर्तु बध्नन् यथार्हं कुरु शरीरलाभम्' इति पञ्चाङ्गीस्पृष्टभूमिरञ्जलिचुम्बितचूडशिखर-मशेत। प्राहसीच्च प्रीतिफुल्ललोचनोऽन्तःपुरप्रमदाजनः। जननाथश्च सस्मितम् 'उत्तिष्ठत, ननु हितोपदेशाद् गुरवो भवन्तः। किमिति गुरुत्वविपरीतमनुष्ठितम्, इति तमुत्थाप्य क्रीडानिर्भरमतिष्ठत्।

हिन्दी अनुवाद—क्योंकि आपके पास दस हजार हाथी हैं, तीन लाख घोड़े हैं, और असंख्य पैदल सिपाही हैं। और भी, आपका खजाना सुवर्ण तथा रत्नों से भरा है। सारा संसार हजारों युगों तक खाता हुआ भी आपके भंडारघरों को खाली नहीं करेगा (खाली नहीं कर सकता)। क्या यह अपर्याप्त (काफी नहीं) है कि और अधिक उपार्जन करने के लिये प्रयत्न किया जाय (शब्दार्थ "प्रयत्न किया जाता है")।

[*स्पष्टार्थ*—क्या आपका धन काफी नहीं है कि आप और अधिक धन उपार्जन करने के लिये प्रयत्न करेंगे]।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

१. जन्मवताम् इति क्वचित् अधिकः पाठः। २. वसुनः इत्यपि क्वचित् पाठः।

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

यह बात तो प्रसिद्ध ही है कि प्राणियों का जीवन चार पाँच दिन का होता है (अर्थात् मनुष्यजीवन बहुत ही छोटा होता है)। उसमें भी, जो वयः खंड (उम्र का जो हिस्सा) भोगविलास भोगने योग्य होता है वह अल्पाति-अल्प होता है। फिर, मूर्ख लोग कमाते ही कमाते मर जाते हैं। वे उपार्जित धन का अणुमात्र भी (अंश) भोगना (चाखना) नहीं चाहते। अधिक कहने से क्या लाभ। भार वहन करने में समर्थ, भक्तिमान्, तथा अन्तरंग (विश्वासी) व्यक्तियों को (राज्य-भार) सौंप कर अप्सरा के समान सुन्दर, अन्तःपुर की स्त्रियों के साथ रमण करते हुये, ऋतु के अनुसार गाना-बजाना-शराब-मित्र गोष्ठी (मित्र-मंडली) करते हुये, शरीर लाभ (मनुष्य जन्म) को यथायोग्य (कृतार्थ) करें।

[*स्पष्टार्थ*—यथर्तु जैसी ऋतु हो उसके अनुसार, अर्थात् जब गाने का समय हो तब गाना सुनिये, जब बाजा सुनने का समय हो तब बाजा सुनिये, जब शराब पीने का समय हो तब शराब पीजिये, जब मित्रों की मंडली में गप्प सड़ाका तथा हँसी-ठट्ठा करने का समय हो तो गप्प-सड़ाका एवं हँसी-ठट्ठा कीजिये।]

यथार्हम्—यथायोग्य जिस चीज के योग्य यह मनुष्यजन्म है उसके योग्य इसे कीजिये। विहारभद्र के कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य-जन्म इन्हीं चीजों के योग्य है—गीत-संगीत-पान-गोष्ठी यथा रमणी-प्रसंग के ही लिये यह शरीर बनाया गया है, इसलिये इस शरीर से इन सब चीजों को भोग लीजिये।]

ऐसा कह कर, पाँचों अंगों से भूमि का स्पर्श करता हुआ, सिर पर अंजुली लगाकर (हाथ जोड़कर), विहारभद्र बहुत देर तक लेटा रहा। प्रसन्नता के कारण खुली हुई आँखों वाली स्त्रियाँ हँस पड़ीं। मुस्कु-राकर "उठिए, हितकर बात का उपदेश करने के कारण (सिखाने के कारण) आप गुरु हैं; (आपने) क्यों गुरुत्व (बड़प्पन) के विरुद्ध

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

आचरण किया" ऐसा कह कर, उसे उठाकर, (अनन्त वर्मा) भोग-विलास के रस (आनन्द) में मग्न हो गया ।

टिप्पणी—दन्तिनाम्—हस्तिनाम्, हाथियों का । हयानाम्—अश्वानाम्, घोड़ों का । अनन्तम्—असंख्यम्, न विद्यते अंतः यस्य तत् अनन्तम् (बहुव्रीहि), अनगिनती । पादातम्—पादाभ्याम् अतति इति पदातिः (पैदल सिपाही); पदातीनां समूहः पादातम्, पदाति+अण् (समूहार्थे), पैदल सिपाहियों का समूह (पलटन) । कोश-गृहाणि—निधिस्थानानि, खजाने के घर, कोशानां गृहाणि इति कोशगृहाणि (ष० त०) । हेमरत्नैः—सुवर्ण-हीरकमाणिक्यादिभिः, हेम—सुवर्ण; रत्न—हीरक, जवाहरात; हेमानि च रत्नानि च इति हेमरत्नानि तैः हेमरत्नैः (द्वन्द्व), सोने तथा रत्नों से । जीवलोकः—जीवानां लोकः इति जीवलोकः (ष० त०), जीवों का लोक अर्थात् संसार ।

समग्रम् अपि—निखिलम्, सम्पूर्णम्, सारे । युगसहस्रम्—अनन्त कालपर्यन्तम्, हजारों युगों तक, युगानां सहस्रम् इति युगसहस्रम् (ष० त०) । "कालाध्वनोरत्यंतसंयोगे द्वितीया" नियम से युगसहस्रम् में द्वितिया हुई है । भुञ्जानः—भक्षयन्—खाता हुआ, भुज्+शानच्; विशेषण है "जीवलोकः" का । कोष्ठागाराणि—धान्यगृहाणि, कोष्ठ—कोठार, भंडारा । आगार—घर । कोष्ठानाम् आगाराणि इति कोष्ठागाराणि (षष्ठी तत्पुरुष), कोठार (भंडारे) के घर । न रेचयिष्यति—न रिक्तानि करिष्यति, नहीं खाली करेगा, (नहीं खाली कर सकता) । अन्यार्जनाय—अधिक धनोपार्जनाय, और दूसरे के उपार्जन के लिये, अर्थात् और अधिक धन उपार्जन के लिए, अन्यस्य (अधिकस्य धनस्य) अर्जनम् इति अन्यार्जनम् तस्मै अन्यार्जनाय (षष्ठी तत्पुरुष) । अर्जन—अर्जधातु+ल्युट् आयासः—क्लेशः, प्रयत्नः, दुःखम् । जीवितम्—जीवनम्, जीव्+क्त (नपुंसके भावे क्तः), यहाँ क्त प्रत्यय से भाववाचक संज्ञा बनी है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

जन्मिनाम्—प्राणिनाम्, प्राणियों का, जन्म एषामस्ति इति जन्मी, जन्मन्+इति=जन्मिन्, जन्मी जन्मिनौ जन्मिनः। जन्मिनम् जन्मिनौ जन्मिनः इत्यादि रूप चलते हैं। जन्मिनाम्—षष्ठी का बहुवचन है। कहीं कहीं पर पाठ है "जन्मवताम्"। उसका भी अर्थ है "प्राणिनाम्"। चतुःपञ्चानि—चत्वारि पञ्च वा परिमाणम् संख्या वा एषाम् इति चतुःपञ्चानि, चार या पाँच। अहानि—दिनानि, द्वितीया, 'कालाध्वनोरत्यंतसंयोगे द्वितीया' से "अहानि" में द्वितीया हुई है। भोगयोग्यम्—सुखानुभवसमर्थम्, भोग करने में समर्थ। भोगस्य (सुखोपभोगस्य) योग्यम् (क्षमम्) इति भोगयोग्यम् (षष्ठी तत्पुरुष)। अल्पाल्पम्—अत्यल्पम्, बहुत थोड़ा, अल्पात् अल्पम् इति अल्पाल्पम् अर्थात् अत्यन्तम् अल्पम्। वयःखण्डम्—आयुर्भागः, आयु का भाग, वयस्—उम्र, खंड-टुकड़ा, हिस्सा। वयसः (आयुषः, जीवनकालस्य) खंडम् इति वयःखडम् (ष० त०)।

अपण्डिताः—मूर्खाः, न पंडिताः इति अपण्डिताः (नञ् तत्पुरुष) ध्वंसंते—म्रियन्ते, मर जाते हैं। वसुनः—धनस्य, धन का। 'वसु' माने 'धन'। वसु वसुनी वसूनि आदि रूप चलते हैं। वस्तुनः—चीज का। लवम् अपि—अणुमात्रम् अपि, थोड़ा-सा भी अंश। आस्वादयितुम्—उपभोक्तुम्। भोगने के लिये, आ+स्वद्+णिच्+तुम्। न ईहन्ते—न इच्छन्ति, नहीं चाहते। किं बहुना—अधिककथनेन न किमपि प्रयोजनम्, बहुत कहने से क्या लाभ। भारक्षमेषु—भार-वहन-समर्थेषु राजपुरुषेषु, राज्य का भार उठाने में जो समर्थ हों ऐसे राजपुरुषों के ऊपर, भारे क्षमाः इति भारक्षमाः तेषु भारक्षमेषु। अंतरङ्गभूतेषु—अन्तरंग—अन्दर का अंग, अन्तः अंगम् इति अन्तरंगम्, अन्तरंगं भूताः इति अन्तरंगभूताः तेषु इति अन्यरंगभूतेषु—जो अन्दर के अंग हो गए हैं यानी जो विश्वास के पात्र बन गए हैं उनमें या उन पर। अर्थात् [illegible] (अन्तरंग भूत हो गए)। समर्प्य—

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

स्थापयित्वा, रखकर । अप्सरः-प्रतिरूपाभिः—देवांगनातुल्याभिः, अप्सराओं की सी जिनमें सुन्दरता है ऐसी स्त्रियों के साथ। अप्सरस्—अप्सराएँ। प्रतिरूप—सौन्दर्य । अप्सराओं के समान सुन्दर, अप्सरसाम् इव प्रतिरूपम् यासां ताः अप्सरःप्रतिरूपाः ताभिः अप्सरःप्रतिरूपाभिः (बहुव्रीहि) । अन्तःपुरिकाभिः—प्रासादान्तर्निवासिनीभिः, अन्तःपुर (महल) की स्त्रियों के साथ। अन्तःपुरिकाभिः+रममाणः=अन्तःपुरिकाभी रममाणः । सन्धि ध्यान देने योग्य है । "ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः" सूत्र से "भिः" के विसर्ग-स्थानीय र् का लोप हो गया और विसर्ग के पूर्ववर्ती "भि" में स्थित "इकार" को दीर्घ हो गया।

रममाणः—विहारं कुर्वन्, रमण करते हुए, रम्+शानच् । पान—मदिरा-सेवनम्, शराब पीना, पा+ल्युट् । गोष्ठी—मंडली । गीतं च संगीतं च पानं च इति गीतसंगीतपानानि (द्वन्द्व), तेषां गोष्ठ्यः (मंडल्यः) इति गीतसंगीत-पान-गोष्ठ्यः (ष० त०) ताः गीतसंगीतपानगोष्ठीः (द्वितीया बहुवचन है)। यथर्तु—यथा+ऋतु, ऋतुम् अनतिक्रम्य इति यथर्तु (अव्ययीभाव समास), ऋतु (समय) के अनुसार अर्थात् जब गीत के लिए उपयुक्त ऋतु हो तो गीत गाइए, सुनिए। जब मदिरा-पान के लिये उपयुक्त समय हो तब मदिरापान कीजिए तथा औरों को भी कराइए। जब संगीत (बाजा वगैरह) के लिए उपयुक्त समय हो तब बाजा बजाइये, एवं औरों से बजवाइए और आप सुनिए। बध्नन्—कुर्वन्, बाँधते हुए, करते हुए, बन्ध् धातु+शतृ प्रत्यय। यथार्हम्—यथा अर्हः (योग्यत्वं साफल्यम् इति यावत्) यस्य सः यथार्हः तम् यथार्हम् (बहुव्रीहि), विशेषण है "शरीरलाभम्" का। शरीरलाभं यथार्हं कुरु—शरीर लाभ को यथायोग्य (सफल) बनाओ, यानी शरीरलाभ को ऐसा बनाओ जिसमें यह सफल हो जाय। पञ्चाङ्गीस्पृष्टभूमिः—पञ्चानाम् अंगानां समाहारः इति पञ्चांगी (द्विगु), दोनों घुटने, दोनों भुजाएँ तथा मस्तक—ये पञ्चांग कहलाते हैं। पञ्चाङ्ग्या स्पृष्टा भूमिः येन सः पञ्चाङ्गी-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

स्पृष्टभूमिः (बहु०), पाँचों अंगों से छुई गई थी भूमि जिसके द्वारा ऐसा वह विहार-भद्र यानी पाँचों अंगों से भूमि को छूता हुआ। अञ्जलिचुम्बितचूडः—अंजलि, अँजुली । चूडा—सिर, मस्तक। अञ्जलिना चुम्बिता चूडा (मौलिः) येन सः अञ्जलिचुम्बितचूडः (बहु०), अँजुली से चूमा (छुआ) गया था मस्तक जिसके द्वारा ऐसा विहार भद्र । यानी मत्थे पर अंजुली रखकर (हाथ जोड़कर) चिरम्—दीर्घकालम् यावत् । अशेत—भूमौ पतितोऽतिष्ठत्, पड़ा (लेटा) रहा। अदादिगणी शी धातु का लङ् लकार का प्रथम पुरुष का एकवचन है। यह धातु आत्मनेपदी है। शेते शयाते शेरते, शेषे शयाथे शेध्वे, शये शेवहे शेमहे आदि रूप चलते हैं।

प्राहसीत् च—हँस पड़ा, प्र+हस् लुङ् (सामान्यभूत) प्रथमपुरुष एक वचन । प्रीतिफुल्ललोचनः—प्रहर्षविकसितनेत्रः,—प्रसन्नता के कारण खिले थे नेत्र जिनके । प्रीत्या (प्रसन्नतया) फुल्लानि (प्रसन्नानि) लोचनानि यस्य सः प्रीतिप्रफुल्ललोचनः प्रमदाजनः (बहुव्रीहि), प्रसन्नता के कारण खिल गए थे नेत्र जिनके ऐसी स्त्रियाँ । फुल्ल—फुल्ल् धातु+क्त । प्रमदानां जनः इति प्रमदाजनः (ष० त०), स्त्रीसमूहः। सस्मितम्—ईषद्धासपूर्वकम्, मुस्कुराहट के साथ, विद्यमानं स्मितं यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात् तथा इति सस्मितम् ।

हितोपदेशाद्—हितकर-वस्तु-शिक्षादानात्, हितस्य उपदेशः इति हितोपदेशः तस्मात् (हितोपदेशात्) (ष० त०), हितकारी बातों के उपदेश देने के कारण । हेतौ पञ्चमी । भवन्तः गुरवः—आप बड़े हैं। किमिति—कस्मात् कारणात्, क्यों । गुरुत्वविपरीतम्—गुरुत्व विरुद्धम्, बड़प्पन के विरुद्ध, गुरुत्वस्य विपरीतम् इति गुरुत्वविपरीतम् (ष० त०)। उत्थाप्य—उत्तोल्य, उठाकर, उत्+स्था+णिच्+ल्यप् । क्रीडारस-निर्भरमतिः—भोगानन्दनिमग्नचेताः, क्रीडायाः (विलासोपभोगस्य) रसः (स्वादः आनन्दः) इति क्रीडारसः (ष० त०), तस्मिन् निर्भरा

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

(निमग्ना) मतिः यस्य सः क्रीडारसनिर्भरमतिः (बहु०) विलासोपभोग-में निमग्न थी बुद्धि (चित्त) जिसकी ऐसा राजा।

अथैतेषु दिनेषु भूयो भूयः प्रस्तुतेऽर्थे प्रेर्यमाणो मन्त्रिवृद्धेन, वचसाऽभ्युपेत्य मनसैवाचित्तज्ञ इत्यवज्ञातवान्। अथैवं मन्त्रिणा मनस्यभूत्—अहो मे मोहाद् बालिश्यम्। अरुचितेऽर्थे चोदयन्नर्थीवाहिंगतोऽहमस्य हास्यो जातः। स्पष्टमस्य चेष्टानामयथापूर्व्यम्। तथा हि। न मां स्निग्धं पश्यति, न स्मितपूर्वं भाषते, न रहस्यानि विवृणोति, न हस्ते स्पृशति, न व्यसनेष्वनुकम्पते, नोत्सवेष्वनुगृह्णाति, न विलोभनवस्तु[1] प्रेषयति, न मत्सुकृतानि प्रगणयति, न मे गृहवार्तां पृच्छति, न मत्पक्षान्प्रत्यवेक्षते, न मामासन्नकार्येष्वभ्यन्तरीकरोति, न मामन्तःपुरं प्रवेशयति। अपि च मामनर्हेषु कर्मसु नियुङ्क्ते, मदासनमन्यैरवष्टभ्यमानमनुजानाति, मद्वैरिषु विश्रम्भं दर्शयति, मदुक्तस्योत्तरं न ददाति, मत्समानदोषान्विगर्हति, मर्मणि मामुपहसति, स्वमतमपि मया वर्ण्यमानं प्रतिक्षिपति, मदर्हाणि वस्तूनि मत्प्रहितानि नाभिनन्दति, नयज्ञानां स्खलितानि मत्समक्षं मूर्खैरुद्घोषयति। सत्यमाह चाणक्यः—'चित्तज्ञानानुवर्तिनोऽनर्था अपि प्रियाः स्युः। दक्षिणा अपि तद्भावबहिष्कृता द्वेष्या भवेयुः' इति। तथापि का गतिः। अविनीतोऽपि न परित्याज्यः पितृपैतामहैरस्माद्वंशैरयमधिपतिः। अपरित्यजन्तोऽपि कमुपकारमश्रूयमाणवाचः कुर्मः। सर्वथा नयज्ञस्य वसन्तभानोरश्मकेन्द्रस्य हस्ते राज्यमिदं पतितम्। अपि नामापदो भाविन्यः प्रकृतिस्थमेनमापादयेयुः। अनर्थेषु सुलभव्यलीकेषु क्वचिदुत्पन्नोऽपि द्वेषः सद्वृत्तमस्मै न रोचयेत्। भवतु। भविता तावदनर्थः। स्तम्भितपिशुनजिह्वो यथाकथञ्चिदभ्रष्टपदस्तिष्ठेयम्' इति।

हिन्दी अनुवाद—इन दिनों, प्रस्तुत (हाथ में लिए हुए) कार्य के लिए बार बार वृद्ध मन्त्री (वसुरक्षित) द्वारा प्रेरित किया जाता हुआ

१. विलोभनवस्तूनि इति क्वचित् पाठः।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

52973 Suman

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

वह राजा, वाणी द्वारा स्वीकार कर, पर मन में यह समझकर कि "यह मन्त्री (मेरे) हृदय (की बातों) को नहीं जानता", उस (मन्त्री) का अनादर करने लगा। तब मन्त्री के मन में ऐसा भाव (पैदा) हुआ "अफसोस, अज्ञान के कारण मेरी (यह) मूर्खता! (इसको) अरुचिकर (अच्छा न लगने वाले) कार्य के लिए प्रेरणा करता हुआ मैं, भिखमंगे (अर्थी) के समान, इसका द्वेष्य (शत्रु) बनकर हँसी का पात्र हो गया हूँ। यह तो स्पष्ट ही है कि इसके व्यवहार पहिले के से नहीं रह गए। उदाहरणार्थ—(अब यह) मुझे प्रेम-पूर्वक नहीं देखता, मुझसे मुस्कुरा कर नहीं बोलता, (मुझसे) गुप्त बातों को नहीं खोलता। मुझे हाथ पर नहीं छूता। (मेरे) दुःखों में (मेरे ऊपर) अनुकम्पा (दया) नहीं करता। उत्सवों में (मेरे ऊपर) अनुग्रह नहीं करता। (मेरे लिए) लुभाने वाली चीजें नहीं भेजता, मेरे किए हुए अच्छे कामों को नहीं गिनता (मानता), मेरे घर की बात (घर का हाल चाल) नहीं पूछता, मेरे पक्ष के लोगों की ओर नहीं देखता, अपने निकटस्थ कार्यों में (मुझे) नहीं शामिल करता (यानी मेरा विश्वास नहीं करता)। मुझे महल में नहीं घुसने देता।

और भी। मुझे अयोग्य कार्यों में लगाता है। मेरे आसन पर अन्य लोगों द्वारा दखल किए जाने की आज्ञा देता है। मेरे शत्रुओं पर विश्वास दिखलाता है। मेरी कही हुई बात का उत्तर नहीं देता। (मेरे समान निर्दोष लोगों की निन्दा करता है)। मर्मच्छेदी बातें (दिल में चुभने वाली बातें) कह कर मेरी हँसी उड़ाता है। मेरे द्वारा वर्णित किए जाते हुए (अर्थात् वर्णन किए जाने पर) अपने मत को भी तिरस्कार करता है (काट देता है)। मेरी भेजी हुई बहुमूल्य वस्तुओं का स्वागत नहीं करता (स्वीकार नहीं करता)। राजनीतिज्ञों के दोषों को मेरे सामने मूर्खों द्वारा घोषणा करवाता है।

चाणक्य ने सच कहा है कि (राजा के) चित्त को पहिचान कर, (राजा

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

55784 (55683) Anil 56033

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

की चित्तवृत्ति के अनुसार) चलने वाले लोग, अनर्थकारी होते हुए भी, राजा को) प्यारे होते (लगते) हैं, परन्तु (राजा के भाव या चित्तवृत्ति) के विरुद्ध काम करने वाले लोग, निपुण होते हुए भी, (उसके) द्वेष्य (शत्रु) हो जाते हैं। तो भी (आखिरकार) क्या चारा है। अविनीत (अशिष्ट) होने पर भी यह अधिपति (राजा), पिता पितामह से (मन्त्री बनते चले आए हुए) मेरे द्वारा त्याज्य नहीं है। (परन्तु) जब हमारी बातें सुनी ही नहीं जातीं तो, (इसे) न छोड़ते हुए भी, हम (इसका) क्या उपकार कर सकते हैं। सब प्रकार से यह राज्य अश्मक देश के नीतिवेत्ता राजा वसन्तभानु के हाथ में चला जायगा (शब्दार्थ—"चला गया")। मैं आशा करता हूँ (अपि नाम) (अथवा सम्भव है कि) भावी (आगे आने वाली) आपदाएँ इसे प्रकृतिस्थ (होश-हवास-वाला) बना दें। (परन्तु यह भी सम्भव है कि), जिनमें दुःख मिलना स्वाभाविक होता है ऐसे अनर्थों (बुराइयों) की ओर से पैदा हुई भी घृणा इसे सदाचार अच्छा न लगने दे। (सदाचार में रुचि पैदा न कर सके यानी सम्भव है कि उन विपत्ति-जनक अनर्थों की ओर से घृणा पैदा होने पर भी इसकी रुचि सदाचार की ओर न जाय)। खैर, अनर्थ (खराबी) तो होगा (ही)। चुगुल-खोरों की जीभ को दबाकर (या अपनी इस दुष्ट जीभ को शान्त रख कर) मैं, किसी प्रकार, अपना पद खोए बिना, (इस स्थान पर) बना रहूँ।

अविनीतः अपि न परित्याज्यः पितृपैतामहैः अस्मादृशैः अयम् अधिपतिः—यहाँ जो "पितृपैतामहैः" शब्द आया है उसके दो अर्थ हो सकते हैं। (१) इसके पिता तथा पितामह के समय से, मैं मंत्री के पद पर चला आया हूँ। (२) दूसरा अर्थ यह हो सकता है कि, मेरा मंत्रित्व (मंत्रिपद) मेरे ही जीवन से नहीं प्रारम्भ हुआ है, प्रत्युत यह मंत्रिपद मेरे पिता तथा पितामह के समय से चला आ रहा है। तात्पर्य यह कि हमारा मंत्रिपद हमारे बापदादों के समय से चला आया है—मौरूसी है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

अपरित्यजन्तोऽपि कम् उपकारम् अश्रूयमाणवाचः कुर्मः—यदि हम इसको न भी छोड़ें, और इसके दरबार में बने रहें, तो भी हम इसकी क्या भलाई कर सकते है ? अथवा इसकी कुछ भी भलाई नहीं कर सकते क्योंकि यह व्यक्ति हमारी कोई भी बात नहीं सुनता।

अनर्थेषु सुलभव्यलीकेषु क्वचित् उत्पन्नोपि द्वेषः सद्वृत्तमस्मै न रोचयेत्—अनर्थों (बुराइयों) में व्यलीक (दुःख, शोक) मिलना बहुत सुलभ तथा प्रकृतिक होता है, यानी जो अनर्थ करता है उसे अवश्य दुःख भोगने पड़ते हैं। यह तो हुआ 'अनर्थेषु सुलभव्यलीकेषु' का अर्थ। जब इसे दुःख झेलने पड़ेंगे, तब इसे उन अनर्थों (बुरे कार्यों) के प्रति द्वेष (घृणा) पैदा होगी, और यह अनर्थ करना छोड़ देगा। मंत्री वसुरक्षित फिर भी आशंका करता है कि मान लिया इसे उन बुराइयों की तरफ से घृणा पैदा हो गई। पर कौन जाने, घृणा पैदा हो जाने पर भी यह सद्वृत्त (सदाचार) की तरफ न झुके, और सदाचार इसे अच्छा न लगे।

स्तम्भितपिशुनजिह्वः—विद्वानों द्वारा इसका भी दो अर्थ लगाया जाता है (१) पिशुना (क्षुद्रा) चासौ मदीया जिह्वा च इति पिशुन जिह्वा (कर्मधारय), मदीया पिशुनजिह्वा, स्तम्भिता पिशुनजिह्वा येन सः स्तम्भित-पिशुनजिह्वः (बहुव्रीहि), अपनी इस नीचजिह्वा को रोककर (दबाकर)। (२) दूसरा अर्थ यह है—पिशुनानां जिह्वा इति पिशुनजिह्वा (ष० त०), चुगलखोरों की जीभ। स्तम्भिता पिशुनजिह्वा येन सः स्तम्भितपिशुनजिह्वः (बहुव्रीहि), मैं चुगलखोरों की जीभ को दबाकर (यहाँ अपने पद पर बना रहूँ), यानी ऐसा व्यवहार करूँ कि चुगलखोरों को चुगली करने का अवसर ही न मिले। अथवा चुगलखोरों को इस प्रकार अपनी तरफ मिलाए रहूँ कि वे चुगली ही न करें।

टिप्पणी—भूयः भूयः—पुनः पुनः, बारम्बार। प्रस्तुते अर्थे—उपदिष्टे विषये (अथवा प्रस्तुते कार्ये, लिये हुये कार्यों) (कार्य के लिए)।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

प्रेर्यमाणः—प्रेरित किया जाता हुआ, प्र+ईर्+कर्मणि शानच् । प्रस्तुते अर्थे प्रेर्यमाणः—उपदिष्टे विषये चोद्यमानः, प्रकृत कार्य को करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता हुआ, (उभाड़ा जाता हुआ)। मंत्रिवृद्धेन—पुराणामात्येन । मन्त्रिषु मन्त्रिणां वा वृद्धः इति मन्त्रिवृद्धः तेन मन्त्रिवृद्धेन इसका सम्बन्ध "प्रेर्यमाणः" के साथ है । वचसा—वाण्या, वाणी से । अभ्युपेत्य—स्वीकृत्य, स्वीकार करके, अभि+उप+इण्+ल्यप् । वचसा अभ्युपेत्य—वाणी से स्वीकार कर (परन्तु मन में मन्त्री को बेवकूफ समझ कर) । अचित्तज्ञः—मम प्रवृत्त्यनभिज्ञः, जानाति इति ज्ञः, चित्तस्य ज्ञः इति चित्तज्ञः (ष० त०), चित्त की वृत्ति को समझने वाला; चित्तज्ञः इति अचित्तज्ञः (नञ् तत्पुरुष), चित्त की वृत्ति को न समझने वाला । राजा ने मन में कहा—यह मन्त्री महा बेवकूफ है, मेरे चित्तकी वृत्ति को बिलकुल नहीं समझता । (ज्ञः—ज्ञ+क, "इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः" सूत्र से ज्ञा धातु के बाद क प्रत्यय लगा है) । अवज्ञातवान्—तिरस्कृतवान्, अपमानं कृतवान्, तिरस्कार किया, अव+ज्ञा+क्तवतु । मोहात्—अज्ञानात्, मूर्खता के कारण । बालिश्यम्—मूर्खत्वम्, 'बालिश' कहते हैं 'मूर्ख' को । बालिशस्य भावः कर्म वा बालिश्यम् । बालिश+ष्यञ् । अरुचिते अर्थे—न रुचितः (प्रियः) इति अरुचितः तस्मिन् अरुचिते (नञ् तत्पुरुष) । अर्थे—अनभीष्टे कार्ये । ऐसे कार्य के लिये जो इसे अच्छा नहीं लगता । चोदयन् (अहम्)—प्रेरयन्, प्रेरणा करता हुआ (मैं) । अद्विगतः—द्वेष्यः, द्वेष (क्रोध अथवा घृणा) का भाजन । "द्वेष्योऽद्विगत उच्यते" ।

हास्यः—परिहासविषयः, हँसी का पात्र, हस्+ण्यत् । स्पष्टम्—व्यक्तमिदम्, जाहिर है, विशेषण है "आयथापूर्व्यम्" का । चेष्टानाम्—व्यवहाराणाम्, क्रियाओं अथवा कार्यों की । आयथापूर्व्यम्—पूर्वापरवैपरीत्यम्, पूर्वम् अनतिक्रम्य इति यथापूर्वम् (अव्ययी) न यथापूर्वम् इति अयथापूर्वम् (नञ् तत्पु०), अयथापूर्वस्य भावः इति आयथापूर्व्यम्, अयथापूर्व+ष्यञ्, जैसा पहिले था वैसा न होना । पहिले की सी हालत

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

का न होना। अस्य चेष्टानाम् आयथापूर्व्यम् स्पष्टम्—इसके व्यवहारों की अयथापूर्वता (विपरीतता) स्पष्ट ही है। तथाहि—उदाहरणार्थम्। स्निग्धम् यथा स्यात् तथा—प्रेमपूर्वकम्। स्मितपूर्वम्—स्मितं पूर्वं यस्मिन् कर्मणि तद् तथा स्यात् तथा इति स्मितपूर्वम्, मुस्कुराहट के साथ। रहस्यानि—गोप्यानि, भेद की बातें, गुप्त बातें,। न विवृणोति—न उद्घाटयति, नहीं बतलाता, (छिपाए रहता है)। व्यसनेषु—मम दुःखेषु, मेरी विपत्तियों में। न अनुकम्पते—न दयते, दया नहीं दिखलाता; सहानुभूति नहीं दिखलाता। विलोभनवस्तूनि—हृदयाकर्षक-सामग्रीः, विलोभनानि च तानि वस्तूनि इति विलोभनवस्तूनि (कर्मधा०), लुभाने वाली वस्तुएँ। सुकृतानि—उत्तमकार्याणि, उत्तम कार्यों को। शोभनानि कृतानि इति सुकृतानि। न प्रगणयति—न मन्यते, नहीं गिनता, जरा भी नहीं मानता। पक्ष्यान्—मत्समर्थकान्, पक्ष के लोगों को, पक्षे भवाः पक्ष्याः। पक्ष्य—पक्ष+यत्।

"पक्ष्यान्" में "प्रति" के योग में "अभितः परितः समया निकषा हा प्रति योगेपि" से द्वितीया हुई है। न अवेक्षते—नहीं देखता है। आसन्नकार्येषु—उपस्थितकर्मसु, निकटतम कामों में अर्थात् गोपनीय कार्यों में, आसन्नानि च तानि कार्याणि इति आसन्नकार्याणि तेषु आसन्न-कार्येषु (कर्मधारय), ऐसे कार्यों मे जिनसे उसका बहुत घना सम्बन्ध है, जो उसके हृदय के अन्दर रहा करते हैं, अर्थात् जो बिलकुल वैयक्तिक हैं। न अभ्यन्तरीकरोति—न नियोजयति अथवा न विश्वसिति, विश्वास नहीं करता। अनर्हेषु—अनुचितेषु। मदासनम्—मेरे आसन को, मम आसनम् इति मदासनम् (षष्ठी तत्पुरुष)। अवष्टभ्यमानम्—आक्र-म्यमाणम्, बलात् गृह्यमाणम्, दखल किया जाता हुआ, अव+स्तम्भ्+कर्मणि शानच्। अनुजानाति—अनुमोदते, स्वीकृति दे देता है, अनु+ज्ञा लट् प्रथम पुरुष एकवचन। मद्वैरिषु—"वैरिन्" शत्रु। वैरी वैरिणौ वैरिणः। मम वैरिणः इति मद्वैरिणः तेषु मद्वैरिषु, मेरे शत्रुओं में। विश्र-म्भम्—विश्वासम्। मत्समानदोषान्—मादृशानां जनानां छिद्राणि,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

मम समानाः मत्समानाः (ष० त०), मेरे समान पुरुष। मत्समानानां दोषाः इति मत्समानदोषाः (ष० त०), तान् मत्समानदोषान्, मेरे जैसे लोगों के दोषों को। विगर्हयति—निन्दति। मर्मणि—मर्मन् के रूप मर्म, मर्मणी मर्माणि, आदि चलते हैं। 'मर्मणि' सप्तमी के एक वचन का रूप है, मर्म में, छिद्रों (दोषों) पर। मर्मणि माम् उपहसति—मम छिद्राणि दृष्ट्वा मम हास्यं करोति, मर्म पर हँसता है; मर्म पर हँसना वह होता है जिसे सुनकर हँसे जाने वाले व्यक्ति का कलेजा छिद जाता है। स्वमतम्—स्वसिद्धान्तम् स्वस्य मतम् इति स्वमतम् (ष० त०), अपनी राय को; जो उसकी राय हो उसी को। वर्ण्यमानम्—कथ्यमानम्, वर्णन किया जाता हुआ, वर्ण्+शानच्, कर्मवाच्य में। प्रतिक्षिपति—तिरस्करोति, अवगणयति, आक्षेप करता है। महार्हाणि—बहुमूल्यानि, बड़ी कीमती महान् अर्हः (मूल्यम्) येषां तानि महार्हाणि (बहु०)। मत्प्रहितानि—मया प्रेषितानि, मया प्रहितानि (प्रेषितानि) इति मत्प्रहितानि (तृ० त०), मेरे द्वारा भेजी हुईं, प्रहित—प्र+धा+क्त। न अभिनन्दति—दृष्ट्वा प्रसन्नतां न दर्शयति, स्वागत नहीं करता, (देखकर) प्रसन्न नहीं होता। नयज्ञानाम्—नीतिविदां, नीतिवेत्ताओं के। जानन्ति इति ज्ञाः। नयानां (नीतीनां) ज्ञाः इति नयज्ञाः (षष्ठी तत्पुरुष)। तेषां नयज्ञानाम्। स्खलितानि—दोषान्, प्रमादान्, छिद्राणि, दोषों को। मत्समक्षम्—मम पुरतः, मेरे सामने, मम समक्षम् इति मत्समक्षम्। चित्तज्ञानानुवर्तिनः—नृपमनोऽनुकूलव्यवहारकर्तारः, राजा के चित्त का ज्ञान करके (चित्त की क्या वृत्ति है इस को पहिचान करके) अनुवर्तन करने वाले (कार्य करने वाले)। चित्तस्य ज्ञानम् इति चित्तज्ञानम् (ष० त०), चित्तज्ञानम् अनुवर्तितुं शीलम् एषाम् इति चित्तज्ञानानुवर्तिनः (उपपद तत्पुरुष), चित्तज्ञान+अनु+वृत्+णिनिस्ताच्छील्ये। अनर्थाः—महापापिनः, अनर्थकारिणः पुरुषाः, महापाप करने वाले पुरुष। दक्षिणाः—योग्याः, निपुणाः, सरलाः शिष्टाः विनम्राः वा पुरुषाः। तद्भावबहिष्कृताः—नृपमनःप्रतिकूलाः, उसके भाव (चित्तवृत्ति) से

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
बाहर रहने वाले (न समझने या न पहिचानने वाले), तस्य भावाः (चित्तवृत्तयः) इति तद्भावाः (ष० त०), तद्भावेभ्यः बहिष्कृताः (प्रतिकूलाः) इति तद्भावबहिष्कृताः (पञ्चमी तत्पुरुष) । द्वेष्याः—द्वेषयोग्याः, शत्रवः, क्रोधपात्रम्, घृणापात्रम्, द्विष्+ण्यत् । का गतिः—कः उपायः, उपायान्तरं नास्तीत्यर्थः, क्या चारा (उपाय) है अर्थात् दूसरा कोई भी उपाय नहीं है अविनीतः—अशिष्टः, असभ्यः । न विनीतः इति अविनीतः (नञ् तत्पुरुष), नञ्+वि+नी+क्त । न परित्याज्यः—न परिहर्तव्यः, छोड़े जाने योग्य नहीं है । परि+त्यज्+ण्यत् । पितृपैतामहैः—पितामहात् आगताः इति पैतामहाः, पितामह+अण् 'तत आगतः' इत्यण् । पितुः पैतामहाः इति पितृपैतामहाः तैः पितृपैतामहैः, (ष० त०) इसके दो अर्थ हो सकते हैं (१) इस राजा के पिता तथा पितामह के समय से मन्त्रिपद पर रहा हुआ मैं । अर्थात् मैं इसके ही राजत्वकाल में मन्त्री नहीं रहा, बल्कि इसके पिता तथा पितामह के समय में भी मन्त्री रह चुका हूँ, अर्थात् मैं बहुत ही पुराना मन्त्री हूँ । (२) दूसरा अर्थ यह है कि केवल मैं ही मन्त्री के पद पर नहीं हूँ, बल्कि मेरे पिता तथा पितामह भी मन्त्री रह चुके हैं । हमारा मन्त्रिपद हमारे पिता तथा पितामह के समय से चला आ रहा है; यानी हम मौरूसी मन्त्री हैं । अश्रूयमाण-वाचः—न श्रूयमाणा वाक् येषां ते अश्रूयमाणवाचः (बहु०), नहीं सुनी जाती बातें जिनकी ऐसे हम, अर्थात् जब यह राजा मेरी बातों को सुनता ही नहीं है । नञ्+श्रु+कर्मणि शानच् । अश्मकेन्द्रः—अश्मकदेशाधिपतिः । अश्मक प्रान्त आधुनिक ट्रैवनकोर को कहते हैं, अश्मकानाम् इन्द्रः (राजा) इति अश्मकेन्द्रः तस्य अश्मकेन्द्रस्य (ष० त०) अश्मकेन्द्र का नाम था 'वसन्तभानु' । वसन्तभानु बड़ा नीतिवेत्ता था । भाविन्यः—भविष्यन्त्यः, भविष्य में होने वाली, भाविनी भाविन्यौ भाविन्यः, भाविनीम् भाविन्यौ भाविनीः आदि रूप चलते हैं । भू+णिनि+ङीप् । एनं प्रकृतिस्थम् आपादयेयुः—एनं राजानं स्वबुद्धिस्थं कुर्युः, अस्य राज्ञः बुद्धिं स्वस्थाम् उत्तमां समीचीनां च कुर्युः,
CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

इसको प्रकृतिस्थ कर दें, होशहवास में स्थित कर दें। इसकी बुद्धि को ठीक कर दें। अनर्थेषु—कुत्सितेषु कृत्येषु, पापेषु। सुलभव्यलीकेषु—सुप्राप्यदुःखेषु, व्यलीकानि—दुःखानि, शोकाः, सुखेन लब्धुम् शक्यानि इति सुलभानि, सु+लभ्+खल्। सुलभानि (निष्प्रयासं यथा स्यात् तथा, सरलतयैव प्राप्याणि) व्यलीकानि येषु ते सुलभव्यलीकाः तेषु अनर्थेषु (बहु०), जिनमें दुख मिलना बहुत आसान तथा प्राकृतिक है ऐसे अनर्थों (पापों) में। क्वचित्—कदाचित्, शायद। द्वेषः—घृणा, विरक्तिः। सद्वृत्तम्—सदाचारम्, सत् च तद् वृत्तम् (आचरणम्) इति सद्वृत्तम् (कर्मधारय), सदाचार, अच्छा चाल चलन। अस्मै न रोचयेत्—इसको अच्छा न लगवा सके, "रुच्यर्थानां प्रीयमाणः"—सूत्र से 'अस्मै' में चतुर्थी हुई है। भविता तावत् अनर्थः- भविता—होगा, भू धातु लुट् लकार। अनर्थः—विपत्तिः, न अर्थः इति अनर्थः (नञ् तत्पुरुष)। स्तम्भितपिशुनजिह्वः—अवरुद्धदुष्टवचनः। इसके दो अर्थ हो सकते हैं। (१) पिशुन—क्षुद्र, नीच। पिशुना चासौ (मदीया) जिह्वा च इति पिशुनजिह्वा (कर्मधारय) अर्थात् मदीया क्षुद्र जिह्वा। मेरी नीच जीभ। मदीया अप्रियवादिनी जिह्वा। स्तम्भिता (अवरुद्धा) पिशुनजिह्वा येन सः स्तम्भितपिशुनजिह्वः (बहु०), अपनी क्षुद्र (अप्रियभाषिणी) जिह्वा को रोककर (दबाकर)। (२) दूसरा अर्थ यह हो सकता है—पिशुन—चुगलखोर। पिशुनानां जिह्वा इति पिशुनजिह्वा (ष० त०) चुगलखोरों की जीभ, स्तम्भिता पिशुनजिह्वा येन सः स्तम्भित-पिशुनजिह्वः (बहु०), चुगलखोरों की जीभ को रोक (दबा) कर (मैं अपने पद पर बना रहूँ)। यानी ऐसा व्यवहार करूँ, ऐसा चलूँ कि चुगलखोरों की जीभ रुक जाय (चुगलखोरों को चुगली करने का कोई भी अवसर न मिले)। यथाकथञ्चित्—येन केन प्रकारेण, जिस किसी भी प्रकार, जैसे तैसे। अभ्रष्टपदः—न भ्रष्टं पदं (मन्त्रिपदं) यस्य सः अभ्रष्टपदः (बहु०), जिसका मन्त्रिपद भ्रष्ट न होने पावे ऐसा मैं। यानी मन्त्रिपद को बिना खोए, मन्त्रिपद से बिना हटे हुए।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

एवंगते मन्त्रिणि राजनि च कामवृत्ते चन्द्रपालितो नामाश्मकेन्द्रामात्यस्येन्द्रपालितस्य सूनुरसद्वृत्तः पितृनिर्वासितो नाम भूत्वा बहुभिश्चारणैर्वह्नीभिरनल्पकौशलाभिः शिल्पकारिणीभिरनेकच्छन्नकिंकरैश्च गूढपुरुषैः परिवृतोऽभ्येत्य विविधाभिः क्रीडाभिर्विहारभद्रमात्मसादकरोत् । अमुना चैव संक्रमेण स राजन्यास्पदमलभत । लब्धरन्ध्रश्च स यद्यद्व्यसनमारभते तत्तथेत्यवर्णयत्।

'देव यथा मृगया ह्यौपकारिकी न तथाऽन्यत्। अत्र हि व्यायामोत्कर्षादापत्सूपकर्ता दीर्घाध्वलङ्घनक्षमो जङ्घाजवः। कफापचयादारोग्यैकमूलाशयाग्निदीप्तिः। मेदोऽपकर्षादङ्गानां स्थैर्यकार्कश्यलाघवादीनि। शीतोष्णवातवर्षक्षुत्पिपासासहत्वं, सत्त्वानामवस्थान्तरेषु चित्तचेष्टितज्ञानं, हरिणगवलगवयादिवधेन सस्यलोपप्रतिक्रिया, वृकव्याघ्रादिघातैः स्थलपथशल्यशोधनं, शैलाटवीप्रदेशानां विविधकर्मक्षमाणामालोचनम्, आटविकवर्गविश्रम्भणम्, उत्साहशक्तिसंधुक्षणेन प्रत्यनीकवित्रासनमिति बहुतमा गुणाः।

द्यूतेऽपि द्रव्यराशेस्तृणवत्त्यागादनुपमानमाशयौदार्यम्। जयपराजयानवस्थानाद्धर्षविषादयोरविधेयत्वम्। पौरुषैकनिमित्तस्यामर्षस्य वृद्धिः। अक्ष-हस्त-भूम्यादिगोचराणामत्यन्तदुरुपलक्ष्याणां कूटकर्मणामुपलक्षणादत्यन्तं बुद्धिनैपुण्यम्। एकविषयोपसंहाराच्चित्तस्यातिचित्रमैकाग्र्यम्। अध्यवसायसहचरेषु साहसेष्वभिरतिः। अतिकर्कशपुरुषप्रतिसंसर्गादनन्यधर्षणीयता। मानावधीरणमकृपणं च शरीरयापनमिति।

उत्तमाङ्गनाभोगेऽप्यर्थधर्मयोः सफलीकरणम्। पुष्कलः पुरुषाभिमानः। भावज्ञानकौशलम्। अलोभक्लिष्टमाचेष्टितम्। अखिलासु कलासु वैचक्षण्यम्। अलब्धोपलब्धिलब्धानरक्षणार्जितोपभोगभुक्तानुसंधानरुष्टानुनयादिष्वजस्रमभ्युपायरचनया बुद्धिवाचोः पाटवम्। उत्कृष्टशरीरसंस्का-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

रात्सुभगवेषतया लोकसंभावनीयतया परं सुहृत्प्रियत्वम् । गरीयसी परिजनव्यपेक्षा । स्मितपूर्वाभिभाषित्वम् । उद्रिक्तसत्त्वता । दाक्षिण्यानुवर्तनम् । अपत्योत्पादनेनोभयलोकश्रेयस्करत्वमिति ।

हिन्दी अनुवाद—मन्त्री के ऐसा हो जाने पर (मन्त्री की ऐसी दशा हो जाने पर), और राजा के स्वेच्छाचारी हो जाने पर अश्मकाधिपति वसन्तभानु के मन्त्री इन्द्रपालित के दुराचारी पुत्र चन्द्रपालित ने अपने को पिता द्वारा निकाला हुआ घोषित कर, बहुत से चारणों (भाटों) के समूहों, परम चातुरी वाली बहुत सी चित्र बनाने वाली स्त्रियों तथा जिनके पास बहुत से छिपे हुए नौकर थे ऐसे गुप्तचरों द्वारा घिरे हुए, (उसके पास) आकर, विविध (नाना प्रकार की) क्रीडाओं से विहारभद्र को अपने वश में कर लिया और इसी प्रकार राजा के हृदय में सम्मान प्राप्त कर लिया। (इस प्रकार राजदरबार में घुसने का) अवसर पाकर वह चन्द्रपालित, (राजा अनन्तवर्मा) जो ही व्यसन आरम्भ करता था उसी को "ऐसा ही ठीक है" अथवा "ऐसा ही होना चाहिए" कह कर अनुमोदन कर दिया करता था।

महाराज, शिकार जितना उपकारी (लाभकारी) होता है उतनी दूसरी कोई चीज नहीं। इसमें (मृगया या शिकार में), व्यायाम की उत्कृष्टता होने के कारण, आपत्तियों में उपकार करने वाला (बहुत काम आने वाला), तथा लम्बी रास्ता (यात्रा) को तै करने में समर्थ, जङ्घाजव (जङ्घाओं में वेग) आता है, कफ का नाश हो जाने के कारण, आरोग्य की एकमात्र जड़ जठराग्नि की दीप्ति (तेजी) होती है, मेदस् (चरबी) की कमी हो जाने के कारण, अंगों में मजबूती, कर्कशता (अधिक परिश्रम सहिष्णुता), तथा बहुत ज्यादा फुर्ती आदि आती हैं। जाड़ा, गर्मी, वायु, वर्षा, भूख तथा प्यास इन सब को सहन करने की शक्ति आती है, भिन्न भिन्न अवस्थाओं में जीवों की चित्त वृत्ति तथा चेष्टाओं (क्रियाओं) का ज्ञान होता है। हिरन, जंगली भैंसे तथा नीलगाय आदि के वध के कारण, फसल की

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

बरबादी का इलाज (फसल की बरबादी को बचाने का उपाय), भेड़िया, बाघ आदि के वध होने के कारण स्थल-मार्ग के कंटकों (विघ्न-बाधाओं) की सफाई; विविध कार्यों के लिए उपयोगी पहाड़ी प्रदेशों तथा जंगली प्रदेशों का अवलोकन (पता लग जाना), जंगली प्रजाओं (के हृदय) में विश्वासोत्पादन, और उत्साह शक्ति के सन्धुक्षण (बढ़ जाने) के कारण शत्रुसेना का वित्रासन (शत्रुसेना के हृदय में भयोत्पादन) इत्यादि बहुत से गुण हैं।

जुआ में भी, द्रव्य की राशि को तृणवत् खर्च करने के कारण (तृणवत् उड़ाने के कारण) अनुपम चित्त की उदारता आती है। जीत तथा हार के अनिश्चित रहने के कारण हर्ष तथा विषाद का अभाव रहता है, तथा पुरुषार्थ के एकमात्र कारण अमर्ष (क्रोध) की वृद्धि होती है; पाँसा, हाथ, तथा (पाँसा फेंकने की) जमीन पर होने वाले अत्यन्त दुरूह (बिल्कुल ही समझ में न आने वाले) कूट (कपट) व्यापारों को जानने से अनन्त बुद्धि-निपुणता आती है। एक ही विषय में चित्त लगाने के कारण चित्त की अत्यन्त आश्चर्यजनक एकाग्रता बढ़ती है। अध्यवसाय (उद्योग) के साथी साहस (साहस के कार्यों) में अभिरति (रुचि) पैदा होती है। अत्यन्त कठोर-प्रकृति वाले पुरुषों के संसर्ग में आने के कारण वह गुण उत्पन्न होता है जिससे दूसरा अपने को दबा नहीं सकता। अभिमान का प्रदर्शन होता है तथा कृपणताहीन जीवन बीतता है।

उत्तम स्त्रियों के साथ भोग करने से अर्थ धर्म सफल हो जाते हैं, अत्यधिक पुरुषाभिमान (पुरुषत्व का अभिमान) बढ़ता है। (स्त्री अथवा पुरुष किसी के भी) आन्तरिक भाव जानने की कुशलता आती है। लोभ से पीड़ित हुए बिना व्यवहार होता है, अखिल कलाओं में निपुणता आती है। अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति, प्राप्त वस्तु की रक्षा, रक्षित का उपभोग, उपभुक्त वस्तु का अनुसन्धान (खोज), क्रुद्ध व्यक्तियों को प्रसन्न करना इत्यादि बातों में निरन्तर उपाय करते रहने के कारण बुद्धि तथा वचन में दक्षता आती है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

शरीर को (सदा) सुन्दर सजा कर रखने के कारण वेष-सुन्दरता आती है, और वेष-सौन्दर्य से लोक में मान होता है। मित्रों के प्रति अत्यधिक प्रेम पैदा होता है, बहुत बड़े परिजन की व्यपेक्षा (परिवार की देखभाल), मुस्कुराहट के साथ बोलना, पुरुषार्थ (पराक्रम) की वृद्धि, दाक्षिण्य-पूर्वक (औदार्य पूर्वक) व्यवहार करना—आदि होता है। सन्तानोत्पादन से दोनों लोकों में कल्याण होता है।

[दक्षिण—a civil or courteous person who professes attachment to one mistress while his heart has been entirely taken up by another—Apte]

टिप्पणी—एवं गते मन्त्रिणि—मन्त्री के ऐसा हो जाने पर, "यस्य च भावेन भावलक्षणम्" सूत्र से यहाँ सप्तमी हुई है। कामवृत्ते—यथेच्छाचारे, स्वेच्छाचारी हो जाने पर, कामेन (स्वेच्छया) वृत्तं (वर्तनं, आचरणं) यस्य सः कामवृत्तः, तस्मिन् (बहुव्रीहि)। अश्मकेन्द्रामात्यस्य—अश्मक देश के राजा के मन्त्री का। अश्मकानाम् इन्द्रः इति अश्मकेन्द्रः (ष० त०) अर्थात् अश्मकाधिपतिः अर्थात् वसन्तभानुः। अश्मकेन्द्रस्य अमात्यः इति अश्मकेन्द्रामात्यः तस्य अश्मकेन्द्रामात्यस्य (ष० त०), अश्मकराज वसन्तभानु के मन्त्री इन्द्रपालित का। असद्वृत्तः—दुराचारः, दुराचारी, सत् शोभनं वृत्तम् आचरणं यस्य सः सद्वृत्तः (बहु०), सदाचारवान्, न सद्वृत्तः इति असद्वृत्तः (नञ् तत्पुरुष)। पितृनिर्वासितो नाम भूत्वा—स्वजनकेन राज्यात् निष्कासितः इति मिथ्या घोषयित्वा, पिता द्वारा निकाल दिया गया हुआ बनकर। निर्वासितः—निर्+वस्+णिच्+क्त। पित्रा निर्वासितः इति पितृनिर्वासितः (तृ० त०)। नाम—अलीक घोषयित्वा, झूठमूठ शुहरत करके। नाम भूत्वा—ऐसा प्रसिद्ध होकर। तात्पर्य यह कि वह वस्तुतः पितृनिर्वासित नहीं था, पर उसने अपने को पितृनिर्वासित घोषित कर दिया था। "मैं पिता द्वारा घर से निकाल दिया गया हूँ" ऐसी खबर फैलाकर। चारण—भाट, गायक। अनल्पकौशलाभिः—अत्यन्त निपुणाभिः, बहुत ही निपुण

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

चित्र बनाने वाली औरतों के साथ। कुशलस्य भावः कौशलम्, चातुर्यम्, कुशल+अण्, न अल्पम् इति अनल्पम् (नञ् तत्पुरुष), अत्यधिक। अनल्पं कौशलं यासां यासु वा ताः अनल्पकौशलाः ताभिः अनल्पकौशलाभिः (बहु०)। शिल्पकारिणीभिः—चित्रकारिणीभिः, चित्र बनाने वाली स्त्रियों के साथ। कोई कोई विद्वान् कहते हैं कि इसका अर्थ है "नृत्यकारिणीभिः"। "नृत्यकारिणीभिः" का अर्थ होगा "नाचने वाली"। अनेकच्छन्नकिङ्करैः गूढपुरुषैः—न एके इति अनेके (नञ् तत्पुरुष), बहवः, बहुत से। अनेके छन्नाः किङ्कराः (सेवकाः) येषां ते अनेकच्छन्नकिङ्कराः तैः अनेकच्छन्नकिंकरैः (बहु०), विशेषण है "गूढपुरुषैः" का। छन्न—गुप्त, छिपे हुए, छद्+क्त। किङ्कर—सेवक। इसका अर्थ हुआ "ऐसे गूढ पुरुषों (गुप्तचरों) से घिरा हुआ जिनके पास बहुत से छिपे हुए नौकर रहा करते थे।" गूढाश्च ते पुरुषाः इति गूढपुरुषाः तैः गूढपुरुषैः (कर्मधारय) अर्थात् गुप्तचरैः, खुफिया सिपाहियों से परिवृतः—सहितः, घिरा हुआ, परि+वृ+क्त। अभ्येत्य—समीपमागत्य, समीप आकर। अभि+आ+इण्+ल्यप्। आत्मसात्—आत्माधीनम्, स्ववशम्, अपने वश में। 'साति' प्रत्यय 'अधीन' अर्थ में लगता है। आत्मनः अधीनम् इति आत्मसात्। आत्मन्+साति। संक्रमेण—विधिना, मार्गेण, उपायेन, (उपाय से)। राजनि—राजा में यानी राजा के हृदय में या राजा के दरबार में। आस्पदम्—स्थानम्। लब्धरन्ध्रः—प्राप्तावसरः। छेद (अवसर) पाकर। रन्ध्र—छिद्र, दोष। यहाँ पर अर्थ होगा 'अवसर'। किस बात का—दरबार में घुसने का। छेद (दरवाजा)—यानी अवसर। लब्धं रन्ध्रं येन सः लब्धरन्ध्रः (बहु०)। प्राप्त कर लिया गया था रन्ध्र (अवसर) जिसके द्वारा ऐसा वह। यानी अवसर पाकर। सः—राजा अनन्तवर्मा। यद् यद् व्यसनम् आरभते—यं यं दुराचारं प्रक्रमते जो जो व्यसन (बुरे कार्य) शुरू करता था। तत् तथा इति अवर्ण-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

यत्—उसको "तथा" (ठीक है) ऐसा कह दिया करता था। मृगया—आखेट, शिकार। महाव्यसन सात बताए गए हैं :—

स्त्रियोऽक्षा मृगया पानं वाक्पारुष्यार्थदूषणे।
दण्डपारुष्यमित्येतत् महाव्यसनसप्तकम्॥ वैजयन्ती

"स्त्रियों के साथ भोग करना, अक्ष (जुआ खेलना), शिकार करना, पान (शराब पीना), परुष (कठोर) वाणी बोलना (गाली गुफ्ता देना), धन सम्बन्धी अपराध करना (किसी का धन चुरा लेना, धोखा या बेईमानी से किसी का धन ले लेना, घूस लेना इत्यादि अर्थ-दूषण कहलाता है) तथा दण्डपारुष्य (बहुत कठोर दण्ड देना)—ये सात महाव्यसन कहलाते हैं। ह्यौपकारिकी—हि+औपकारिकी लाभकारिणी, उपकार करने वाली, लाभ पहुँचाने वाली, उपकार+अण्+इक+ङीप्, उपकाराय अर्हा (क्षमा) इति औपकारिकी। अत्र—मृगयायाम्, शिकार में। व्यायामोत्कर्षात्—शारीरिकपरिश्रमाधिक्यात्, व्यायाम की उत्कृष्टता के कारण, खूब अधिक व्यायाम होने के करण। व्यायामस्य उत्कर्षः इति व्यायामोत्कर्षः तस्मात् व्यायामोत्कर्षात् (ष० त०), उसके कहने का तात्पर्य यह है कि शिकार में खूब ज्यादा शारीरिक परिश्रम करना पड़ता है, उस शारीरिक परिश्रम के कारण। आपत्सूपकर्ता—आपत्सु+उपकर्ता, संकटेषु हितकरः, आपत्तियों में लाभ पहुँचाने वाला (काम देने वाला)। यह विशेषण है "जंघाजवः" का। उपकर्ता—उप+कृ+तृच् कहने का यह तात्पर्य है कि जाँघों में तेजी रहने से आफत विपद् पड़ने पर आसानी से भाग सकते हैं, क्योंकि व्यायाम करते करते जाँघों में खूब वेग तथा जोर आ जाता है। दीर्घाध्वलंघनक्षमः—दूर यात्रा-करण-समर्थः, लम्बी रास्ता (यात्रा) पार करने में समर्थ। यह भी "जंघाजवः" का विशेषण है। अध्वन्—मार्ग, यात्रा। दीर्घश्चासौ अध्वा च इति दीर्घाध्वा (कर्मधारय); दीर्घाध्वनः लंघनम् (तरणम्) इति दीर्घाध्वलंघनम् (ष० त०); दीर्घाध्वलंघने क्षमः (समर्थः) इति दीर्घाध्वलंघनक्षमः (सप्तमी तत्पुरुष)। अध्वन्—(रास्ता) मूल शब्द है अध्वा अध्वानौ

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

अध्वानः। अध्वानम् अध्वानौ अध्वनः। अध्वना अध्वभ्याम् अध्वभिः—आदि रूप चलते हैं। लंघन—लंघ्+ल्युट्, तरणम्, पार करना। क्षमः—समर्थ। दीर्घाध्वलंघनक्षमः जंघाजवः—जंघा में ऐसा वेग (फुर्ती) आता है जिसके बल पर बड़ी बड़ी यात्राएँ सरलता-पूर्वक तथा थोड़े ही समय में तै (पार) की जा सकती हैं। कफापचयात्—कफनाशात्, कफ—श्लेष्मा। अपचय—ह्रास, नाश, अप+चि+अच्। एरच् सूत्र से इकारान्त चि धातु से भाव-वाचक संज्ञा बनाने के लिए अच् प्रत्यय हुआ है। कफस्य अपचयः इति कफापचयः तस्मात् कफापचयात् (षष्ठी तत्पुरुष)। कहने का तात्पर्य यह है कि शिकार में इतनी मिहनत पड़ती है कि कफ बिल्कुल नष्ट हो जाता है। जब कफ नष्ट हो जाता है, तब फिर क्या कहना। फिर तो उदराग्नि खूब तेजी से जलती है। उदराग्नि का तेजी से जलना आरोग्य (तन्दुरुस्ती) का एक मात्र मूल है। इसी लिए आशयाग्निदीप्तिः को 'आरोग्यैकमूलम्' कहा है। आरोग्यैकमूलम्—स्वास्थ्यस्य एकमात्रकारणम्, आरोग्यस्य (स्वस्थतायाः, स्वास्थ्यस्य) एकं (प्रधानं) मूलम् इति आरोग्यैकमूलम् (षष्ठी तत्पुरुष)। एकं (प्रधानं) मूलम् इति एकमूलम् (कर्मधारय), मुख्य जड़, प्रधान हेतु। आशयाग्निदीप्तिः—जठराग्निसंधुक्षणम्। आशयः—जठरम्, पेट। दीप्तिः—जलना, दीप्+क्तिन्, जठरानल का (तेजी से) जलना, आशयस्य अग्निः इति आशयाग्निः (ष० त०), आशयाग्नेः दीप्तिः इति आशयाग्निदीप्तिः (ष० त०)। जठरानल का जलना। मेदोऽपकर्षात्—मेदोनाशात्, मेदस्—चर्बी। अपकर्ष—ह्रास, घटती। मेदसः अपकर्षः इति मेदोपकर्षः तस्मात् मेदोऽपकर्षात् (ष० त०) चर्बी की घटती के कारण। स्थैर्यम्—दार्ढ्यम्, मजबूती, स्थिरस्य (दृढस्य, बलवतः) भावः स्थैर्यम्, दार्ढ्यम् स्थिर+ष्यञ्। कार्कश्यम्—काठिन्यम्, कठोरता, कर्कशस्य भावः कार्कश्यम्, कर्कश+ष्यञ्। अतिलाघवम्—प्रचुरं शैघ्र्यम्, बहुत ज्यादा फुर्ती। अतिशयितं लाघवम् इति अतिलाघवम्। लघोः भावः लाघवम्, लघु+अण्। स्थैर्य च कार्कश्यं च अतिलाघवं च आदिः येषां तानि

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

स्थैर्यकार्कश्यातिलाघवादीनि (बहुव्रीहि), मजबूती, कठिनता तथा प्रचुर फुर्ती वगैरह, तात्पर्य यह कि "अंगों में स्थिरता (मजबूती), कर्कशता तथा बड़ी फुर्ती आदि आ जाती हैं, क्योंकि चर्बी एकदम कमती हो जाती है"। शीतोष्णवात-वर्ष-क्षुत्-पिपासा-सहत्वम्—शीत—जाड़ा। वात—वायु। वर्ष—वर्षा। शीतं च उष्णं च वातश्च वर्षश्च (वर्षञ्च—दोनों सही होते हैं), क्षुत् च पिपासा च इति शीतोष्णवातवर्षक्षुत्पिपासाः (द्वन्द्व) ताः सहते इति शीतोष्ण-वात-वर्ष-क्षुत्-पिपासा-सहः, तस्य भावः शीतोष्णवात-वर्ष-क्षुत्-पिपासासहत्वम्, जाड़ा गर्मी हवा वर्षा भूख तथा प्यास को सहन करने की क्षमता। सत्त्वानाम्—जीवानाम्, जानवरों की। यहाँ पर तात्पर्य है 'अरण्यजीवों' से। अवस्थान्तरेषु—भिन्नासु दशासु, भिन्न भिन्न हालतों में, अन्याः अवस्थाः इति अवस्थान्तराणि तेषु अवस्थान्तरेषु, (मयूरव्यंसकादित्वात् समासः), भावस्य क्रियाणां च परिचयः। उनकी चित्तवृत्ति तथा क्रियाओं का ज्ञान। चित्तचेष्टितज्ञानम्—चित्तं च चेष्टितानि (क्रियाश्च) इति चित्तचेष्टितानि (द्वन्द्व), तासां ज्ञानम् इति चित्तचेष्टितज्ञानम् (षष्ठी तत्पुरुष), तात्पर्य यह कि "भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में पड़कर पशुओं की चित्तवृत्ति कैसी रहती है तथा वे अमुक अवस्था में क्या चेष्टा करते हैं, इत्यादि बातों का खूब ज्ञान हो जाता है। गवल—अरण्यमहिष, जंगली भैंसा। गवय—नीलगाय। हरिणाश्च गवलाश्च गवयाश्च इति हरिणगवलगवयाः (द्वन्द्व), हरिणगवलगवयाः आदयो येषां ते हरिणगवलगवयादयः (बहु०), तेषां वधः इति हरिणगवलगवयादिवधः तेन हरिणगवलगवयादिवधेन (ष० त०) —हिरन तथा जंगली भैंसों एवं नीलगाय आदि के मारने से (मारने के कारण)। सस्यलोपप्रतिक्रिया—खेती के नाश से रक्षा करने का उपाय। सस्य—खेती, फसल। लोप—नाश। प्रतिक्रिया—निवारणोपायः, सस्यानां लोपः इति सस्यलोपः (ष० त०), सस्यलोपस्य प्रतिक्रिया इति सस्यलोप-प्रतिक्रिया (ष० त०) तात्पर्य यह है कि हिरन, जंगली भैंसे, नीलगाय वगैरह खेती को चर कर तथा रौंद कर बरबाद कर दिया

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

करते हैं। शिकार में इनका वध हो जाता है। इससे खेती नष्ट होने से बच जाती है। वृक—भेड़िया। घात—वध, हन्+घञ्। वृकाश्च व्याघ्राश्च इति वृकव्याघ्राः (द्वन्द्व), ते आदयो येषां ते वृकव्याघ्रादयः (बहु०), तेषां घातः इति वृक-व्याघ्रादिघातः तेन वृकव्याघ्रादिघातेन (ष० त०)। भेड़िया, तथा बाघ वगैरह के मारने से। स्थलपथ-शल्य-शोधनम्—स्थल के मार्गों के विघ्नों की सफ़ाई। शोधनम्—प्रक्षालनम्, दूरीकरणम्, सफाई, निकाल देना। शुध्+ल्युट्। शल्य—कण्टक, विघ्न बाधा। स्थलस्य पन्थानः इति स्थलपथाः (ष० त०), स्थलपथानाम् शल्यानि (कण्टकानि) इति स्थलपथशल्यानि (ष० त०), तेषां शोधनम् (निराकरणम्) इति स्थलपथ-शल्य शोधनम् (ष० त०)। शैलाटवी प्रदेशानाम्—पार्वत-प्रदेशानाम् आरण्य-प्रदेशानां च् पहाड़ी प्रदेशों का तथा जंगली प्रदेशों का। शैल—पर्वत। अटवी—वन, शैलाश्च अटव्यश्च इति शैलाटव्यः (द्वन्द्व), तासां प्रदेशाः इति शैलाटवीप्रदेशाः तेषाम् शैलाटवी-प्रदेशानाम् (ष० त०) विविधकर्मक्षमाणाम्—नाना-प्रकार-कार्ययोग्यानाम्, विविध कार्यों के लिए अत्यन्त उपयुक्त, विविधानि च तानि कर्माणि इति विविध-कर्माणि (कर्मधारय), तेषु क्षमाः इति विविधकर्मक्षमाः तेषाम् विविध-कर्मक्षमाणाम् (सप्तमी तत्पु०)। तात्पर्य यह है कि वे पर्वतीय प्रदेश तथा जंगली प्रदेश मालूम हो जाते हैं जहाँ अनेक प्रकार की लाभकारी योजनाएँ चलाई जा सकती हैं और अनेक प्रकार के लाभकारी उद्योग धन्धे चालू किए जा सकते हैं। आलोचनम्—ज्ञानम्, देखना, पता। विविध उद्योग-धन्धों के लिए उपयुक्त पर्वतीय तथा जंगली प्रदेशों का पता लग जाता है। आटविक-वर्ग-विश्रम्भणम्—अरण्यनिवासिनां हृदये विश्वासोत्पादनम्, जंगल में रहने वाले लोगों के हृदयों में विश्वासोत्पादन हो जाता है। आटविक—अरण्यनिवासी, अटव्यां चरन्तीति आटविकाः, अटवी+ठक्। विश्रम्भणम्—विश्वासोत्पादनम्, आटविकानां वर्गः इति आटविकवर्गः (ष० त०)। आटविकवर्गे विश्रम्भणम् इति आटविकवर्गविश्रम्भणम् (सप्तमी तत्पुरुष),

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

जंगल के निवासियों के हृदय में विश्वास पैदा करने का अवसर मिलता है। उत्साहशक्तिसन्धुक्षणेन—उत्साह - शक्त्याः संवर्धनेन। सन्धुक्षणम्—संवर्धनम्, सुलगना, उभड़ना। उत्साहशक्तेः सन्धुक्षणम् इति उत्साहशक्ति-सन्धुक्षणम् तेन उत्साहशक्तिसन्धुक्षणेन (ष० त०), उत्साह शक्ति के सुलगने से (उभड़ने या बढ़ने) से। प्रत्यनीकवित्रासनम्—शत्रुसैन्यस्य हृदये भयोत्पादनम्, प्रतिकूलानि अनीकानि (सेनाः) इति प्रत्यनीकानि (शत्रु की सेना), तेषां वित्रासनम् (तेषां हृदये भयोत्पादनम्,) इति प्रत्यनी-कवित्रासनम् (ष० त०), शत्रुसेना को डराना। सारांश यह है कि राजा का उत्साह देखकर उसके शत्रु की सेना के हृदय में डर पैदा हो जाता है।

मेदश्छेदकृशोदरं लघु भवत्युत्थानयोग्यं वपुः।
सत्त्वानामपि लक्ष्यते विकृतिमच्चित्तं भयक्रोधयोः॥
उत्कर्षः स च धन्विनां यदिषवः सिध्यन्ति लक्ष्ये चले।
मिथ्यैव व्यसनं वदन्ति मृगयामीदृग् विनोदः कुतः॥

(शाकुन्तल-२.४५)

परिचयं चललक्ष्यनिपातने
भयरुषोश्च तदिंगितबोधनम्।
श्रमजयात् प्रगुणां च करोत्यसौ
तनुमतोऽनुमतः सचिवैर्ययौ॥

(रघुवंश ६.४९)

अब द्यूत के लाभ बतलाता है—द्रव्यराशेः—धनसमूहस्य, धनसमूह का, द्रव्याणां राशिः इति द्रव्यराशिः तस्य द्रव्यराशेः (ष० त०)। तृणवत्—तृणतुल्यम्, तिनके के समान। तृण+वति प्रत्यय। त्यागात्—व्ययकरणात्, खर्च करने के कारण। अनुपमानम्—अद्वितीयम्, उपमारहित, न विद्यते उपमानं यस्य तत् अनुपमानम् (बहु०)। आशयौ-दार्यम्—चित्तस्य उदारता, चित्त की उदारता। औदार्य—उदारस्य भावः औदार्यम्, उदारCC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. आशयस्य औदार्यम्

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

इति आशयौदार्यम् (ष० त०), अनुपमानम् आशयौदार्यम्—चित्तकी अनुपम उदारता। जय-पराजयानवस्थानात्—जीत तथा हार के अनिश्चित रहने के कारण। चूँकि यह निश्चित नहीं रहा करता कि मेरी जीत होगी या हार इस कारण। जयश्च पराजयश्च इति जयपराजयौ (द्वन्द्व), तयोः अनवस्थानम् इति जयपराजयानवस्थानम् तस्मात् जय पराजया-नवस्थानात् (षष्ठी तत्पुरुष)। अनवस्थानम्—अनिश्चितत्वम् अस्थिरता, न अवस्थानम् इति अनवस्थानम् (नञ् तत्पुरुष), नञ्+अव+स्था+ल्युट्। हर्षविषादयोः—प्रसन्नताशोकयोः, प्रसन्नता तथा शोक का। विषाद—वि+षद्+घञ्। हर्षश्च विषादश्च (शोकश्च) इति हर्ष-विषादौ तयोः हर्षविषादयोः (द्वन्द्व)। अविधेयत्वम्—अवशीभूतत्वम्, वश में न होना। विधेयः—वश्यः, अधीनः, वि+धा+यत्, अचो यत्—सूत्र से। विधेयस्य भावः विधेयत्वम् वश्यत्वम, अधीनत्वम्। न विधेयत्वम् इति अविधेयत्वम् (नञ् तत्पुरुष)। हर्षविषादयोः अविधेयत्वम्—हर्ष तथा विषाद के वश में होना (नहीं होता)। पौरुषैकनिमित्तस्य—पराक्रमैकमात्रहेतोः, पुरुषार्थ के एक मात्र कारण का। एकं (केवलं प्रधानं) वा निमित्तम् इति एकनिमित्तम् (कर्मधारय), पौरुषस्य एकनिमित्तम् इति पौरुषैकनिमित्तम् तस्य पौरुषैकनिमित्तस्य (षष्ठी तत्पुरुष), पुरुषार्थ के प्रधान कारण का। पुरुषस्य भावः पौरुषम्, पुरुष+अण्। अमर्षस्य—क्रोधस्य, क्रोध का। 'क्रोध' को पौरुष का प्रधान कारण बना रहा है। उसके कहने का तात्पर्य यह है कि क्रोध से पुरुषार्थ (बल) पैदा होता है। जुआड़ियों को जुआ में क्रोध आना बिल्कुल प्राकृतिक बात है। अक्ष-हस्त-भूम्यादि-गोचराणाम् -अक्ष—पाँसा। भूमि—द्यूतक्रीडाभूमि, वह भूमि जहाँ जुआ खेला जाता है। गोचर—विषय। अक्षाश्च हस्तश्च भूमिश्च इति अक्षहस्त-भूमयः (द्वन्द्व), अक्षहस्तभूमयः आदयः येषां ते अक्षहस्तभूम्यादयः (बहु०), अक्षहस्त भूम्यादयः गोचराः (क्षेत्राणि विषयाः) येषां ते अक्षहस्तभूम्या-दिगोचराः तेषाम् अक्षहस्तभूम्यादिगोचराणाम् (बहु०), विशेषण है

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

"कूटकर्मणाम्" का। उन कूट (कपट) कर्मों का जिनका क्षेत्र (विषय) है अक्ष, हस्त, भूमि आदि। यानी वे कपट कर्म जो अक्ष (पाँसा), हस्त, द्यूत-क्रीडा-भूमि में रहा करते हैं। लोग पाँसे से, हाथ से तथा जिस जमीन पर पाँसा फेंका जाता है उस जमीन पर ऐसी सफाई और करामात कर देते हैं जिसे साधारण मनुष्य कदापि नहीं समझ सकता। पाँसे को ऐसा फेंकते हैं कि अपनी जीत हो और विरोधी की हार हो। हाथ की चालाकी तो ऐसी करते हैं कि आप स्वयं पूरा दाँव जीत लेते हैं और विपक्षी चारों खाने चित्त हो जाता है। उसी प्रकार क्रीडा भूमी में भी कोई ऐसी कार्रवाई कर देते हैं जिससे अपनी ही जीत होती जाती है और विपक्षी की हार होती जाती है। इसी से चन्द्रपालित कह रहा है कि कूट कर्म अक्ष हस्त-भूमि आदि में रहा करते हैं। अत्यन्तदुरुपलक्ष्याणाम्—उपलक्षितुं योग्यानि उपलक्ष्याणि, दिखाई पड़ सकने वाले। उप+लक्ष्+यत्। दुःखेन उपलक्ष्याणि (द्रष्टव्यानि) इति दुरुपलक्ष्याणि, अत्यन्तं दुरुपलक्ष्याणि इति अत्यन्तदुरुपलक्ष्याणि तेषाम् अत्यन्तदुरुपलक्ष्याणाम्, विशेषण है 'कूटकर्मणाम्" का यानी ऐसे कूट (कपट) कर्मों का, जो अत्यन्त दुरुपलक्ष्य होते हैं यानी जिन्हें देख सकना या समझ सकना अत्यन्त मुश्किल होता है। उपलक्षणात्—निरीक्षणात्, देखने से, चूँकि जुआड़ी उन कूटकर्मों को देख जाता या समझ जाता है इसलिये। कूटकर्मणाम्—कपट-पूर्ण-कार्याणाम्—कपट भरे कामों का। कूटयुक्तानि (कपट—युक्तानि) कर्माणि इति कूटकर्माणि, तेषाम् कूटकर्मणाम्। (मध्यम-पद-लोपी कर्मधारयः)। एकविषयोपसंहारात्—एक ही विषय (काम) में मन लगे रहने के कारण। उपसंहार—अभिनिवेश, लगन, मन लगा रहना, उप+सम्+हृ+घञ्। एकश्चासौ विषयश्च इति एकविषयः (द्विगु), तस्मिन् उपसंहारः अभिनिवेशः (एकवृत्तित्वम्, संलग्नत्वम्) इति एकविषयोपसंहारः, तस्मात् एकविषयोपसंहारात् (सप्तमी तत्पुरुष), एकही विषय में मन लगने (दत्तचित होने) के कारण। सारांश यह है कि खेलते समय जुआड़ियों के सामने जुआ ही एक मात्र विषय रहता है। उसी में उनकी सारी शक्तियाँ केन्द्रीभूत रहती हैं। इसी

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

बात पर चन्द्रपालित कह रहा है कि जुआ रूपी एक मात्र विषय पर मन के लगे रहने के कारण। अतिचित्रम्—अत्यन्तम् अद्भुतम्, आश्चर्यजनकं वा। चित्रम्—विचित्रम्, अतिशयितं चित्रम् इति अतिचित्रम्, अत्यन्त अद्भुत। ऐकाग्र्यम्—एकाग्रता। एकम् एव अग्रम् (लक्ष्य) यस्य सः एकाग्रः (बहु०), जिसका एकही लक्ष्य हो। एकाग्रस्य भावः ऐकाग्र्यम्, एकाग्र+ष्यञ्। साहसेषु—साहसयुक्तेषु कार्येषु, अद्भुत कर्मसु, शौर्य पूर्ण कार्येषु, साहस वाले कामों में। अरतिः—अप्रीतिः, रति (प्रेम) का न होना, न रतिः इति अरतिः (नञ् तत्पुरुष)। रम्+क्तिन् भावे=रतिः। अध्यवसायसहचरेषु—अध्यवसाय—उद्योग, अधि+अव+षो धातु+घञ्। सहचर—मित्र। अध्यवसायः सहचरः येषां तानि साहसानि तेषु अध्यवसायसहचरेषु साहसेषु (बहु०), यानी ऐसे साहसपूर्ण कार्यों में जिनका मित्र अध्यवसाय है यानी जो केवल अध्यवसाय द्वारा ही साध्य हो सकते हैं। इसी लिए 'साहस' को 'अध्यवसाय का सहचर बताया है। अभिरतिः—अभिरुचिः, प्रीतिः, अभिनिवेशः। अतिकर्कश-पुरुष-प्रतिसंसर्गात्—अत्यन्त-क्रूरस्वभाव-मनुष्याणां घनिष्ठ सम्पर्कात्, बड़े क्रूरस्वभाव वाले मनुष्यों का घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण। जुआ में प्रायः अनेक क्रूरप्रकृति वाले मनुष्य मिलते हैं। प्रतिसंसर्ग—घनिष्ट सम्पर्क। जुआड़ी लोग प्रकृत्या अत्यन्त कर्कश (क्रूरप्रकृति) होते हैं। चाहे कोई व्यक्ति रसातल को चला जाय (बिल्कुल बरबाद हो जाय); पर उन्हें रत्ती भर भी परवा नहीं होती। इसी से वह कह रहा है कि जुआ में अति कर्कशपुरुषों के साथ घनिष्ठ सम्पर्क होता है, इससे। अनन्यधर्षणीयता—अन्यानभिभवनीयता, वह गुण जिससे दूसरा व्यक्ति अपने को दबा न सके; दूसरों द्वारा न दबाए जाने की शक्ति। धर्षयितुं योग्यः धर्षणीयः, धृष्+अनीयर्। अन्यैः धर्षणीयः इति अन्यधर्षणीयः (तृतीया तत्पु०) तस्य भावः अन्यधर्षणीयता। न अन्यधर्षणीयता इति अनन्यधर्षणीयता (नञ् तत्पुरुष)। मानावधारणम्—स्वाभिमानस्य उत्पत्तिः, स्वाभिमान का पैदा होना। मानस्य (अभिमानस्य) अवधारणम्

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

(करणम् प्रदर्शनम् इति यावत्) इति मानावधारणम् (ष० तं०) अभिमान का करना। तात्पर्य यह है कि जब जुआड़ी लोग हारने लगते हैं तो वे अपने बड़प्पन तथा धन आदि की बड़ी डींग हाँकते हैं और अभिमान दिखाते हैं विशेषतः उस समय जब कि विपक्षी कोई व्यङ्ग्य-पूर्ण बात कहने लगता है। इसी लिए वह कह रहा है कि जुआ में स्वाभि-मान की प्रचुर जागर्ति होती है। अकृपणम्—कृपणता रहितम् दैन्य-रहितम्, दीनताहीन, न कृपणम् इति अकृपणम् (नञ् तत्पुरुष), विशेषण है "शरीरयापनम्" का। शरीरयापनम्—कालक्षेपः, जीवननिर्वाहः। शरीरस्य यापनम् इति शरीरयापनम् (ष० त०)।

अब स्त्रियों के उपभोग के लाभ बताता है। उत्तमाङ्गनाभोगे—सुन्दरस्त्रीभिः रमणे, अङ्गनाः—स्त्रियः, स्त्रियाँ। उत्तमाश्च ताः अगनाः (स्त्रियः) इति उत्तमांगनाः (कर्मधारय), अच्छी अच्छी स्त्रियाँ। तासां भोगः इति उत्तमांगनाभोगः तस्मिन् उत्तमांगनाभोगे (ष० त०); सुन्दर सुन्दर स्त्रियों के साथ भोग विलास करने में। अर्थधर्मयोः—धन और धर्म का। अर्थश्चधर्मश्च इति अर्थधर्मौ तयोः अर्थधर्मयोः (द्वन्द्व)। सफलीकरणम्—साफल्यम्, न सफलम् इति असफलम्। असफलस्य सफलं करणम् इति सफलीकरणम् (अभूततद्भावे च्विः)। उसके कहने का मतलब यह है कि स्त्रियों के साथ रमण करने से धन का सदुपयोग होता है इससे धन सफल हो जाता है तथा धर्म का भी निर्वाह होता है, क्योंकि स्त्रियों की कामवासना को तृप्त करना पुरुष का धर्म है। चन्द्रपालित के कहने का यही तात्पर्य है। पुष्कलः—अत्यधिकः, बहुत ज्यादा। पुरुषाभिमानः—पुरुष का अभिमान। पुरुषस्य अभिमानः इति पुरुषाभिमानः (ष० त०)। अभिमान—अभि+मन्+घञ्।

भावज्ञानकौशलम्—भाव—चित्तवृत्ति, आन्तरिक मनोभाव, भू +घञ्। ज्ञान—मालूम होना, ज्ञा+ल्युट्। कौशलम्—चातुर्यम्, कुशलस्य भावः कौशलम्, कुशल+अण्। मनोभावों (हृद्गत विचारा-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

णाम्) ज्ञानम् (परिचयः) इति भावज्ञानम् (ष० त०), तस्मिन् कौशलम् इति भावज्ञानकौशलम् (सप्तमी तत्पुरुष), लोगों के स्त्रियों तथा पुरुषों) के आन्तरिक विचारों को समझने की पटुता। अलोभ-क्लिष्टम्—लोभ से व्यथित न होने वाला (व्यवहार)। लोभेन क्लिष्टम् पीडितम् इति लोभक्लिष्टम् (तृ० त०), न लोभक्लिष्टम् इति अलोभक्लिष्टम् (नञ् तत्पुरुष), विशेषण है "आचेष्टितम्" का, ऐसा आचेष्टित (व्यवहार) जो लोभ से क्लिष्ट न हो। अलाभक्लिष्टम् आचेष्टितम्—व्यवहार (चेष्टाएँ, क्रियाएँ) लोभ से पीडित (प्रेरित) नहीं रहती। यानी स्त्रियों के साथ रमण करने वाला व्यक्ति कभी भी लोभ से प्रेरित होकर कोई कार्य नहीं करता—चन्द्रपालित का यही तात्पर्य है। वैचक्षण्यम्—नैपुण्यम्, निपुणता। विचक्षण—निपुण, विचक्षणस्य भावः वैचक्षण्यम्, विचक्षण+ष्यञ् (भावे)। अलब्धोपलब्धि-लब्धानुरक्षण-रक्षितोपभोग-भुक्तानुसन्धान-रुष्टानुनयादिषु—न लब्धम् इति अलब्धम् (नञ् तत्पुरुष), नञ्+लभ्+क्त; अलब्धस्य (अप्राप्तस्य प्रमदाजनस्य) लब्धिः इति अलब्धलब्धिः (ष० त०)। लब्धि—प्राप्ति, लभ्+क्तिन्। लब्धस्य (प्राप्तस्य प्रमदाजनस्य) अनुरक्षणम् (पालनम्) इति लब्धानुरक्षणम् (ष० त०)। रक्षितस्य (प्रमदाजनस्य) उपभोगः इति रक्षितोपभोगः (ष० त०)। भुक्तस्य (प्रमदाजनस्य) अनुसन्धानम् (सम्यक् निरीक्षणम्, यथा ताः प्रमदाः कुत्रचिदपि न पलायेरन् अथवा कैरपि खलैः न प्रलोभ्येरन्) रुष्टस्य (क्रुद्धस्य प्रमदाजनस्य) अनुनयः (प्रसन्नीकरणम्) इति रुष्टानुनयः। अनुनय—समाधानम्, समाश्वासनम्, अनु+नी+अच्। अलब्धोपलब्धिश्च लब्धानुरक्षणं च रक्षितोपभोगश्च भुक्तानुसन्धानं च रुष्टानुनयश्च इति अलब्धोपलब्धि-लब्धानुरक्षण-रक्षितोपभोग-भुक्तानुसन्धान-रुष्टानुनयाः (द्वन्द्व), ते आदयो येषां ते अलब्धोपलब्धिलब्धानुरक्षणरक्षितोपभोगभुक्तानुसन्धानरुष्टानुनयादयः तेषु (बहु०), अलब्धोपलब्धिलब्धानुरक्षणरक्षितोपभोगभुक्तानुसन्धानरुष्टानुनयादिषु। अजस्रम्—निरन्तरम्।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

अभ्युपायरचनया—उपाय करने का अभ्यास पड़ जाने के कारण। अभ्युपायस्य रचना इति अभ्युपायरचना, तथा अभ्युपायरचनया (ष० त०)। तात्पर्य यह है कि जो स्त्रियाँ अभी तक भोगने को नहीं मिली हैं उनको प्राप्त करने के लिए तरह तरह के उपाय करने पड़ते हैं, इससे बुद्धि तथा वाणी की पटुता बढ़ती है। उसी प्रकार जो स्त्रियाँ अपने चंगुल में आ गई हैं उनके रक्षण के लिए भी उपाय करना पड़ता है, इससे भी बुद्धि तथा वाणी की पटुता बढ़ती है। उसी प्रकार आप जिन स्त्रियों की रक्षा कर रहे हैं उनके साथ भोग करने के लिए तरह तरह के उपाय रचने पड़ते हैं। इससे भी बुद्धि तथा वाणी की पटुता बढ़ती है। और जिन स्त्रियों के साथ आप भोग कर रहे हैं उनकी दिन रात देख रेख रखनी पड़ती है ताकि वे कहीं भाग न जायें अथवा कोई दुष्ट उन्हें भगा न ले जाय, इसके लिए भी नाना प्रकार के उपाय करने पड़ते हैं। इससे भी बुद्धि तथा वाणी की निपुणता बढ़ती है। जो स्त्रियाँ आप से कभी-कभी क्रुद्ध हो जाती हैं और मान करने लगती हैं उनको मनाने के लिए आप को तरह-तरह की तरकीबें रचनी पड़ती हैं इससे भी बुद्धि तथा वाणी की पटुता बढ़ती है। बुद्धि-वाचोः—मेधाशक्तेः वाण्याश्च, बुद्धि की तथा वाणी की। बुद्धि—बुध्+क्तिन्, बुद्धिश्च वाक् च इति बुद्धिवाचौ तयोः बुद्धिवाचोः (द्वन्द्व)। पाटवम्—नैपुण्यम्, चातुर्यम्। पटोः भावः कर्म वा पाटवम्, पटु+अण्। उत्कृष्ट-शरीर-संस्कारात्—शरीरस्य विभूषणात्, शरीरस्य संस्कारः इति शरीरसंस्कारः (षष्ठी तत्पुरुष), सम्+कृ+घञ्। उत्कृष्टश्चासौ शरीर-संस्कारश्च इति उत्कृष्टशरीरसंस्कारः तस्मात् (कर्मधारय), शरीर-की उत्तम सजावट की वजह से। सुभगवेषतया—रमणीय स्वरूपत्वेन, सुन्दर वेष होने के कारण। सुभगः (रमणीयः मनोहरः) वेषः (आकृतिः, स्वरूपम्) इति सुभगवेषः (कर्मधारय), तस्य भावः सुभगवेषता तथा सुभगवेषतया। उत्कृष्टशरीर-संस्कारात् सुभगवेषतया—शरीर की उत्तम प्रकार से सजावट करने के कारण वेष (आकार) सुभग दीखता है। तात्पर्य यह है कि स्त्रियों के साथ रमण करने के लिए आप को

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

अपना शरीर खूब बढ़िया तरीके से सजाए रखना पड़ता है (उत्कृष्टशरीर संस्कारात्)। शरीर को बढ़िया तरीके से सजाए रखने के कारण आप का वेष रमणीय दिखाई पड़ता है (सुभगवेषता)। उससे लोकसम्भावनीयता होगी। लोकसम्भावनीयता—लोगों से सम्मान मिलना। सम्भावनीय—सम्माननीय। सम्भावनीयस्य भावः इति सम्भावनीयता। लोकैः सम्भावनीयता इति लोकसम्भावनीयता (तृ० त०), तथा लोकसम्भावनीयतया, संसार द्वारा सम्मान मिलने के कारण। तात्पर्य यह है कि जब आप खूब सजे बजे तथा मनोहर वेष में दिखाई पड़ेंगे तो लोग समझेंगे कि यह धनाढ्य व्यक्ति है और बड़ी इज्जत करेंगे। परम्—अत्यन्तम्। सुहृत्प्रियत्वम्—सुहृदाम् (मित्राणाम्) प्रियः इति सुहृत्प्रियः तस्य भावः सुहृत्प्रियत्वम्, यानी मित्रों के प्यारे बन जाने का गुण। गरीयसी—भूयसी, बड़ी, गुरु+ईयसुन्+ङीप्। परिजनव्यपेक्षा—भृत्य-सम्मानकरणम्, नौकरों का आदर करना। परिजनानां (भृत्यानां) व्यपेक्षा (सम्मानम्) इति परिजनव्यपेक्षा (ष० त०)। स्मितपूर्वाभिभाषित्वम्—मुस्कुराहट के साथ बोलने का गुण। हँस-हँस कर बातचीत करने का अभ्यास। स्मितं पूर्वम् यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात् तथा स्मितपूर्वम्; स्मितपूर्वम् अभिभाषते तच्छीलः इति स्मितपूर्वाभिभाषी, (णिनिस्ताच्छील्ये), तस्य भावः स्मितपूर्वाभिभाषित्वम्। उद्रिक्तसत्त्वता—प्रखरपराक्रमः। उद्रिक्तम् (उच्चम्) सत्त्वं (विचारः, भावः, पराक्रमः वा) यस्य स उद्रिक्तसत्त्वः (बहु०), तस्य भावः उद्रिक्तसत्त्वता, ऊँचा विचार या पराक्रम। दाक्षिण्यानुवर्तनम् दक्षिणस्य भावः दाक्षिण्यम्, दक्षिण +ष्यञ्। दाक्षिण्यस्य अनुवर्तनम् इति दाक्षिण्यानुवर्तनम् (ष० त०)। अथवा दाक्षिण्यपूर्वकम् अनुवर्तनम् इति दाक्षिण्यानुवर्तनम् दक्षिणव्यवहरणम्।

अपत्योत्पादनेन—सन्तानोत्पादन द्वारा। अपत्यानाम् (सन्तानानाम्) उत्पादनम् इति अपत्योत्पादनम् तेन अपत्योत्पादनेन (ष० त०)। उभयलोकश्रेयस्करत्वम्—इहलोके परलोके च मंगलकरत्वं जायते।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

उभयौ च तौ लोकौ इति उभयलोकौ (कर्मधारय), उभयलोकयोः श्रेयः (कल्याणम्) करोति इति उभयलोकश्रेयस्करम् तस्य भावः उभयलोकश्रेयस्करत्वम् ।

पानेऽपि नानाविधरोगभङ्गपटीयसामासवानामासेवनात्स्पृहणीयवयोव्यवस्थापनम् । अहंकारप्रकर्षादशेषदुःखतिरस्करणम् । अङ्गरागदीपनादङ्गनोपभोगशक्तिसंधुक्षणम् । अपराधप्रमार्जनान्मनःशल्योन्मूलनम् । अश्लाघ्यशंसिभिरनर्गलप्रलापैर्विश्वासोपबृंहणम् । मत्सराननुबन्धादानन्दैकतानता । शब्दादीनामिन्द्रियार्थानां सातत्येनानुभवः । संविभागशीलतया सुहृद्वर्गसंवर्गणम् । अनुपमानमङ्गलावण्यम् । अनुत्तराणि विलसितानि । भयार्तिहरणाच्च साङ्ग्रामिकत्वमिति वाक्पारुष्यं दण्डो दारुणो दूषणानि चार्थानामेव यथावकाशमौपकारिकाणि । नहि मुनिरिव नरपतिरुपशमरतिरभिभवितुमरिकुलमलमवलम्बितुं च लोकतन्त्रम्' इति ।

असावपि गुरूपदेशमिवादरेण तस्य मतमन्ववर्तत । ततस्तच्छीलानुसारिण्यश्च प्रकृतयो विश्रृङ्खलमसेवन्त व्यसनानि । सर्वश्च स्वसमानदोषतया न कस्यचिच्छिद्रान्वेषणायायतिष्ट । समानभर्तृप्रकृतयस्तन्त्राध्यक्षाः स्वानि स्वानि कर्मफलान्यभक्षयन् । ततः क्रमादायद्वाराणि व्यशीर्यन्त । व्ययमुखानि विटावधेयतया विभारहरहर्व्यवर्धन्त । सामन्तपौरजानपदमुख्याश्च समानशीलतयोपारूढविश्रम्भेण सजातयः पानगोष्ठीष्वभ्यन्तरीकृताः स्वं स्वमाचारमत्यचारिषुः ।

हिन्दी अनुवाद—मद्यपान में भी, नाना प्रकार के रोगों के नाश करने में लाभदायक आसवों (शराबों) के सेवन से स्पृहणीय वय (उम्र) का व्यवस्थापन (रचना) होता है । अहंकार के अधिक होने से, सारे दुःखों को तिरस्कार करने की शक्ति आ जाती है । कामदेव तथा इच्छा (कामना) के बढ़ने से स्त्री-उपभोग की शक्ति की वृद्धि होती है । (दूसरों के) अपराधों को

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

क्षमा करने से, मन की व्यथाओं का नाश हो जाता है। जो बातें सुनाने योग्य नहीं हुआ करतीं उनका उद्घाटन करने वाले अनर्गल (अनियन्त्रित) प्रलापों के कारण, (अपने प्रति) (लोगों का) विश्वास बढ़ता है। मत्सर (ईर्ष्या) के न होने के कारण आनन्द की एकतानता (नैरन्तर्य) आती है। शब्दादिक इन्द्रियों के विषयों का निरन्तरता-पूर्वक अनुभव (भोग) होता है। बराबर बराबर हिस्सा बाँटने का स्वभाव पड़ जाने के कारण मित्र वर्ग का एकत्रीकरण (एकत्रित होना) होता है। अनुपम अङ्ग-लावण्य (शरीर सौन्दर्य) आता है। जिनसे बढ़कर विलास (संसार में) होते ही नहीं ऐसे विलास (भोगने को) मिलते हैं। भय तथा पीड़ा के हरण हो जाने (दूर हो जाने) के कारण संग्राम करने की प्रवृत्ति पैदा हो जाती है। वाणी की कठोरता (गाली गुफ्ता देना), घोर दंड देना, एवं धन का दूषण (यानी दूसरों की जमीन जायदाद अथवा धन सम्पत्ति को बेईमानी से ले लेना और अपने काम में लगाना)—ये सब गुण अवसर पड़ने पर काम देते हैं।

मुनियों के समान, शांतिप्रिय राजा न तो अपने शत्रु कुल को दबा सकता है न लोकतन्त्र का ही अवलम्बन कर सकता है, (न तो सांसारिक व्यवहारों को ही कर सकता है)। वह (राजा अनन्त वर्मा) भी उस (चन्द्रपालित) के उपदेश को गुरु के उपदेश के समान, बड़े आदर के साथ मानने लगा। फिर तो राजा के आचरण को अनुकरण करने वाली प्रजा, बेरोकटोक (इच्छानुसार) व्यसनों का सेवन करने लगी। सभी लोग एक समान दोष युक्त हो जाने के कारण, कोई किसी के छिद्रान्वेषण (दोषोद्घाटन) के लिए प्रयत्न नहीं करता था। प्रजा और राजा एक समान हो गए। (विभिन्न विभागों के) अध्यक्ष (अफसर), जिनकी प्रकृति राजा के ही समान हो गई थी अपने अपने कर्मों का फल भोगने लगे यानी जो अफसर जितना कर (आमदनी) वसूल कर लाता था उतना अपने काम में लगा लेता था। तब तो धीरे-धीरे, आमदनी के दरवाजे (रास्ते) छिन्न-भिन्न हो गये (बन्द हो गये)। कामुकों अथवा धूर्तों की आशा में चलने के कारण, दिन-प्रतिदिन, खर्चे के मार्ग बढ़ने लगे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
जागीरदार, पुरवासी तथा राज्य के जो प्रमुख लोग थे वे, सब के सब स्त्रियों समेत, (राजा के) समान आचरण वाले होने के कारण, जिसके हृदय में विश्वास जम गया था उस राजा द्वारा, मदिरापान की गोष्ठी में शामिल कर लिए गये (शामिल होने के लिये इजाजत पा गए)। और अपने अपने मर्यादा-पूर्ण आचरणों का उल्लंघन करने लगे।

स्पष्टार्थ—मदिरा नाना प्रकार के रोगों का नाश करती है। अतः मदिरा पीने से यह एक लाभ तो होगा ही। दूसरा लाभ यह होगा कि मदिरा सेवन करने से शरीर की गढ़न बहुत सुन्दर हो जाती है। तीसरा लाभ यह होता है कि अहंकार खूब आता है। उससे यह लाभ होता है कि चाहे जितना दुःख पड़े, जरा भी समझ नहीं पड़ता, सारे दुःख तृण समान मालुम पड़ने लगते हैं।

अपराधप्रमार्जनात् इत्यादि—मदिरापान से मनुष्य में एक ऐसी मस्ती आती है जिससे शराबी अपने अपराधी के अपराधों को बिलकुल क्षमा कर देता है। इससे यह लाभ होता है कि बदला लेने की भावना जो अन्य लोगों के मन तथा चित्त को दिन रात व्यथित किया करती है, वह उसके मन से बिलकुल गायब (नष्ट) हो जाती है। नशा में चूर हो कर शराबी लोग अनाप-शनाप जो ही मन में आता है वही प्रलाप करते हैं (बड़बड़ाते हैं); उस बड़बड़ाने में वे अश्राव्य बातें (दूसरों की तथा अपनी गुप्त से गुप्त बातें, जो दूसरों को कदापि नहीं सुनानी चाहिए) कहते चले जाते हैं। इससे सुनने वालों के मन में विश्वास बढ़ता है, यह सोचकर कि देखो यह आदमी कैसा निष्कपट तथा स्पष्ट-वादी है कि अपनी गुप्त से गुप्त बातें खोल देता है। अपरंच, शराबी के हृदय में मत्सर (ईर्ष्या) नहीं पैदा होता। उससे यह लाभ होता है कि उसका मन तथा हृदय जला नहीं करता, जैसा कि मत्सर युक्त (ईर्ष्यालु) व्यक्तियों का जला करता है। उलटा, उसको आनन्दैकतानता का अनुभव होता है—यानी निरंतर आनन्द मालूम पड़ता है।
CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

पञ्च इन्द्रियों के पाँच विषय हैं, शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श। कर्णेन्द्रिय का विषय है 'शब्द'—सुन्दर सुन्दर सुरीले गाने तथा बाजे सुनना। चक्षुरिन्द्रिय का विषय है 'रूप'। सुन्दर सुन्दर स्त्रियों, बालकों, दृश्यों, चित्रों, फूलों को देखना। जिह्वेन्द्रिय का विषय है 'रस' अथवा 'स्वाद'—मीठा, नमकीन, खट्टी, कड़ुई, तीती तथा कसैली वस्तुओं का स्वाद लेना। नासिकेन्द्रिय का विषय है 'गन्ध'—गुलाब के इत्र की खुशबू, केवड़ा के इत्र की खुशबू, तथा बेला, चमेली, गुलरोगन आदि की खुशबू का मजा लेना। त्वक् इन्द्रिय का विषय है, 'स्पर्श'—गुलगुल गद्दा, तोशक, तकिया का स्पर्श, गर्मी में टंढी चीजों का स्पर्श, जाड़े में गर्म चीजों का स्पर्श इत्यादि विषयों को निरन्तर भोगने की तबियत चलती रहती है।

संविभाग शीलतया सुहृद्वर्ग-संवर्गणम्—शराबी लोग उन सभी लोगों को हिस्सा बाँट कर शराब पीते हैं जो कि उस समय उस मंडली में बैठे रहते हैं। इससे एक लाभ यह होता है कि इसी बहाने सारे सुहृद् लोग इकट्ठा हो जाते हैं यानी उसका संवर्गण हो जाता है।

भयार्तिहरणात् साङ्ग्रामिकत्वम्—मदिरा सारे भय तथा आर्ति (दुःख) को हरण कर लेती है। यानी मद्यप लोग बड़े निर्भीक तथा दुःख-सहिष्णु होते हैं। मदिरा में यह एक बड़ा गुण है। उसका फल यह होता है कि मनुष्य को संग्राम करने की रुचि होती है, और उसमें संग्राम करने की योग्यता आती है।

वाक्पारुष्यं, दंडो दारुणो, दूषणानि चार्थानामेव यथावकाशमोपकारिकाणि—मदिरा पीने से ये दुर्गुण आते हैं। जिन्हें चन्द्रपालित सद्गुण बतला रहा है। वह यह कि पुरुष वाणी बोलने, गाली गुफ्ता देने, तथा डाट फटकार कर और लाल लाल आँखें कर एवं त्यौरी चढ़ा कर बोलने) की आदत पड़ जाती है। दूसरे, दारुण दंड (भयंकर से भयंकर दंड) देने की भी कुटेव पड़ जाती है, जिसे चन्द्रपालित बड़ी अच्छी चीज बता रहा है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

अथ दूषण—दूसरों की जमीन जायदाद तथा धन दौलत हड़प कर लेना अथवा नाजायज तरीके से अपने काम में लाना—इसकी भी बान पड़ जाती है। ये सब आदतें—चन्द्रपालित के कथनानुसार—यथावकाश (मौका पड़ने पर) काम देती हैं। यानी यदि कभी धन की आवश्यकता पड़ी तो दूसरे का धन बेधड़क तथा निस्सङ्कोच हड़प कर लिया जा सकता है। अन्तःकरण में किञ्चिन्मात्र भी आघात नहीं पहुँचता। उसी प्रकार यदि किसी को गाली गुफ्ता देने की आवश्यकता हुई तो मदिरापी जरा भी आगा पीछा नहीं करता, न तो शीलसङ्कोच ही करता है। शिष्टता तथा लोकमर्यादा की सर्वथा उपेक्षा तथा उल्लंघन करता हुआ खुले आम गालियाँ देता है और जरा भी नहीं शरमाता। उसी प्रकार, यदि दारुण दंड देने की आवश्यकता पड़ गई तो बेधड़क क्रूर से क्रूर दंड दे देता है जिससे विपक्षी आतंकित हो जाता है।

स्वसमानदोषतया न कस्यचित् छिद्रान्वेषणाय अयतिष्ट—सारी प्रजा में एक समान दोष व्याप्त हो गए थे। बिना व्यसन (दुराचार) का कोई भी न बचा था। इसलिए कौन किसका छिद्रान्वेषण (दोषोद्-घाटन) करे। यदि तुम हमारी पोल खोलोगे तो हम तुम्हारी खोलेंगे ऐसी बातें चल रही थीं। इसलिए कोई किसी के दुर्गुणों को प्रकट नहीं करता था।

समानभर्तृप्रकृतयः तन्त्राध्यक्षाः स्वानि स्वानि कर्मफलानि अभक्षयन्—भर्ता (राजा) की जैसी प्रकृति पड़ गई थी, वैसी ही अफसरों (तन्त्राध्यक्षों) की भी पड़ गई थी। परिणाम यह हुआ कि जो अफसर जितनी आमदनी वसूल करता था वह उतनी खा जाता था, राजकोष में नहीं जमा करता था। इसी को दण्डी कह रहे हैं—"स्वानि स्वानि कर्मफलानि अभक्षयन्"।

विभोः विट-विधेयतया व्ययमुखानि व्यवर्धन्त—विभु (राजा) कामुकों का विधेय (आज्ञापालक) बन गया था। अतः व्यय के दरवाजे

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

बहुत बढ़ गए थे। कामुक लोग जो ही बात कहते थे वही राजा करता था। इससे खर्चा खूब बढ़ गया था।

कहीं कहीं पर "विटवैधेयतया" पाठ है वहाँ पर अर्थ होगा "कामुक सहचरों की मूर्खता के कारण"।

समानशीलतया उपारूढविश्रम्भेण—राजा, जागीरदारों, नागरिकों तथा देशवासियों का आचरण एकसा हो गया था। अतः राजा के हृदय में विश्रम्भ (विश्वास) उपारूढ़ हो गया था (पैदा हो गया था)—राजा उन सब लोगों का बड़ा विश्वास करने लगा था। अतः उन्हें उनकी स्त्रियों-समेत अपनी मद्य-पान-मंडली में शामिल होने की इजाजत देता था।

स्वंस्वम् आचारम् अत्यचारिषुः—सभी लोगों ने अपनी मर्यादा भंग कर दी।

टिप्पणी—पाने—मद्यपाने। नानाविधरोग भंगपटीयसाम्—विविधव्याधि-नाश-समर्थानाम्, नाना प्रकार की व्याधियों के नाश करने में समर्थ। अतिशयेन पटुः इति पटीयान्, समर्थ, पटु+ईयसुन्। नाना विधा येषां ते नानाविधाः (बहुव्रीहि), नानाविधाश्च ते रोगाः इति नानाविधरोगाः (कर्मधारय)। तेषां भंगः इति नानाविधरोगभंगः (ष० त०)। नानाविधरोगभंगे पटीयांसः (समर्थाः) इति नानाविधरोग-भंगपटीयांसः तेषाम् नानाविधरोग-भंग पटीयसाम् (सप्तमी तत्पुरुष), विविध व्याधि-नाश-समर्थानम्। आसवानाम्—मद्यानाम्, शराबों का। आसव—मद्यम्। आसेवनात्—पानात्, उपभोगात, सेवन करने से, आ+सेव्+ल्युट्। स्पृहणीयवयोऽव्यवस्थापनम्—मनोहारि-शरीर-घटनम्, सुन्दर शरीर की गठन। स्पृहणीय—वाञ्छनीय मनोहारी। वयस्—अवस्था। व्यवस्थापनम्—रचनम्। स्पृहणीयं च तद् वयः इति स्पृहणीयवयः (कर्मधारय), खूब सुन्दर उम्र यानी जैसी वाञ्छा करे वैसी उम्र की व्यवस्थापना (रचना) कर लेवे; यदि चाहे कि मैं बीस वर्ष का जवान दिखूँ तो वैसी उम्र बना सकता है—वैसी

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

शरीर-गठना कर सकता है। यदि चाहे कि ३० वर्ष का दिखूँ तो वैसी उम्र बना सकता है—वैसी शरीर-गठना कर सकता है इत्यादि। अहंकार-प्रकर्षात्—दर्पाधिक्यात्, अहंकार की अधिकता के कारण, अहंकारस्य प्रकर्षः तस्मात् अहंकारप्रकर्षात् (ष० तत्पुरुष)। अशेषदुःखतिरस्करणम्—सकलदुःखोपेक्षा। न विद्यते शेषो येषु तानि अशेषाणि (बहुवचन) अशेषाणि च तानि दुःखानि इति अशेषदुःखानि (कर्मधारय)। अशेषदुःखानाम् तिरस्करणम इति अशेषदुःखतिरस्करणम् (ष० त०), सारे दुःखों को तृणवत् समझने का गुण यानी उपेक्षा करने की आदत। अंगजरागदीपनात्—काम-वासना-वृद्धि-करणात्। अंगात् जायते इति अंगजः अर्थात् कामदेवः, अंग+जन्+ड। रागः—इच्छा, वासना। दीपनम्—वृद्धिः, उद्बोधनम्, सुलगना। अंगजश्च रागश्च इति अंगजरागौ (द्वन्द्व), तयोः दीपनम् इति अंगजरागदीपनम्, तस्मात् अंगजराग दीपनात् (ष० त०) कामदेव तथा कामनाओं के सुलग उठने (उमड़ उठने) के कारण। अंगनोपभोगशक्ति-सन्धुक्षणम्—अंगनाः—स्त्रियः। उपभोगशक्ति—सम्भोगक्षमता, सम्भोग करने की क्षमता। सन्धुक्षणम्—उत्तेजनम्, उद्बोधनम्, वृद्धिः। अंगनानाम् उपभोगः इति अंगनोपभोगः (ष० त०), अंगनोपभोगस्य शक्तिः इति अंगनोपभोग-शक्तिः (ष० त०) तस्याः सन्धुक्षणम् इति अंगनोपभोग-शक्ति-सन्धुक्षणम् (ष० त०) स्त्रियों के साथ सम्भोग करने की शक्ति का बढ़ना। अपराधप्रमार्जनात्—दोषाणां क्षमाकरणात्, दोषों के क्षमा करने के कारण। प्रमार्जनम्—क्षमाकरणम्, प्र+मृज्+ल्युट्; अपराधानां प्रमार्जनम् इति अपराध-प्रमार्जनम् तस्मात् अपराध-प्रमार्जनात् (ष० त०), अपराधिनां शत्रूणां वा अपराधस्य क्षमाकरणात्। मनःशल्योन्मूलनम्—मनोव्यथानाशः, मन की व्यथा का नाश। शल्य—बाण, काँटा, व्यथा। उन्मूलनम्—नाशः। मनसः शल्यम् इति मनः-शल्यम् (ष० त०) मन की व्यथा। मनः-शल्यस्य उन्मूलनम् इति मनः शल्योन्मूलनम् (ष० त०), मन की व्यथा का नाश ([illegible]) [illegible]—[illegible]वार्तासूचकैः।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

श्राव्य—श्रावयितुं योग्यानि इति श्राव्याणि, श्रु+णिच्+ण्यत्, सुनाने योग्य बातें। न श्राव्याणि इति अश्राव्याणि (नञ् तत्पुरुष), न सुनाने योग्य बातें, बहुत ही गुप्त बातें। अश्राव्याणि शंसितुं शीलमेषाम् इति अश्राव्यशंसिनः तैः अश्राव्य-शंसिभिः, अश्राव्य+शंस्+णिनिस्ताच्छील्ये, विशेषण है "प्रलापैः" का। न सुनाने योग्य बातों को खोलने वाले (उघाड़ने वाले) (प्रलापों से)। मदिरापान के नशे में चूर होकर शराबी लोग बहुत से प्रलाप करते हैं, बहुत सी अनाप-शनाप बातें बकते हैं। उन्हीं प्रलापों में वे ऐसी गोपनीय बातें भी खोल देते हैं जो दूसरों के सामने नहीं कही जानी चाहिएँ। इसीलिए उन प्रलापों का विशेषण दिया गया है "अश्राव्यशंसिभिः" यानी ऐसे 'प्रलाप' जो अश्राव्य विषयों का वर्णन करते हैं, अश्राव्य विषयों को उघाड़ते हैं। अनर्गलप्रलापैः—अर्गलः, अर्गलम्, अर्गला, अर्गली—सभी शब्द शुद्ध हैं। इनका अर्थ है "वह सिटकिनी अथवा काष्ठदंड या लौहदंड जिससे किवाड़े भीतर से बन्द कर दिये जाते हैं" न विद्यन्ते अर्गलाः येषु येषां वाते अनर्गलाः (बहु०), जिनमें रोक न हो। अनर्गलाश्च ते प्रलापाः इति अनर्गल-प्रलापाः तैः अनर्गलप्रलापैः (कर्मधारय), अनियंत्रितैः अनर्थवचनैः, बेरोक बकवासों से। विश्वासोपबृंहणम्—प्रतीत-संवृद्धिः, विश्वास की वृद्धि। उपबृंहणम्—वृद्धिः, उप+बृह्+ल्युट् विश्वासस्य उप-बृंहणम् इति विश्वासोपबृंहणम् (ष० त०), मदमत्तो भूत्वा अश्राव्यमपि श्रावयति तेन जनानां हृदये विश्वासः समुत्पद्यते यत् अयं सारल्येन अस्मान् अश्राव्यमपि कथयतीति भावः। मत्सराननुबन्धात्—मत्सर—ईर्ष्या अननुबन्ध—अधारणम्, न अनुबन्धः इति अननुबन्धः। मत्सरस्य अननुबन्धः इति मत्सराननुबन्धः तस्मात् मत्सराननुबन्धात् (ष० त०), ईर्ष्या के न धारण करने के कारण, ईर्ष्या न होने देने के कारण। आन-न्दैकतानता—एकतानता—तत्परता, अनन्यवृत्तित्वम्, केन्द्रोन्मुखत्वम्, अन्यत्र अगमनम्, आनन्दस्य एकतानता इति आनन्दैकतानता (ष० त०), आनन्द की अनन्यवृत्तिता अथवा आनन्द का केन्द्रीभूत

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

होना । आनन्द अन्यत्र कहीं भी नहीं जाता, केन्द्रीभूत होकर मद्यप व्यक्ति में ही बना रहता है। फल यह होता है कि रागद्वेष दूर हो जाने के कारण आनन्द ही आनन्द दीखता है । इन्द्रियार्थानाम्—इन्द्रियाणाम् अर्थाः (विषयाः) इति इन्द्रियार्थाः तेषाम् इन्द्रियार्थाणाम्, इन्द्रियविषयाणाम् (ष० त०) । पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ ये हैं—कर्ण, चक्षु, जिह्वा, नासिका, त्वक् (चमड़ा)—। इनके विषय ये हैं—कर्ण का विषय है शब्द (ध्वनि), चक्षु का विषय है रूप, जिह्वा का विषय है रस, नासिका का विषय है गन्ध एवं त्वगिन्द्रिय का विषय है स्पर्श । सातत्येन—नैरन्तर्येण, निरन्तरता से । सततस्य भावः सातत्यम् (नैरन्तर्यम्), सतत ष्यञ् । अनुभवः—उपभोगः, अनु+भू+अप् । ऋदोरप् —सूत्र से ऊकारान्त भू धातु में भाववाचक संज्ञा बनाने के लिये अप् प्रत्यय । संविभागशीलतया—संविभाग—बराबर बराबर हिस्सा बाँटना, संविभागः शीलं (प्रकृतिः) यस्य सः संविभागशीलः तस्य भावः संविभागशीलता तया संविभागशीलतया, बराबर बराबर हिस्सा बाँटने की प्रकृति पड़ जाने के कारण । सुहृद्वर्गसंवर्गणम्—मित्र समूहसंयोजनम्, मित्रों का इकट्ठा होना, संवर्गणम्—संयोजनम्, एकत्रीकरणम् सुहृदां (मित्राणां) वर्गः इति सुहृद्वर्गः (ष० त०) सुहृद्वर्गस्य संवर्गणम् इति । सुहृद्वर्गसंवर्गणम् (ष० त०), मित्र वर्ग का इकट्ठा होना । अनुपमानम्—अद्वितीयम्, न विद्यते उपमानम् यस्य तत् अनुपमानम् (बहुव्रीहि); जिसकी उपमा न हो ऐसा (अङ्गलावण्य) । अङ्गलावण्यम्—शरीरसौन्दर्यम्, शरीर की सुन्दरता, लवणस्य (सुन्दरस्य) भावः इति लावण्यम्, लवण+ष्यञ्, अङ्गानाम्, (शरीरावयवानाम्) अङ्गेषु वा लावण्यम् इति अङ्गलावण्यम् (ष० त०), अङ्गसौन्दर्यम् । अनुत्तराणि—जिससे बढ़कर न हो ऐसे (विलसित) न विद्यन्ते उत्तराः (अधिकाः) येषां तानि अनुत्तराणि (बहु०) । विलसितानि—आमोद-प्रमोदाः, क्रीडाः, मनोविनोद । भयानिहरणात्—त्रासस्य शोकस्य च नाशनात्, भय तथा शोक के हटाने से दूर हो जाने से । भयम्—भी+अच् (एरच्) । आर्ति—

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

दुःखम्। भयं च आर्तिश्च इति भयार्ती (द्वन्द्व), तयोः हरणम् इति भयार्ति-हरणम् तस्मात् भयार्तिहरणात् (ष० त०) । कहा जाता है कि मद्य भय तथा आर्ति (शोक) को हरण कर लेता है। साङ्ग्रामिकत्वम्—संग्रामे साधुः इति साङ्ग्रामिकः, संग्राम+ठक्, साङ्ग्रामिकस्य भावः सांग्रामिकत्वम्, युद्धपटुत्वम्, संग्राम करने की आदत। वाक्पारुष्यम्—वचन-कार्कश्यम्, वाणी की कठोरता, परुष—कठोर। परुषस्य भावः पारुष्यम्, परुष+ष्यञ्। वाचः (वाण्याः) पारुष्यम् इति वाक्पारुष्यम् (ष० त०), वाणी की कठोरता। दारुण—अकरुण, क्रूर, भयकंर। अर्थानां दूषणानि—धन का गड़-बड़ सड़-बड़ व्यवहार, दूसरों के धन को नाजायज तौर पर अपने काम में लगा लेना अथवा दूसरों की जमीन जायदाद को हड़प कर लेना। यथावकाशम्—अवकाशम अनति-क्रम्य इति यथावकाशम् (अव्ययीभाव), मौका पड़ने पर। औपकारि-काणि—उपकार-कर्माणि, उपकार करने वाली, उपकारे साधूनि इति औप-कारिकाणि, उपकार+ठक्। उपशमरतिः—शान्तिप्रियः, शान्ति चाहने वाला, उपशमे रतिः (प्रेम, अभिरुचिः) यस्य स उपशमरतिः (बहु०), शान्ति में प्रेम रहता हो जिसका, अर्थात् जो शान्तिप्रिय हो ऐसा "नर-पतिः"। अभिभवितुम्—धर्षयितुम्, पराभवितुम्, दबाने के लिए अभि+भू+तुमुन्। अरिकुलम्—शत्रु-कुटुम्बम्, शत्रुओं का खानदान, अरीणां (शत्रूणां) कुलम् इति अरिकुलम् (ष० त०)। अरिकुलम् अभिभवितुम्—शत्रुकुल को दबाने (हराने) के लिए। लोकतन्त्रम्—सांसारिकं व्यवहारम्, दुनियावी मामले, पब्लिक मामले। लोकतन्त्रम् अवलम्बितुम्—पब्लिक मामले निपटाने (सँभालने) के लिए। असावपि—असौ+अपि; असौ राजा अनन्तवर्मा। गुरूपदेशम्—गुरु के उपदेश को, गुरोः उपदेशः इति गुरूपदेशः तम् गुरूपदेशम् (ष० त०), जैसे गुरु का उपदेश माना जाता है उस प्रकार राजा ने चन्द्रपालित के उपदेशों को सुना और माना। आदरेण—सम्मानेन, सम्मान के साथ। तस्य मतम्—चन्द्रपालितस्य अनुमतिम्। चन्द्रपालित के मत को।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
अन्ववर्तत—अन्वसरत्, अपालयत् । तच्छीलानुसारिण्यः—नृपाचरणानुगामिन्यः तस्य शीलम् (प्रकृतिः) इति तच्छीलम् (ष० त०) तच्छीलम् (राजस्वभावम) अनुसरन्ति तच्छीलाः इति तच्छीलानुसारिण्यः, तच्छील + अनु + सृ + णिनि + ङीप् । प्रकृतयः—प्रजाः । तच्छीलानुसारिण्यः प्रकृतयः—राजा की प्रकृति का अनुसरण करने वाली प्रजाएँ । विश्रृङ्खलम्—नियन्त्रणरहितम्, बे-रोकटोक । विगता श्रृङ्खला यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात् तथा विश्रृङ्खलम् । 'श्रृङ्खला' माने 'जंजीर' । जंजीर बाँधने (रोकने) का काम करती है । अतः 'श्रृङ्खला' माने रोक । विश्रृङ्खल का अर्थ है "जंजीर रहित, रोकटोकरहित, मनमाना" । व्यसनानि—दुर्वृत्तानि, दुराचारान्, बुराइयाँ । व्यसन ये हैं—

मृगयाक्षा दिवास्वप्नः परिवादः स्त्रियो मदः ।
तौर्यत्रिकं वृथाट्या च कामजो दशको गुणः ॥
पैशुन्यं साहसं द्रोहः ईर्ष्याऽसूयाऽर्थदूषणम् ।
वाग्दण्डजं च पारुष्यं क्रोधजोऽपि गणोऽष्टकः ॥

शिकार, पाँसा खेलना, दिन में सोना, निन्दा करना, स्त्रियों के साथ उपभोग, घमंड, नाचना-गाना, बजाना, बेमतलब भ्रमण करना—ये दस ऐसे व्यसन है जो कामना से पैदा होते हैं ।

चुगलखोरी, साहस (हिंसा), द्रोह, ईर्ष्या, असूया, अर्थदूषणम् (नाजायज तौर पर दूसरों के धन तथा जमीन जायदाद को हड़प कर लेना), कठोर वाणी, दंडपारुष्य (दंड की कठोरता)—ये आठ व्यसन क्रोध से पैदा होते है ।

दूसरा वचन यह है—

स्त्रियोऽक्षा मृगया पानं वाक्पारुष्यार्थदूषणे ।
दण्डपारुष्यमित्येतन्महाव्यसनसप्तकम् ॥

सात महाव्यसन ये हैं—

(१) स्त्रियों के साथ रमण करना (२) पाँसा खेलना (३) (४) शराब पीना (५) गाली गुफ्ता देना (६) दूसरों की जायदाद तथा

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

सम्पत्ति जब्त कर लेना या नाजायज तौर पर हड़प लेना (७) दंडपारुष्य (कठोरातिकठोर दण्ड देना)।

स्वसमानदोषतया—नृपतुल्यदुराचारितया, स्वेन स्वस्य वा समानाः इति स्वसमानाः; स्वसमानाः दोषा येषु ते स्वसमानदोषाः तेषां भावः स्वसमानदोषता तया स्वसमानदोषतया, अपने ही समान दोषयुक्त होने के कारण। छिद्रान्वेषणाय—दोषानुसन्धानाय, दोष खोजने के लिए। छिद्राणि—दोषाः, अपराधाः। अन्वेषणम्—उद्घाटनम्, प्रकटीकरणम्। छिद्राणाम् अन्वेषणम् इति छिद्रान्वेषणम् तस्मै छिद्रान्वेषणाय (ष० त०), दोषोद्घाटनाय। न अर्यातिष्ट—प्रयत्नम् न अकरोत्, प्रयत्न नहीं करता था। यत् धातु भ्वादिगणी आत्मने पदी सामान्यभूत प्रथम पुरुष एकवचन। समानभर्तृप्रकृतयः—भर्ता च प्रकृतयश्च इति भर्तृप्रकृतयः (द्वन्द्व); समानाः भर्तृप्रकृतयः येषां ते समानभर्तृप्रकृतयः (बहु०), विशेषण है "तन्त्राध्यक्षाः" का। समानभर्तृप्रकृतयः तन्त्राध्यक्षाः—वे तन्त्राध्यक्ष (विभागों के अफसर) जिनका राजा तथा जिनकी प्रजाएँ एक समान थीं, जिनका राजा भी दुराचारी था तथा प्रजाएँ भी दुराचारिणी थीं। तन्त्राध्यक्षाः—भिन्नभिन्न-विभागाध्यक्षाः, सेनाविभागाध्यक्ष, कोषविभागाध्यक्ष, शिक्षाविभागाध्यक्ष, यज्ञयागादिविभागाध्यक्ष। स्वानि स्वानि कर्मफलानि—अपने-अपने कर्मों के फलों को, अपनी-अपनी वसूलयाबी की आमदनी को। कर्मफलानि—से तात्पर्य है "वसूलयाबी की आमदनी"। क्रमात्—शनैः शनैः। आय-द्वाराणि—अर्थागमस्य साधनानि, आमदनी के जरिए। आय—अर्थागम, धन की आमदनी। आयस्य द्वाराणि इति आयद्वाराणि (ष० त०), आमदनी के साधन। व्यशीर्यन्त—क्षीणा बभूवुः, जीर्ण शीर्ण, छिन्न-भिन्न हो गए, नष्ट हो गए। विभोः—राज्ञः। विट—कामुक, धूर्त, लम्पट, परदार-रत पुरुष। विधेय—आज्ञापालक, वशीभूत। विटानां विधेयः इति विटविधेयः (ष० त०) कामुकाज्ञापालकः तस्य भावः विटविधेयता तया विटविधेयतया कामुकाज्ञापालकत्वेन, कामुकों की आज्ञा पालन करने के कारण, कामुक लोग जो जो कहते थे वही वही

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

राजा करता था, इस कारण से। विभोः विटविधेयतया—राजा के कामुकाज्ञापालक हो जाने के कारण। चूँकि राजा कामुकों के वशीभूत हो गया था इस कारण। जहाँ "विटवैधेयतया" पाठ है वहाँ यह अर्थ होगा—कामुकों की मूर्खता से। वैधेय—मूर्ख, बालिश। व्ययमुखानि—व्ययस्य मुखानि इति व्ययमुखानि (ष० त०) खर्चे के दरवाजे (जरिए)। अहरहः—प्रतिदिनम्, अहनि अहनि इति अहरहः। सामन्त—जागीरदार, ताल्लुकदार। पौराः—पुरवासिनः, पुरवासी लोग, पुरे भवाः पौराः पुर+अण्। जानपदाः—देशवासिनः, जनपदे (देशे) भवाः जानपदाः, जनपद+अण्। सामन्ताश्च पौराश्च जानपदाश्च इति सामन्तपौरजानपदाः (द्वन्द्व) तेषु मुख्याः (प्रधानपुरुषाः) इति सामन्तपौरजानपदमुख्याः—(सप्तमी तत्पुरुष)। सामन्तों, पुरवासियों एवं देशवासियों में जो प्रधान प्रधान लोग थे। समानशीलतया—तुल्याचरणतया, एक समान आचरण होने के कारण। समानं शीलं (आचरणं प्रकृतिः वा) येषां ते समानशीलाः (बहुव्रीहि), तेषां भावः समानशीलता, तया समानशीलतया। उपारूढविश्रम्भेण—जातविश्वासेन, जिसके हृदय में विश्वास पैदा हो गया था। उपारूढः (उत्पन्नः) विश्रम्भः (विश्वासः) यस्य स उपारूढविश्रम्भः तेन उपारूढ-विश्रम्भेण (बहु०), विशेषण है "राज्ञा" का। जिस राजा के हृदय में विश्वास पैदा हो गया था, ऐसे राजा द्वारा। सजानयः—सपत्नीकाः, अपनी-अपनी स्त्रियों के साथ। विद्यमानाः जायाः येषां ते सजानयः (बहुव्रीहि), सस्त्रीकाः 'जाया' शब्द को बहुव्रीहि समास के अन्त में "जानि" हो जाता है। पानगोष्ठीषु—मदिरा-पान-मंडलीषु, शराब पीने की मंडलियों में। पानस्य (मदिरायाः) गोष्ठ्यः इति पानगोष्ठ्यः तासु पानगोष्ठीषु (ष० त०), मदिरापान की गोष्ठियों में। अभ्यन्तरीकृताः—प्रवेशिताः, शामिल कर लिए गए अथवा घुसा लिए गए। न अभ्यन्तराः इति अनभ्यन्तराः (नञ् तत्पुरुष)। अनभ्यन्तराः अभ्यन्तराः कृताः इति अभ्यन्तरीकृताः (अभूततद्भावे च्वि प्रत्ययः) अभ्यन्तर+च्वि+कृ+क्त। स्वं स्वम् आचारम्—अपने अपने आचरण

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

को, अपनी अपनी मर्यादा को। अत्यचारिषुः—लंघयामासुः, अतिक्रमण करने (तोड़ने) लगे, अति + चर + सामान्यभूत प्रथमपुरुष बहुवचन।

तदङ्गनासु चानेकापदेशपूर्वमपाचरन्नरेन्द्रः। तदन्तःपुरेषु चामी भिन्नवृत्तेषु मन्दत्रासा बहुसुखैरवर्तन्त। सर्वश्च कुलाङ्गनाजनः पांसुलजनभङ्गिभाषणरतो भग्नचारित्र्य-यन्त्रणस्तृणायापि न गणयित्वा भर्तृन्धातृगणमन्त्रणान्यशृणोत्। तन्मूलाश्च कलहाः सामर्षाणामुदभवन्। अहन्यन्त दुर्बला बलिभिः। अपहृतानि धनवतां धनानि तस्करादिभिः। अपहृत-परिहृतयः[1] प्रहृताः पातकपथाः। हृतबान्धवा हृतवित्ता वधबन्धातुराश्च मुक्तकण्ठमाक्रोशन्नश्रुकण्ठ्यः प्रजाः। दण्डश्चायथाप्रणीतो भयक्रोधावजनयत्। कृशकुटुम्बेषु लोभः पदमधत्त। विमानिताश्च तेजस्विनो मानेनादह्यन्त। तेषु तेषु चाकृत्येषु प्रासरन्परोपजापाः।

तदा च मृगाटवीषु मृगबाहुल्यवर्णनेनाद्रिद्रोणीरनपसार-मार्गाः शुष्कतृणवंशगुल्माः प्रवेश्य द्वारतोऽग्निविसर्गैर्व्याघ्रादिवधे प्रोत्साह्य तन्मुखपातनैरिष्टक्रूरतृष्णोत्पादनेनातिदूर-हारितानां प्राणहारिभिः क्षुत्पिपासाभिवर्धनैर्गुल्मतृणगूढच्छन्न-तटप्रदरपातहेतुभिर्विषममार्गप्रधावनैर्विषमुखीभिः क्षुरिकाभि-श्चरणकण्टकोद्धरणैर्विश्वविसरविच्छिन्नानुयातृतयैकाकीकृतानां यथेष्ट-घातनैर्मृगदेहापराद्धैर्नामेषुमोक्षणैः सपणबन्धमधिरुह्याद्रिशृङ्गाणि दुरधिरोहाण्यनन्यलक्ष्यैः प्रभ्रंशनैराटविकच्छद्मना विपिनेषु विरलसैनिकानां प्रतिरोधैरक्षद्यूतपक्षियुद्धयात्रोत्सवादिसंकुलेषु बलवदनु-प्रवेशनैरितरेषां हिंसोत्पादनैर्गूढोत्पादित[illegible]लोकेभ्योऽप्रियाणि प्रकाशं लब्ध्वा साक्षिषु तद्विख्याप्याकीर्तिगुप्तिहेतुभिः पराक्रमैः परकलत्रेषु सुहृत्त्वेनाभियोज्य जारान्भर्तृनुभयं वा प्रहृत्य तत्साहसोपन्यासैर्योगनारी-हारितानां संकेतेषु प्रागुपनिलीय पश्चादभिद्रुत्याकीर्तनीयैः

१. परिभूतयः इत्यपि पाठः।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

प्रमापणैरपप्रलोभ्य विलप्रवेशेषु निधानखननेषु मन्त्रसाधनेषु च विघ्नव्याजसाध्यैर्व्यापादनैर्मत्तगजाधिरोहणाय प्रेर्य प्रत्यपायनिवर्तनैर्व्यालहस्तिनं कोपयित्वा लक्ष्यीकृतमुख्यमण्डलेष्वपक्रमणोदार्याद्यर्थैविवदमानानुपांशु हत्वा प्रतिपक्षेष्वयशःपातनैः सामन्तपुरजनपदेष्वयथावृत्तानप्रकाशमभिप्रहृत्य तद्वैरिनामघोषणैर्योग्याङ्गनाभिरहर्निशमभिरमय्य राजयक्ष्मोत्पादनैर्वस्त्राभरणमाल्याङ्गरागादिषु रसविधानकौशलैश्चिकित्सामुखेनासयोपबृंहणैरन्यैश्चाभ्युपायैरश्मकेन्द्रप्रयुक्तास्तीक्ष्णरसदादयः प्रक्षपितप्रवीरमनन्तवर्मकटकं जर्जरमकुर्वन् ।

हिन्दी अनुवाद—राजा अनेक बहाने बनाकर उनकी स्त्रियों के साथ दुराचार करने लगा और वे (सामन्तपौरजानपद) भी निर्भीक (मन्दत्रासाः) होकर उसकी आचरण-भ्रष्ट रानियों के साथ खूब सुख-पूर्वक बरतने लगे (व्यवहार करने लगे) । कामुक लोगों की हावभावभरी कथनशैली में निरत सारी स्त्रियाँ चारित्र्यरूपी बन्धन को तोड़ कर, अपने पतियों को तृणवत् भी न समझती हुई, जार लोगों की मन्त्रणाएँ सुनने लगीं । असहिष्णु (सामर्ष) पुरुषों में ऐसे कलह पैदा हो गए जिनकी जड़ (जिनका मूल कारण) चरित्र-हीनता थी । दुर्बल लोग बलवानों द्वारा मार डाले गए । धनवानों का धन चोरों आदि द्वारा लूट लिया गया । जिन पाप के रास्तों में से परिभूति (परिभव-तिरस्कार अथवा पराजय की आशंका) निकल गई थी वे कुचले गए (अर्थात् उन पापमार्गों पर चलना शुरू हो गया) ।

जिन प्रजाओं के बन्धु-बान्धव मार डाले गए थे, और जिनका धन लूट लिया था, जो वध (कतल) तथा बन्धन (कैद) से आतुर (व्याकुल, परेशान) हो गई थीं, वे कण्ठों में आँसू भर-भर, मुक्त-कंठ (गला फाड़ कर) रोने लगीं । अनुचित रूप से दिये गये हुए दंड ने प्रजा के हृदय में) भय तथा क्रोध पैदा कर दिया (अर्थात् नाजायज तरीके से दंड दिया जाना शुरू हो गया, इसलिए प्रजा भयभीत हो गई, साथ ही साथ क्रोध से मारे भभक भी उठी) । गरीब कुटुम्बों में लोभ ने पाँव जमा लिया (लोभ ने पदार्पण किया, लोग लोभी हो गए) । जिन तेजस्वी व्यक्तियों का अपमान हुआ था,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

वे मान (स्वाभिमान, आत्मगौरव) के कारण जलने लगे। शत्रुओं के उपजाप (षड्यन्त्र), नाना प्रकार के कुकृत्यों के रूप में फैलने लगे।

[नोट—शत्रु अश्मकदेश के राजा वसन्तभानु के गुप्तचरों ने अनन्तवर्मा की सेना का नाश करने के लिए जिन जिन साधनों का प्रयोग किया, उनका वर्णन आगे इस लम्बे वाक्य में है।]

(मृगयु (व्याध) का वेष बनवा कर) वन्यपशुओं से भरे वनों में, मृगों की अधिकता के वर्णन से (अधिक मृगों के होने की लालच दिखाकर), सूखी घास, बाँस एवं झाड़ियों से भरी हुई तथा निष्क्रमण (निकलने के मार्ग) से हीन पर्वत की घाटियों में घुसा कर, (घाटी के मुँह पर) आग लगा कर, व्याघ्रादि के वध के लिए प्रोत्साहित करके उनके (व्याघ्रादि के) मुख में डाल कर अच्छे कुएँ की (मिलने की) तृष्णा पैदा कर, अत्यन्त दूर ले जाकर, प्राण-हारिणी भूख तथा प्यास को बढ़ा कर, घास तथा झाड़-झखाड़ से छिपे हुए ऊँचे तथा नीचे स्थानों पर से गिरा देने ही के हेतु (गिरा देने की नीयत से) विषम (ऊँचे नीचे) मार्ग पर दौड़वा कर, जहर-बुझे-हुए-मुख-वाले चाकुओं से पाँव में लगे हुए काँटों को निकाल कर, चारों ओर (अथवा इधर उधर) चले जाने के कारण (उनके) अनुयायियों को तितर बितर कर, उनको अकेला (अथवा निस्सहाय) बना कर, स्वेच्छानुसार उनका वध करा कर, "ये बाण मृगों की देह पर मारे गए थे पर लक्ष्य च्युत हो गए" इस बहाने से उन्हीं को बाण मार कर, होड़ लगा कर दुरधिरोह (मुश्किल से चढ़े जा सकने वाले) पर्वत-शृङ्गों पर चढ़ कर, तथा बिना किसी के द्वारा दिखाई पड़े हुए (उन्हें पर्वत चोटी से) गिरा कर, जंगलों में वनवासियों का वेष धारण कर, कुछ थोड़े से सैनिकों को रोक कर और औरों को जुआ में, पक्षियों की लड़ाई में, यात्रा आदि के उत्सव की भीड़ों में, जबर्दस्ती भेज कर (घुसा कर) और उनकी हिंसा करवाकर, गुप्त रूप से जिनके ऊपर विपत्ति ढहवा देते थे उन से खुल्लम खुल्ला विरुद्ध प्रतिक्रिया पाकर और उस विरोध

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

(बुराई) को साक्षियों के सामने घोषित कर (यानी साक्षियों को बुराइयाँ दिखाकर) फिर (अपनी) अकीर्ति को मिटाने वाले पराक्रमों से (यानी अपनी कीर्ति की रक्षा-हेतु पराक्रम दिखला कर), दूसरों की स्त्रियों के साथ मित्र की हैसियत से सम्बन्ध करा कर, जारों को तथा पतियों को अथवा दोनों को मार कर, उन (जारों) के धृष्टता-पूर्ण कार्यों को (प्रजा के सामने) घोषित कर, संकेत-स्थानों में पहिले ही से छिपकर, बाद में आक्रमण कर, विश्वासघाती स्त्रियों के द्वारा लाए हुए पुरुषों को अवर्णनीय उपायों से कतल करवा कर; खजानों को खोदने के लिए तथा मन्त्र साधने के लिए (उभाड़ कर) बिलों (गुफाओं) में घुसा कर, फिर विघ्न के बहाने से वध कर, मतवाले हाथियों पर चढ़ने के लिए प्रेरित कर (मतवाले हाथी से होने वाले) खतरे को हटाने के उपायों से मुँह मोड़ कर, दुष्ट हाथी को क्रोधित कर मुख्य मुख्य लक्ष्यी-कृत (निर्दिष्ट) पुरुषों की मंडली में (उस हाथी को हाँक कर, बपौती जमीन-जायदाद तथा धनादि के लिए (मुक-दमा) लड़ने वालों को एकान्त में वध कर, विरुद्ध पक्षवालों के ऊपर दोषारोपण कर, जागीरदारों के पुर तथा जनपद (देश) में अनुचित रूप से व्यवहार करने वालों (अत्याचारियों) को गुप्तरीति से मार कर, (फिर) उनके शत्रुओं का नाम लगा कर, सुन्दर स्त्रियों के साथ दिनरात रमण करवा कर राज-यक्ष्मा (तपेदिक) का रोग पैदा करा कर, वस्त्र, आभूषण, माला, उबटन इत्यादि में जहर मिला देने की चातुरी से, दवाई करने के बहाने से रोग को बढ़ाकर, तथा और भी अन्य उपायों से अश्म-केन्द्र द्वारा नियुक्त तीक्ष्ण विष इत्यादि देने वालों ने अनन्तवर्मा की सेना के वीरों को नष्ट कर (सेना को) जर्जर (छिन्न-भिन्न) कर दिया।

स्पष्टार्थ—तन्मूलाश्च कलहाः सामर्षाणामुदभवन्—एक स्त्री अनेक जारों से फँसी रहती थी (जब प्रेमी देखता था कि मेरी प्रेमिका के साथ अन्य जार का भी सम्बन्ध है तो वह प्रकृत्या "सामर्ष"—क्रोधयुक्त—हो जाता था। इस प्रकार के क्रोध-युक्त पुरुषों के बीच झगड़े पैदा हो

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

गए। इन झगड़ों का मूल कारण था कुलांगनाओं का चरित्र भ्रष्ट होना। अथवा यों कहिए कि जब सम्मानित तथा प्रतिष्ठित पुरुषों ने देखा कि हमारी स्त्रियों तथा बहू बेटियों के साथ अमुक बदमाश का सम्बन्ध हो गया है तो वे (सामर्षाः) क्रुद्ध हुये। उन्होंने बदमाशों तथा जारों से कहा कि तुम हमारे घर पर न आया करो। इस पर जारों ने बुरा माना। बस इसी पर कलह (लड़ाई) होने लगा।

दण्डश्च अयथाप्रणीतः भयक्रोधौ अजनयत्—अनुचित रीति से दिया हुआ दंड (प्रजा-वर्ग में) भय तथा क्रोध पैदा करने लगा। यानी जिसे दंड मिलना चाहिए था उसे दंड न मिलता था, और जिसे दंड न मिलना चहिए था उसे दंड मिलता था। इससे प्रजा व्याकुल हो गई। बहुत से लोग बहुत ही भयभीत हो गए। बहुतों के मन में राजा के प्रति महान् क्रोध भभक उठा।

कृशकुटुम्बेषु लोभः पदमधत्त—गरीब कुटुम्बी लोग बड़े लालची हो गए।

तेषु तेषु चाकृत्येषु प्रासरन् परोपजापाः—शत्रुओं द्वारा नियुक्त गुप्तचर नाना प्रकार के कुकृत्यों में फैल गए अर्थात् वे गुप्तचर नाना प्रकार के कुकृत्य कर राजा की शक्ति को क्षीण करने लगे।

मृगबाहुल्य-वर्णनेन अद्रिद्रोणीः अनपसारमार्गाः शुष्क-तृण-वंशगुल्माः प्रवेश्य—"अमुक घाटी में बहुत मृग रहते हैं" इस प्रकार के वर्णन द्वारा राजा के सैनिकों के हृदय में लालच पैदा करते थे। इस ढग से लालच दिलाकर सैनिकों को पर्वत की घाटियों में घुसा देते थे। घाटियाँ ऐसी थीं जिनमें से बाहर निकलना असम्भव था। दूसरी विपत्ति यह रहा करती थी कि वे घाटियाँ सूखी घासों, बाँस के पेड़ों तथा झाड़-झखाड़ों से भरी रहा करती थीं।

इष्टकूपतृष्णोत्पादनेन अतिदूरहारितानां प्राणहारिभिः क्षुत्-पिपासाभिवर्धनैः—इष्ट (अभिवाञ्छित), जैसा चाहते हो वैसा।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
चन्द्र-पालित सैनिकों से कहता था कि अमुक स्थान पर चलो। वहाँ चल कर तुम जैसा कुआँ चाहते हो वैसा कुआँ तुम्हें मिलेगा, खूब पानी पीना और प्यास बुझाना। इस प्रकार सुन्दर कुआँ मिलने की तृष्णा (लालच) पैदा कर सैनिकों को बहुत दूर लिवा ले जाता था। लम्बी यात्रा करने से उन्हें ऐसे जोर की भूख और प्यास लगती थी कि उनके प्राण निकले जाते थे।

गुल्म तृणगूढच्छन्न-तट-प्रदर-पातहेतुभिः विषममार्ग-प्रधावनैः—झाड़ झंखाड़ तथा सूखी घासों से तट (पहाड़ों की ढाल) तथा प्रदर ढके रहते थे। चन्द्रपालित क्या करता था कि सैनिकों को विषम (उच्चनीच) मार्गों पर दौड़ने के लिए प्रेरित करता था। जब सैनिक ऊँचे नीचे मार्गों से दौड़ते थे तो वे उन्हीं गुप्त तटों तथा प्रदरों में गिर पड़ते थे जो कि गुल्मों तथा तृणों से ढके रहा करते थे।

विषमुखीभिः क्षुरिकाभिः चरण-कण्टकोद्धारणैः :—जहर बुझी हुई छूरियों से सैनिकों के पाँव में लगे हुए कांटों को निकालता था ताकि जहर के प्रभाव से सैनिक मर जायँ।

विष्वक्-विसर-विच्छिन्नानुयातृतया एकाकीकृतानां यथेष्टघातनैः—राजा के अनुयायियों को विष्वक् (चारों ओर, इधर उधर) जाने के लिए (विसर) प्रोत्साहित करता था। इससे वे अनुयायी विच्छिन्न (तितर बितर—एक दूसरे से फूट कर अलग) हो जाते थे। जब वे इस प्रकार एक दूसरे से फूट कर अलग हो जाते थे, तब उनमें से हर एक एकाकी (अकेला) हो जाता था। जब हर एक अकेला पड़ जाता था तो स्वेच्छानुसार उसका वध करवाता था (यथेष्टघातनैः)।

मृगदेहापराद्धैः नाम इषुमोक्षणैः—हिरनों के शरीर पर बाण छोड़ने का बहाना करता था। परन्तु वे बाण मृग-शरीरों से लक्ष्य च्युत (असफल) हो जाते थे और जाकर सैनिकों को लगते थे। चन्द्रपालित द्वारा नियुक्त गुप्तचर घोषणा तो यह करते थे कि हम लोगों ने मृगों पर
CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

बाण मारा था, पर क्या करें बाण निशाना चूक गया और गलती से सैनिक को लग गया—इस प्रकार न जाने कितने सैनिकों को मार डाला।

सपणबन्धम् अधिरुह्य अद्रिशृंगाणि दुरधिरोहाणि—'जो सबसे पहिले पर्वत-शृंग पर चढ़ जायगा उसको १००) इनाम दिया जायगा" आदि आदि—होड़ लगाकर सैनिकों को ऐसे पर्वत-शृंगों पर चढ़ा देता था जो बड़े ही दुरधिरोह होते थे यानी जिन पर चढ़ना महा खतरनाक था। जब सैनिक उन पर्वत-शृंगों पर चढ़ जाते थे तो ये बदमाश लोग उन्हें ऊपर से इस प्रकार ढकेल देते थे कि कोई देख न पावे (अनन्य-लक्ष्यैः)। इस प्रकार ढकेल कर उनका प्राण ले लेते थे।

आटविकच्छद्मना विपिनेषु विरलसैनिकानां प्रतिरोधैः—चन्द्रपालित के बदमाश लोग अरण्य-निवासियों का वेष धारण कर उन सैनिकों को एकान्त स्थान में रोक लेते थे (प्रतिरोधैः) जो विरल (अकेले) पड़ जाते थे।

अक्षद्यूत-पक्षियुद्ध-यात्रोत्सवादिसंकुलेषु बलवत् अनुप्रवेशनैः इतरेषां हिंसोत्पादनैः—जुए की खेल, पक्षियों (तीतर इत्यादिकों) की लड़ाइयों, तथा यात्रोत्सव (मेला वगैरह) में बड़ी भीड़ हुआ करती है। ऐसी भीड़ों में जबर्दस्ती सैनिकों को भेज दिया करते थे, और भेज कर उनकी हिंसा करवा दिया करते थे। उन सैनिकों को ऐसी प्रेरणा और प्रोत्साहन दिया करते थे कि सैनिक लोग, इच्छा न होने पर भी, उन भीड़ों में चले जाते थे।

गूढोत्पादितव्यलीकेभ्यः अप्रियाणि प्रकाशं लब्ध्वा साक्षिषु तद् विख्याप्य अकीर्ति-गुप्ति-हेतुभिः पराक्रमैः—बहुतों के ऊपर छिपे-छिपे दुःख ढहा देते थे। जब वे दुःख से पीड़ित होकर, बदले में, उन दुष्टों के प्रति खुलम खुल्ला कोई अप्रिय कार्य (अप्रियाणि) करते थे, तो उस अप्रिय कार्य को साक्षियों (प्रजा के लोगों) को दिखाते थे (विख्याप्य)। तदनन्तर यह कह कर पराक्रम दिखलाते थे (अथवा हिंसा का कार्य करते थे) कि हम अपनी अकीर्ति (बदनामी) को दूर करने के लिए (गुप्ति)

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
तथा अपनी प्रतिष्ठा कायम रखने के निमित्त बदला लेने के ऐसा हिंसा-कार्य कर रहे हैं।

परकलत्रेषु सुहृत्त्वेन अभियोज्य—यह कह कर पराई स्त्रियों के साथ अनन्तवर्मा के सैनिकों का सम्बन्ध करवा देते थे कि ये स्त्रियाँ हमारी सुहृद् हैं, तुम लोग स्वेच्छानुसार इनके साथ रमण करो। अथवा स्त्रियों से यह कहते थे कि ये सैनिक हमारे सुहृद् हैं। ऐ स्त्रियों, आप लोग इन सैनिकों के साथ खूब रमण करें।

तत्साहसोपन्यासैः—साहस—का अर्थ है हिंसायुक्त कार्य। उन सैनिकों के साहस (हिंसायुक्त कार्यों) को जनता में घोषित कर। उपन्यासैः घोषणैः। तेषां (सैनिकानां) साहसानि इति तत्साहसानि। तत्साहसानाम् उपन्यासाः इति तत्साहसोपन्यासाः तैः।

योगनारी-हारितानां प्रमापणैः—विश्वास-घातिनी स्त्रियों (योग नारी) को नियुक्त कर देते थे और कह देते थे कि तुम लोग जितने सैनिकों को हो सके उतने सैनिकों को फुसला कर तथा काम वासना-तृप्ति का लोभ दिला कर अमुक स्थान पर ले चलो। हम लोग उस स्थान पर पहिले ही से छिपे बैठे रहेंगे। जब तुम सैनिकों को लेकर आओगी तो हम लोग उनके ऊपर आक्रमण कर अपना कार्य सिद्ध करेंगे (उनका वध करेंगे)। इस प्रकार, अनेक सैनिकों का अकीर्तनीय (अकथनीय) रूप से वध कराकर।

उपप्रलोभ्य बिलप्रवेशेषु निधान-खननेषु मन्त्रसाधनेषु च विघ्न-व्याजसाध्यैः व्यापादनैः—चलो अमुक बिल (गुफा) में बहुत बड़ा खजाना है उसे खोद लाओ। अथवा उस गुफा में बैठकर तुम खूब शान्ति से मन्त्र जप कर मन्त्र सिद्ध कर सकते हो, चलो मन्त्र सिद्ध करो। इस प्रकार से लालच देकर गुफाओं में लिवा ले जाते थे। पीछे से कह देते थे कि खजाना खोदने में फलाँ विघ्न (अड़चन) पड़ गया अथवा मन्त्र सिद्ध करने में फलाँ विघ्न पड़ गया, इसी से वह सैनिक मर गया—इस प्रकार विघ्न का बहाना कर सैनिकों को मरवा डालते थे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

मत्तगजाधिरोहणाय प्रेर्य प्रत्यपायनिवर्तनैः—सैनिकों को ऐसी प्रेरणा देते थे कि वे लोग मतवाले हाथियों पर जाया करते थे। मतवाले हाथी पागलपन के नशे में चूर होकर सैनिकों को मार डालते थे। उस समय ये बदमाश यह न करते थे कि उन पागल हाथियों से बचने का जो भी उपाय (तरीका) हो, उसे करते। उप उपाय को करना तो दूर रहा, उलटा उससे निवर्तन करते थे (उससे मुँह फेर लेते थे और दूर भागते थे)।

व्यालहस्तिनं कोपयित्वा लक्ष्यीकृत-मुख्य-मण्डलेषु अपक्रमणैः—दुष्ट हाथी को भड़का देते थे, गुस्सा दिला देते थे और कुछ मुख्य मुख्य सैनिकों को पहिले ही से अपना लक्ष्य बना लेते थे कि इन्हीं को रौंदवावेंगे। हाथियों को भड़का कर, उन्हीं मुख्य-मुख्य पूर्वनिश्चित व्यक्तियों की मण्डली में हाथियों को हाँक देते थे (अपक्रमणैः)। फिर क्या था। फिर तो हाथी स्वेच्छानुसार उन्हें रौंदता था और उनका वध करता था।

दायाद्यर्थे विवदमानान् उपांशु हत्वा प्रतिपक्षेषु अयशःपातनैः—जो लोग बपौती जमीन जायदाद के लिए झगड़ा करते थे उन्हें छिपे छिपे, एकान्त में, मारकर, विरोधी पार्टी का नाम लगा देते थे—विपक्षी पार्टी के मत्थे कलङ्क का टीका मढ़ देते थे।

योग्याङ्गनाभिः अहर्निशम् अभिरमय्य राजयक्ष्मोत्पादनैः—सुन्दर-सुन्दर स्त्रियों के साथ भोग विलास करने के लिए उन्हें प्रेरित करते थे। परिणाम यह होता था कि अतिशय विषय भोग के कारण उन सैनिकों का वीर्य क्षीण हो जाता था, और वे शीघ्र ही राजयक्ष्मा (क्षयी) नामक रोग के शिकार हो जाते थे और थोड़े ही दिनों में काल के गाल में चल बसते थे।

टिप्पणी—अनेकापदेशपूर्वम्—विविधव्याजपूर्वकम्, अनेक बहानों से। अपदेश—व्याज, बहाना। न एके इति अनेके (नञ्तत्पुरुष) अनेके च ते अपदेशाः इति अनेकापदेशाः (कर्मधारय)। अनेकापदेशाः पूर्वं यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात् तथा। अपाचरत्—दुराचारमकरोत् दुराचार करता

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

था, अप+चर् अनद्यतनभूत प्रथम पुरुष एक वचन । तदन्तःपुरेषु—राज्ञः स्त्रीषु, तस्य (राज्ञः) अन्तःपुराणि इति तदन्तःपुराणि तेषु (ष० त०), राजा की रानियों पर। चामी—च+अमी, असौ अमू असी, असुम् अमू अमून् आदि अदस् शब्द के रूप पुंलिङ्ग में चलते हैं। अमी—वे अर्थात् सामन्त-पौर-जानपदमुख्याः । भिन्नवृत्तेषु—विनष्टचरित्रेषु, भ्रष्टाचरण वाली। भिन्न—भिद्+क्त, विनष्टम् भ्रष्टम् पतितम्। वृत्त—आचरण। भिन्नं वृत्तं येषां तानि भिन्नवृत्तानि तदन्तःपुराणि तेषु भिन्नवृत्तेषु (बहु०) विशेषण है "तदन्तःपुरेषु" का। मन्दत्रासा अमी निर्भयाः,—निर्भीक होकर वे। मन्दः (निर्बलः, अति स्वल्पः) त्रासः येषां ते मन्दत्रासाः (बहु०)। विशेषण है "अमी" का। पांसुलजनभङ्गिभाषणरतः—कामुक पुरुषों की टेढ़ी मेढ़ी बातों को मानने में तत्पर। पांसुल—कामुक पुरुष। भङ्गिभाषणम्—वक्र भाषित, टेढ़ी मेढ़ी बातें, ऐसी बातें जिनका ऊपर से तो बहुत सीधा सादा और अच्छा अर्थ होता हो, पर जो अन्दर से—गुप्त रूप से—व्यभिचार तथा दुराचार से भरा होता हो पांसुलाश्च ते जना इति पांसुलजनाः (कर्मधारय) तेषां भङ्गिभाषणम् इति पांसुलजनभङ्गिभाषणम् (ष० त०) तस्मिन् रतः इति पांसुलभङ्गिभाषणरतः (सप्तमी तत्पुरुष)।

भग्नचारित्र्ययन्त्रणाः—विनष्ट-सदाचार-बन्धनः, नष्ट हो गया था सदाचार रूपी बन्धन जिसका। यानी उन्होंने अपना सदाचाररूपी बन्धन तोड़ दिया था। भग्न—टूटा हुआ, भञ्ज्+क्त। चरित्रम् एवं चारित्र्यम्, चरित्र+ष्यञ्+स्वार्थे)। यन्त्रणम्—बन्धनम्। चारित्र्यम् एवं यन्त्रणम्, इति चारित्र्ययन्त्रणम् (अवधारणापूर्वपद कर्मधारय)। भग्नं चारित्र्य-यन्त्रणं यस्य सः भग्नचारित्र्ययन्त्रणः (बहु०), विशेषण है "सर्वः कुलाङ्गनाजनः" का। कुलाङ्गनाजनः—कुल-वधूसमूहः । अङ्गनाः स्त्रियः। कुले (उत्तमे वंशे) जाता इति कुलजाताः (सप्तमी तत्पुरुष) कुलजाताः अङ्गनाः इति कुलाङ्गनाः (मध्यमपदलोपि कर्मधारय), कुलीन स्त्रियाँ, अच्छे घरानों की स्त्रियाँ, न कि वेश्याएँ। तृणाय अपि न गणयित्वा—लेशमात्रम् अपि आदरम् अकृत्वा,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

तिनके के बराबर भी, न समझ कर, "तृणाय" में "मन्यकर्मण्यनादरे विभाषाऽप्राणिषु" नियम से चतुर्थी हुई।

धातृगणमन्त्रणानि अशृणोत्—जाराणां वचनमपालयत्, धातृणां गणः इति धातृगणः (ष० त०), जार, लम्पट। धातृगणस्य मन्त्रणानि इति धातृगणमन्त्रणानि (ष० त०)। जारों की सलाह (उपदेश)। तन्मूलाः कलहाः—तज्जनिताः संघर्षाः—तत् अर्थात् भिन्नवृत्तम् एव मूलं येषां ते तन्मूलाः (बहु०), वह भ्रष्टाचरण ही जिनकी जड़ (मूल कारण) था ऐसे कलह (झगड़े)। सामर्षाणाम्—असहिष्णूनाम्, असहनशील लोगों का। विद्यमानः अमर्षः (क्रोधः) येषां ते सामर्षाः (बहु०), तेषां सामर्षाणाम्।

अपहृतपरिभूतयः अथवा अपहृत-परिहृतयः—इस प्रकार के दो पाठ हैं। अपहृतपरिहृतयः = अपहृताः (गताः) परिहृतयः (तिरस्काराः त्यागाः वा) येषां ते अपहृतपरिहृतयः (बहु०), तथोक्ताः पातकपथाः, ऐसे पातकपथ जिनमें समाज द्वारा त्याग दिए जाने का भय अथवा तिरस्कार कर दिए जाने का भय नहीं रह गया था; यानी पातकपथ भी अनुसरण करे और समाज द्वारा त्यागे जाने अथवा तिरस्कार किए जाने का कोई भय भी न रहे, परिहृति—परि+हृ+क्तिन्, इसका वही अर्थ है जो "परिहार" का है; 'परिहार' का अर्थ होता है "त्याग"। अपहृतपरिभूतयः—परिभूति—पराभव, तिरस्कार, हार या डाट फटकार, अपहृताः परिभूतयः येषां ते अपहृत-परिभूतयः (बहु०) जिनमें पराभव (हार) का या डाटे फटकारे जाने तथा तिरस्कार किए जाने का डर न रह गया था ऐसे "पातकपथाः"। पातकपथाः—पातकानां पन्थानः इति पातकपथाः (ष० त०), "ऋक्पूरब्धूः पथामानक्षे" नियम से "पथिन्" के बाद समास के अन्त में "अप्" प्रत्यय जुड़ गया है। प्रहृताः—इसका शब्दार्थ है "मारे गए" "कुचले गए"। "पातकपथाः प्रहृताः" का अर्थ है "पाप के मार्ग कुचले गए" यानी पाप के मार्ग पर खूब चलाई हुई—पाप के मार्ग पर खूब यात्रा की गई। इस प्रकार पाप का मार्ग पाँवों से खूब कुचला गया यानी पाप का मार्ग खूब

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

अनुसरण किया गया। वधबन्धातुराः—प्राणघातेन तथा कारागारनिषेवणेन पीडिताः, वध—कतल। बन्ध—कैद। सजा। वधश्च बन्धश्च इति वधबन्धौ (द्वन्द्व), वधबन्धाभ्याम् आतुराः (व्याकुलाः) इति वध-बन्धातुराः (तृतीया तत्पुरुष), कतल तथा कैद से पीडित (परेशान)। मुक्तकण्ठम्—मुक्तः कण्ठः यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात् तथा मुक्तकण्ठम्, गला फाड़ फाड़कर। आक्रोशन्—व्यलपन्, रोती थी, आ+क्रुश् अनद्यतनभूत प्रथम पुरुष बहुवचन। अश्रुकण्ठ्यः—वाष्पगद्गदस्वराः, जिनके कण्ठों में आँसू भरे थे वे। अश्रूणि कण्ठे यासां ताः अश्रुकण्ठ्यः (बहु०), आँसू भरा था गले में जिनके ऐसी प्रजाएँ, अर्थात् जिनके गले आँसू से रुँधे हुए थे। अयथाप्रणीतः—अन्यायकृतः, प्रणीतः—दत्तः, प्र+नी+क्त। यथा (उचितरीत्या) प्रणीतः इति यथाप्रणीतः, न यथाप्रणीतः इति अयथाप्रणीतः (नञ् तत्पुरुष), उचित रीति से नहीं दिया गया हुआ दंड।

कृशकुटुम्बेषु—दरिद्र-परिवारेषु, गरीब घरानों में, कृशानि च तानि कुटुम्बानि इति कृशकुटुम्बानि तेषु कृशकुटुम्बेषु (कर्मधारय)। लोभः पदम् अधत्त—लोभः प्रवेशं कृतवान् लोभ ने पाँव रक्खा अर्थात् लोभ समा गया। विमानिताः—अपमानिताः अनादृताः, असत्कृताः, अनादर किए गए हुए, वि+मन्+णिच्+क्त। तेजस्विनः—सत्त्ववन्तः, प्रतापवन्तः, तेजस्वी लोग, तेजः विद्यते एषाम् इति तेजस्विनः, तेजस्+विनि। "अस् माया मेधा स्रजो विनिः"—इति विनिप्रत्ययः। मानेन—क्रोधेन, स्वाभिमानेन, स्वाभिमान से। अदह्यन्त—महान्तं क्रोधमकुर्वन्—जल उठे, दह् धातु कर्मवाच्य अनद्यतनभूत प्रथमपुरुष बहुवचन। तेषु तेषु—विभिन्न-प्रकारकेषु, भिन्न भिन्न प्रकार के। अकृत्येषु—कुकर्मसु, कुकृत्यों में, दुराचारेषु, पापेषु। प्रासरन्—फैल गए। परोपजापाः—शत्रुकृताः भेदाः, शत्रुओं द्वारा किये गए हुए षड्यन्त्र, शत्रुओं के षड्यन्त्र। पर—शत्रु। उपजाप—भेद, षड्यन्त्र। परेषाम् (शत्रूणाम्) उपजापाः इति परोपजापाः (ष० त०)। मृगबाहुल्यवर्णनेन—पशवाधिक्यकथनेन, मृगाणाम् (पशूनाम्) बाहुल्यम् (आधिक्यम्) इति मृगबाहुल्यम् (ष० त०),

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

मृगबाहुल्यस्य वर्णनम् इति मृगबाहुल्यवर्णनम् तेन मृगबाहुल्यवर्णनेन (ष० त०) पशुओं की अधिकता के वर्णन से, यानी यह कह कर कि अमुक पर्वत-घाटी में शिकार के योग्य बहुत ज्यादा जानवर पाए जाते हैं। अद्रिद्रोणीः—अद्रि—पर्वत; द्रोणी पर्वतमध्यपद्धती, पर्वतों की घाटियाँ। द्रोणी—घाटी; अद्रीणां द्रोण्यः इति अद्रिद्रोण्यः ताः अद्रिद्रोणीः (ष० त०), द्वितीया बहुवचन है। अनपसारमार्गाः—निर्गमनमार्गरहिताः। अपसार—निष्क्रमण, निर्याण, निकलना। अपसारस्य मार्गाः इति अपसारमार्गाः (ष० त०), निकलने के रास्ते। अविद्यमानाः अपसारमार्गाः यासु ताः अनपसारमार्गाः (बहु०), विशेषण है "अद्रिद्रोणीः" का और द्वितीया बहुवचन है। शुष्कतृणवंशगुल्माः—तृणानि च वंशाश्च गुल्मानि च इति तृण वंशगुल्मानि गुल्माः वा (द्वन्द्व), शुष्कानि च तानि तृणवंश-गुल्मानि यासु ताः शुष्कतृणवंशगुल्माः। 'गुल्म' शब्द पुलिङ्ग तथा नपुंसक लिङ्ग दोनों लिङ्ग है। अथवा शुष्काणि च तानि तृणानि इति शुष्क-तृणानि (कर्मधारय)। वंशानां गुल्मानि इति वंशगुल्मानि (षष्ठी तत्पुरुष)। शुष्कतृणानि वंशगुल्मानि च यासु ताः शुष्कतृण वंशगुल्माः (बहुब्रीहि), जिनमें सूखी सूखी घास तथा बाँस के ढेर विद्यमान थे। (बहु०) विशेषण है "अद्रिद्रोणीः" का। प्रवेश्य—घुसेड़ कर, भेजकर प्र+विश्+णिच्+ल्यप्। द्वारतः—(द्रोणी के) दरवाजे पर, द्वार+तसिल्। अग्निविसर्गैः—अनलप्रदानैः। आग लगाकर। विसर्गः—दानम् वि+सृज्+घञ्, अग्नेः विसर्गाः इति अग्निविसर्गाः तैः अग्निविसर्गैः (ष० त०), अग्नि के जलाने से, अग्नि लगाकर। प्रोत्साह्य—उत्साहमुत्पाद्य, उभाड़ कर, जोश बढ़ाकर, प्र+उत्+सह्+णिच्+ल्यप्। व्याघ्रादिवधे—व्याघ्रः आदिः येषां ते व्याघ्रादयः (बहु०) तेषां वधः इति व्याघ्रादि-वधः तस्मिन् व्याघ्रादिवधे (ष० त०), व्याघ्र आदि के वध में यानी व्याघ्र आदि के वध के लिए। तन्मुखपातनैः—व्याघ्रादीनां मुखे प्रक्षेपणैः, व्याघ्रादिकों के मुँह में फेंककर। तेषाम् (व्याघ्रादीनां) मुखानि इति तन्मुखानि (ष० त०), तन्मुखेषु पातनानि इति तन्मुखपातनानि तैः

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
तन्मुखपातनैः (सप्तमीतत्पुरुष), उन व्याघ्रादिकों के मुँह में गिराने से यानी डाल कर। पातन = पत् + णिच् + ल्युट्।

इष्टकूपतृष्णोत्पादनेन—अभिलषितकूप-प्राप्ति-लालसाम् उत्पाद्य, 'अमुक-स्थाने अत्यभीष्टः कूपोऽस्ति, तस्यैव जलं पेयम्' इत्थं कथयित्वा, तृष्णामुत्पाद्य। अमुक स्थान पर चलो। बड़ा अच्छा कुआँ मिलेगा। उसका बड़ा सुस्वादु जल है, उसीका जल पीना चाहिए। इस प्रकार की लालच पैदा कर। इष्ट—अभिवाञ्छित। तृष्णा—लोभ, इष्टश्चासौ कूपश्च इति इष्टकूपः (कर्मधारय), मन चाहा हुआ कुआँ। इष्टकूपस्य तृष्णा इति इष्टकूपतृष्णा (ष० त०), मनचाहे कुएँ की लालच। इष्टकूपतृष्णायाः उत्पादनम् इति इष्टकूपतृष्णोत्पादनम् तेन इष्टकूपतृष्णोत्पादनेन (ष० त०), मनचाहे कूप की लालच के पैदा करने से। अतिदूरहारितानाम्—हारित—नीत, ले जाए गए हुए। हृ + णिच् + क्त। अतिशयितं दूरम् अतिदूरम्, अतिदूरं हारिताः, अतिदूरहारिताः (नीताः) तेषाम् अतिदूरहारितानाम्, बहुत दूर ले जाए गए हुए सैनिकों की। प्राण-हारिभिः—जीवनान्तकरैः, प्राण हरण करने वाले। प्राणान् हरन्ति इति प्राणहारिणः तैः प्राणहारिभिः (उपपदतत्पुरुष) प्राण + हृ + णिनि, विशेषण है "क्षुत् पिपासाभिवर्धनैः" का। क्षुत्—भूख। पिपासा—प्यास। अभिवर्धन—बढ़ाना। क्षुत् च पिपासा च इति क्षुत्पिपासे (द्वन्द्व), तयोः अभिवर्धनानि इति क्षुत्पिपासाभिवर्धनानि तैः क्षुत्पिपासाभिवर्धनैः (ष० त०)। गुल्मतृण-गूढच्छन्नतटप्रदर पातहेतुभिः—तट—पर्वत का ढाल, ऊँचा हिस्सा। प्रदर—फटान, दरार पात-गिरना, पत् + घञ्। 'गुल्म' शब्द पुंलिङ्ग तथा नपुंसकलिङ्ग दोनों लिङ्ग है, गुल्माश्च तृणानि च इति गुल्मतृणानि (द्वन्द्व)। तटाश्च प्रदराश्च इति तटप्रदराः (द्वन्द्व)। गुल्मतृणैः गूढं (भूयिष्ठं) यथा स्यात्तथा छन्नाः इति गुल्मतृणगूढच्छन्नाः (तृ० त०)। गुल्मतृणगूढच्छन्नाश्च ते तट-प्रदराश्च इति गुल्मतृणगूढच्छन्नतटप्रदराः (कर्मधारय)। तेषु पाताः इति गुल्मतृणगूढच्छन्न-तटप्रदर-पाताः (सप्तमी तत्पुरुष), ते एव हेतवः येषां तानि

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

गुल्मतृणगूढच्छन्न-तटप्रदरपातहेतूनि तैः गुल्मतृणगूढच्छन्न तटप्रदरपात-हेतुभिः (बहु०), विशेषण है "विषममार्गप्रधावनैः" का। अथवा गुल्मतृणगूढच्छन्नतटप्रदर—पातानाम् हेतवः—इति गुल्मतृणगूढ-च्छन्न-तट प्रदर-पात हेतवः तैः (ष० त०)। अर्थात् गुल्मतृणगूढच्छन्न तट-प्रदर से गिरने का कारण (उत्पादक) है "विषममार्ग प्रधावन"।

स्पष्टार्थ—विषममार्ग-प्रधावन से ही गुल्मतृणगूढच्छन्नतटप्रदरपात पैदा होता था; गुल्मतृणगूढच्छन्न-तट-प्रदर में गिरना तभी हो सकता था जब कि "विषममार्गप्रधावन" हो। **विषम-मार्ग-प्रधावनैः**—विषम—ऊँचा नीचा। विषमाश्च ते मार्गाश्च इति विषम-मार्गाः (कर्मधारय) विषम मार्गेषु प्रधावनानि इति विषममार्गप्रधावनानि तैः विषम-मार्ग-प्रधावनैः (सप्तमी तत्पुरुष); विषम (ऊँचे नीचे) मार्गों पर जब सैनिक लोग दौड़ते थे तो इसी कारण से गुल्मतृणगूढच्छन्नतट-प्रदर में पात (गिरना) होता था। **विषमुखीभिः**—विषलिप्ताग्राभिः, जिनके मुख (नोक) पर विष लगा रहता था ऐसी छूरियों से, विषं मुखेषु यासां ताः विषमुख्यः, ताभिः विषमुखीभिः (बहु०), विशेषण है "क्षुरिकाभिः" का। **क्षुरिकाभिः**—छूरियों अथवा उस्तरों से। **चरणकण्टकोद्धरणैः**—चरणेषु लग्नानि कंटकानि इति चरणकंटकानि (मध्यम पदलोपि-कर्मधारय); चरणकंटकानाम् उद्धरणानि (निस्सारणानि—निकालना) इति चरणकंटकोद्धरणानि तैः चरणकंटकोद्धरणैः (ष० त०)। **विष्वक्**—इधर उधर, चारों ओर **विसर**—जाना, घूमना, फिरना। वि+सृ+अप्। **विच्छिन्न**—तितर बितर हो गए हुए, वि+छिद्+क्त। **अनुयातृ**—अनुयायी, परिजन। **एकाकीकृत**—अकेला, निस्सहाय। एक+आकिनिच्। **एकाकीकृत**—निस्सहाय बना दिए गए हुए। विष्वक् (चतुर्दिशम् सर्वासु दिक्षु) विसरः (घूमना फिरना) इति विष्वग्विसरः। विष्वग्विसरेण (सर्वासु दिक्षु गमनेन, भ्रमणेन च) विच्छिन्नाः (परस्परं पृथग्भूताः) अनुयातारः परिचारकाः येषां ते विष्वग्विसरविच्छिन्नानुयातारः (बहु०), जिनके नौकर चाकर (अनुयायी) चारों तरफ घूमने फिरने के कारण विच्छिन्न (तितर बितर) हो गए थे। तेषां भावः विष्वग्विसर

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
विच्छिन्नानुयातृता, तया विष्वग्विसर-विच्छिन्नानुयातृतया; चारों ओर घूमने-फिरने के कारण अनुचरों के तितर बितर हो जाने से अकेला कर दिए गए हुओं का। इसका अन्वय होगा 'एकाकीकृतानाम्' के साथ। मृगदेहापराद्धैः नाम—हरिण शरीरे लक्ष्य-भ्रष्टैः। अपराद्ध—लक्ष्य-च्युत। निशाने से चूक गया हुआ। नाम—इति अलीके, झूठ मूठ घोषित करके मृगाणां देहाः इति मृगदेहाः (ष० त०), तेषु अपराद्धानि (लक्ष्यच्युतानि) इति मृगदेहापराद्धानि तैः (सप्तमी तत्पुरुष), विशेषण है "इषुमोक्षणैः" का। इषु—बाण। इषूणां मोक्षणानि इति इषुमोक्षणानि तैः (ष० त०)।

मृगदेहापराद्धैः नाम इषुमोक्षणैः—ऐसे इषुमोक्षण (बाण छोड़ने) से जिनके बारे में झूठ मूठ यह घोषित कर दिया जाता था कि ये बाण मृग की देह पर छोड़े गए थे, पर निशाना चूक गए और गलती से जाकर अनन्तवर्मा के सैनिकों को लग गए। सपणबन्धम्—पणं कृत्वा, शर्त लगाकर। पणबन्ध—होड़; बाजी। सपणबन्धम्—बाजी (होड़) लगा कर, विद्यमानः पणबन्धः यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात् तथा इति। अधिरुह्य—चढ़कर, अधि+रुह्+ल्यप्। द्रोणिः (स्त्रीलिङ्ग) अथवा द्रोणि (स्त्रीलिङ्ग)—दोनों शुद्ध रूप हैं। अद्रीणां (पर्वतानां) शृंगाणि इति अद्रिशृंगाणि। अद्रिशृङ्गाणि—पर्वतों की चोटियाँ (षष्ठी तत्पुरुष)। दुरधिरोहाणि—दुःखेन अधिरोढुं योग्यानि (शक्यानि) इति दुरधिरोहाणि, जिन पर चढ़ना बड़ा कठिन होता था, दुर्+अधि+रुह्+खल्। अनन्यलक्ष्यैः—केनापि अलक्षितैः, लक्षितुम् योग्यानि (शक्यानि) इति लक्ष्याणि, लक्ष्+यत्, अन्यैः लक्ष्याणि इति अन्य-लक्ष्याणि (तृ० त०), न अन्यलक्ष्याणि इति अनन्यलक्ष्याणि तैः अन्ययं-लक्ष्यैः, जो दूसरों द्वारा न देखा जा सके ऐसे प्रभ्रंशनैः। प्रभ्रंशनैः—पातनैः, ढकेल (गिरा) देने से। प्र+भ्रंश् ल्युट्। अनन्यलक्ष्यैः प्रभ्रंशनैः—इस प्रकार ढकेल देते थे कि कोई देख नहीं पाता था। आटविकच्छद्मना—आरण्यकवेषं कृत्वा, जंगलियों का वेष धारणकर।
CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

अटव्याम् (अरण्ये) चरन्तीति आटविकाः वनवासिनः । अटवी+ठक् । आटविकानां छद्म (कपटम्) इति आटविक-च्छद्म तेन आटविकच्छद्मना (ष० त०) वनवासियों का वेष धारण कर । विपिनेषु—वनेषु । विरलसैनिकानाम्—विरल—तितर बितर हो गए हुए । विरलाश्च ते सैनिकाः इति विरलसैनिकाः तेषां विरलसैनिकानाम् (कर्मधारय), बिखरे हुए (तितर बितर हो गए हुए) सैनिकों का प्रतिरोधैः—रुकावट से (रुकावट करके), प्रति+रुध् घञ् । संकुल—भीड़ । बलवत्—जबर्दस्ती । अनुप्रवेशनैः—प्रेषणैः, घुसाने से, घुसने के लिए प्रोत्साहित करके, अनु+प्र+विश्+णिच्+ल्युट् । इतरेषाम्—अन्येषां केषाञ्चित् योधानाम्, दूसरे लोगों का । इसका अन्वय है "विरल सैनिकानाम्" के साथ । कहने का तात्पर्य यह है कि कुछ सिपाहियों को जंगली आदमियों का वेष धारण कर जंगल में रोक (घेर) लेते थे, और जो बच जाते थे उनको "इतरेषाम्" कहा है । उन लोगों को मरवा डालते थे (हिंसोत्पादनैः) ।

गूढोत्पादितव्यलीकेभ्यः—गूढम् (गुप्तरूपेण) उत्पादितानि व्यलीकानि (दुःखानि) येषां ते गूढोत्पादितव्यलीकाः, तेभ्यः गूढोत्पादित व्यलीकेभ्यः, (बहु०), जिन लोगों के ऊपर छिपे छिपे तौर पर दुःख पैदा करते थे या छिपे छिपे जिनका नुकसान करते थे उन लोगों से । अप्रियाणि—बुराई, क्षति । प्रकाशम्—सर्वसमक्षम्, जन-साधारण के सामने, खुल्लमखुल्ला । साक्षिषु—द्रष्टृषु, देखने वालों पर, यानी देखने वालों के सामने । तद् विख्याप्य—ताः क्षतीः घोषयित्वा, उस अप्रिय (नुकसान या बुराई) को घोषित कर (बतला कर) । अकीर्तिगुप्तिहेतुभिः—न कीर्तिः इति अकीर्तिः (नञ् तत्पुरुष), अकीर्तेः अकीर्त्याः वा गुप्तिः (गूहनम्) इति अकीर्तिगुप्तिः (षष्ठी तत्पुरुष), अकीर्ति गुप्तिः एव हेतुः येषां ते अकीर्तिगुप्तिहेतवः तैः । अथवा अकीर्तिगुप्तेः हेतवः इति अकीर्ति गुप्ति हेतवः तैः अकीर्ति गुप्तिहेतुभिः (षष्ठीतत्पुरुष), विशेषण

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

है "पराक्रमैः" का, वह पराक्रम जो केवल इस कारण दिखलाया जाता था ताकि अकीर्ति (बदनामी) छिपी रह जाय—खुलने न पावे। चन्द्रपालित के गण कहते थे कि हम लोग पराक्रम (शूरता का कार्य) केवल इस कारण से दिखला रहे हैं ताकि हमारा अप्रिय करके हमारी जो बदनामी अथवा बेइज्जती की गई है उसका प्रतीकार हो जाय और बदनामी दूर हो जाय। परकलत्रेषु—अन्येषां स्त्रीषु, दूसरों की स्त्रियों में, परेषां (अन्येषां) कलत्राणि (स्त्रियः) इति परकलत्राणि तेषु परकलत्रेषु (ष० त०)। सुहृत्त्वेन—मित्रत्वेन "इमे सैनिकाः अस्माकं सुहृदः। अयि स्त्रियः यूयम् एभिः सह सम्भोगं कुरुत" इति कथयित्वा। अथवा इमाः स्त्रियः अस्माकं मित्राणि। भोः सैनिकाः, भवन्तः आभिः स्त्रीभिः सह सम्भोगं कुर्वन्तु" इति कथयित्वा। अभियोज्य—सम्मिलन कारयित्वा, परिचय करवा कर, या सम्बन्ध करवा कर, अभि+युज+णिच्+ण्यत्।

जारान्—उपपतीन्, बदमाशों को, व्यभिचारियों को। तत्साहसोपन्यासैः—तेषां जाराणां साहसानि सर्वजनसमक्षम् प्रकाश्य। तेषां साहसानि इति तत्साहसानि (ष० त०), तत्साहसानाम् उपन्यासाः (घोषणानि) इति तत्साहसोपन्यासाः तैः तत्साहसोपन्यासैः (ष० त०) उन जारों के साहस-युक्त कार्यों को पब्लिक के सामने उपन्यास कर (रखकर) खुल्लम खुल्ला बता कर यह घोषित करते थे कि देखो, ये जार लोग परकलत्रों के साथ विषय-भोग करते हैं। जारों का यह विषय भोग "साहस" कहा गया है। योगनारीहारितानाम्—योगनारी—विश्वासघातिनी स्त्रियाँ। "योगो विस्रम्भघाती स्यात्"। हारित—नीत, ले जाए गए हुए, हृ+णिच्+क्त। योगनारीभिः हारिताः (आकृष्य नीताः) इति योगनारी हारिताः तेषाम् योगनारी हारितानाम् (तृ० त०), इसका अन्वय है "प्रमापणैः" के साथ। प्रमापणैः—मार, वधैः, हिंसनैः। योगनारीहारितानां प्रमापणैः—विश्वासघातिनी स्त्रियों द्वारा खींच कर लाए गए हुए सैनिकों के वध से (सैनिकों का वध करवा कर)।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

संकेतेषु—संकेतितेषु स्थानेषु । "संकेत" उस स्थान को कहते हैं जो व्यभिचारिणी स्त्रियों तथा व्यभिचारी पुरुषों द्वारा सम्मिलन के लिए पहिले से ही निश्चित कर लिया जाता है। वह कोई निर्जन स्थान हुआ करता है ताकि उनके दुराचार को कोई देख न सके । प्राक्—प्रथमम्, पहिले ही से। उपनिलीय—प्रच्छन्नो भूत्वा, छिप कर, उप+नि+ली +ल्यप्, पश्चात्—अनन्तरम् । बाद में । अभिद्रुत्य—आक्रम्य अथवा धावित्वा, आक्रमण कर, अथवा दौड़कर, अभि+द्रु+ल्यप् । अकीर्तनीयैः निन्दनीयैः, कीर्तयितुं (कथयितुं) योग्यानि (शक्यानि) इति कीर्तनीयानि, (नञ् तत्पुरुष) कीर्त्+अनीयर्, न कीर्तनीयानि इति अकीर्तनीयानि तैः अकीर्तनीयैः अकथनीयैः । बिल-प्रवेशेषु—गुफान्तर्गमनेषु, गुफाओं के अन्दर जाने में। बिलेषु (गुफासु) प्रवेशाः इति बिलप्रवेशाः तेषु बिलप्रवेशेषु (सप्तमी तत्पुरुष) । निधान-खननेषु—पृथ्वीं खनित्वा गुप्तस्य निधेः अनुसन्धानेषु । निधान—खजाना । निधानानां खननानि इति निधानखननानि तेषु निधान-खननेषु (ष० त०); यह कर गुफाओं में घुसा देते थे कि इस गुफा में बड़ी सम्पत्ति है, अथवा इस गुफा में चाँदी, सोने जवाहरात की बड़ी बड़ी खानें हैं, यदि इस गुफा के अन्दर जाया जाय और पृथ्वी खूब गहराई तक खोदी जाय तो चाँदी-सोना तथा जवाहरात अवश्य मिल जायँगे—इस प्रकार की लालच देकर गुफाओं में घुसा देते थे। मन्त्रसाधनेषु—जपादिकं कृत्वा मन्त्रान् सिद्धिदायकान् कर्तुम् । मन्त्राणांसाधनानि इति मन्त्र साधनानि तेषु मन्त्र-साधनेषु (ष० त०), यह कह कर भी वे दुष्ट बेचारे कर्मचारियों तथा सिपाहियों को गुफाओं में घुसा देते थे कि यदि इस गुफा में मन्त्र-जाप किया जाय तो अतिशीघ्र मन्त्र सिद्ध हो जायगा। विघ्न-व्याजसाध्यैः—प्रत्यवाय-मिषेण करणीयैः, विघ्नों के बहाने से साधे जाने वाले "व्यापादनैः"। विघ्नानां व्याजाः इति विघ्नव्याजाः (ष० त०), विघ्नव्याजैः साध्यानि इति विघ्नव्याजसाध्यानि तैः विघ्न व्याज साध्यैः (तृ० त०)। खजाना खोदने में, प्राचीनकाल में ऐसा समझा जाया करता

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

था कि बड़ा खतरा रहा करता है, क्योंकि बड़े बड़े विषधर साँप तथा बिच्छू एवं गोजर खजाने की रक्षा किया करते हैं और जो कोई खोदने के लिए जाता है उसे फुफकारते हैं, उसके ऊपर आक्रमण करते हैं और काटकर मार डालते हैं। यहाँ पर तात्पर्य यह है कि चन्द्रपालित के दल वाले यही ढँढोरा पीट देते थे कि राजा अनन्तवर्मा के कर्मचारी खजाना खोदने के लिए फलाँ गुफा में घुसे थे, पर विघ्न पड़ गया (सर्पादिकों ने काट खाया) इसी से वे मर गए। इसी प्रकार मन्त्र-सिद्धि प्राप्त करने के लिए भी लालच दिलाकर गुफाओं में घुसा देते थे और कहते थे कि यहाँ शान्ति में एकान्त में समाधि लगाओ, भगवान् का ध्यान करो तो मन्त्र सिद्ध हो जायगा। जब वे बेचारे सैनिक अथवा कर्मचारी गुफाओं में घुसते थे तो ये दुष्ट उन्हें मार डालते थे और अफवाह उड़ा देते थे कि मन्त्र जपने में फलाँ गलती हो गई, मन्त्र की विधि में फलाँ गड़बड़ी या बाधा पड़ गई, इसी से फलाँ कर्मचारी मर गया। प्रत्यपायनिवर्तनैः—अपाय—खतरा, संकट। प्रत्यपाय—संकट-प्रतिबन्धक उपाय। खतरे को दूर करने वाला उपाय। निवर्तन—मुँह मोड़ लेना, दूर रहना, लौट आना। प्रत्यपायानां निवर्तनानि इति प्रत्यपायनिवर्तनानि तैः प्रत्यपायनिवर्तनैः (ष० त०) संकट को दूर करने वाले उपायों से मुँह मोड़ कर। अर्थात् उन उपायों को न करके। व्यालहस्तिनम्—दुष्ट हस्तिनम्, बदमाश हाथी को। व्यालश्चासौ हस्ती च इति व्यालहस्ती, तं व्यालहस्तिनम् (कर्मधारय) "व्यालो दुष्टगजः प्रोक्तः" इति हलायुधः। व्याल—दुष्ट हाथी। कोपयित्वा—भड़का कर, क्रोध दिला कर, कुप+णिच्+क्त्वा। लक्ष्यीकृत-मुख्य-मंडलेषु—न लक्ष्याः इति अलक्ष्याः, अलक्ष्या लक्ष्याः कृताः इति लक्ष्यीकृताः। लक्ष्यी-कृताश्च ते मुख्याः (प्रधान पुरुषाः) इति लक्ष्यी-कृत-मुख्याः (कर्म धारय), लक्ष्यीकृतमुख्यानां मंडलानि इति लक्ष्यीकृतमुख्य मंडलानि तेषु लक्ष्यीकृतमुख्यमंडलेषु—(ष० त०), जिन मुख्य मुख्य व्यक्तियों को लक्ष्य कर लेते थे उनके मंडलों (समूहों) पर। यानी मनुष्यों को हाथियों द्वारा रौंदवाने के लिए पहिले ही से लक्ष्य कर लेते थे। अर्थात् सोच लेते थे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

जिनको पहिले ही से लक्ष्य बना लेते थे। अपक्रमणैः—गजानां मोचनैः, प्रेरणैर्वा, हाथियों को छोड़ कर (हाँक) कर। दायाद्यर्थे—दाय—पैतृकसम्पत्ति में भाग। दायः आदिः येषां ते दायादयः (बहु०)। दायादिभ्यः इति दायाद्यर्थे (नित्यसमास), दायादीनाम् अर्थः इति दायाद्यर्थः तस्मिन् दायाद्यर्थे, बपौती जमीन जायदाद में हिस्सा लेने के लिए विवदमानान्—कलहं कुर्वाणान्, लड़ने वाले लोगों को, वि+वद्+शानच् द्वितीया बहु वचन, पु०। उपांशु—एकान्ते। प्रतिपक्षेषु—शत्रु पक्षेषु, विपक्षी पार्टी के ऊपर। प्रतिगताः अथवा प्रतिकूलाः पक्षाः इति प्रतिपक्षाः तेषु प्रतिपक्षेषु। अयशःपातनैः—अपकीर्ति स्थापनैः, न यशः इति अयशः (नञ् तत्पुरुष), अयशसः पातनानि इति अयशः पातनानि तैः अयशःपातनैः (ष० त०)। पातन—पत्+णिच् +ल्युट्। सामन्त—जागीरदार। सामन्त पुर-जनपदेषु—जागीरदारों के, पुरों तथा देशों में। पुराणि च जनपदाश्च इति पुरजनपदाः (द्वन्द्व), सामन्तानां पुरजनपदाः इति सामन्त-पुरजनपदाः तेषु सामन्त-पुरजनपदेषु (ष० त०)। अयथावृत्तान्—असद्वृत्तान्, जिनका आचरण ठीक नहीं रहा करता था उनको। यथा (योग्यम्, उचितम्) वृत्तं येषां ते यथा-वृत्ताः (बहु०)। न यथावृत्ताः इति अयथावृत्ताः तान् अयथावृत्तान्। (नञ् तत्पुरुष)। अप्रकाशम्—गुप्तरूपेण, छिप कर। अभिप्रहृत्य—मार कर, अभि+प्र+हृ+ल्यप्। तद्वैरिनामघोषणैः—तच्छत्रूणां नामख्यापनैः, तेषां वैरिणः (शत्रवः) इति तद्वैरिणः (ष० त०), तद्वैरिणां नामानि इति तद्वैरिनामानि (ष० त०) तद्वैरिनाम्नां घोषणानि इति तद्वैरिनाम-घोषणानि तैः तद्वैरिनामघोषणैः (ष० त०), उनके शत्रुओं का नाम घोषित कर (लगा कर)। योग्याङ्गनाभिः—सुन्दर स्त्रीभिः सुन्दर स्त्रियों के साथ। योग्याश्च ताः अंगनाः इति योग्यां-गनाः ताभिः योग्यांगनाभिः (कर्म धारय)। अहर्निशम्—दिवारात्रम्, दिन रात, अहनि च निशि च इति अहर्निशम्। अभिरमय्य—सम्भोगं कारयित्वा, रमण करवा कर। अभि+रम्+णिच्+ल्यप्। राजयक्ष्मो-त्पादनैः—क्षयरोग उत्पादयित्वा। राजयक्ष्मा—क्षयरोग। राजयक्ष्मायाः

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

उत्पादनानि इति राजयक्ष्मोत्पादनानि तैः राजयक्ष्मोत्पादनैः (ष० त०)। वस्त्राभरण माल्यांगरागादिषु—आभरण—आभूषण, गहना। माल्यम्—माला। अंगराग—अंगलेप कस्तूरी, मलयचन्दन, कपूर आदि को पानी के साथ घिस कर सुगन्धित लेप तैयार किया जाता है। इसी को अंगराग कहते हैं। वस्त्राणि च आभरणानि च माल्यानि च अंगरागाश्च इति वस्त्राभरणमाल्यांगरागाः (द्वन्द्व), ते आदयः येषां ते वस्त्राभरण-माल्याङ्गरागादयः तेषु वस्त्राभरण-माल्यांगरागादिषु (बहु०)। वस्त्रों, आभूषणों, मालाओं तथा अंगरागों में (विष मिला कर)। रसविधान-कौशलैः—विष मिलाने की चतुरता से। रस—विष। विधान—दान, मिश्रण, वि+धा+ल्युट्। "रसाधानं विषाधानं तीक्ष्णा मर्मणि घातकाः" इति वैजयन्ती। रसस्य (विषस्य) विधानम् इति रस-विधानम् (ष० त०), रस-विधाने कौशलानि (पाटवानि नैपुण्यानि) इति रस-विधान कौशलानि तैः रस विधान-कौशलैः (सप्तमी तत्पुरुष)। कुशलस्य भावः कर्म वा कौशलम्, कुशल+ष्यञ् भावे। चिकित्सामुखेन—औषध-करण-च्छलेन। चिकित्सा—दवाई। चिकित्सायाः मुखम् इति चिकित्सामुखम् तेन चिकित्सा मुखेन (ष० त०), चिकित्सा के द्वारा यानी इलाज करने के बहाने। आमयोपबृंहणैः—रोग वर्द्धनैः। आमय—रोग। उपबृंहण—वर्धन। आमयानाम् (रोगाणां) उपबृंहणानि इति आमयोपबृंहणानि तैः आमयोपबृंहणैः (ष० त०), रोगों के बढ़ाने से। इलाज करने के बहाने रोग को बढ़ा दिया करते थे। अश्मकेन्द्र-प्रयुक्ताः—अश्मकेन्द्रेण (वसन्तभानुना) प्रयुक्ताः इति अश्मकेन्द्रप्रयुक्ताः (तृ० त०), अश्मक-देशाधिपति वसन्तभानु के द्वारा नियुक्त। तीक्ष्णरस-दादयः—तीक्ष्णाश्च ते रसाश्च इति तीक्ष्णरसाः (कर्मधारय, तीक्ष्ण-रसान् ददति इति तीक्ष्णरसदाः (उपपद तत्पुरुष), तीखे जहर देने वाले, तीक्ष्णरस+दा+क। आतोऽनुपसर्गे कः—इति क प्रत्ययः। तीक्ष्णरसदाः आदयः येषां ते तीक्ष्णरसदादयः (बहु०)। प्रक्षपितवीरम्—निःशेषितभटम्, प्रक्षपिताः नाशिताः वीराः यस्य तत् प्रक्षपितवीरम् (बहु०)। विशेषण है अनन्तवर्मा के सैन्यम् का। अनन्तवर्मा की सेना

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

जिसके सारे वीर नष्ट कर डाले गए। अनन्तवर्मकटकम्—अनन्तवर्मणः कटकम् सैन्यम् इति अनन्तवर्मकटकम् (ष० त०)। जर्जरम्—जीर्ण-शीर्णम्, छिन्न भिन्न।

अथ वसन्तभानुर्भानुवर्माणं वानवास्यं प्रोत्साह्यानन्तवर्मणा व्यग्राहयत्। तत्परामृष्टराष्ट्रपर्यन्तश्चानन्तवर्मा तमभियोक्तुं बलसमुत्थानमकरोत्। सर्वसामन्तेभ्यश्चाश्मकेन्द्रः प्रागुपेत्य प्रियतरोऽभूत्। अपरेऽपि सामन्ताः समगंसत। गत्वा चाभ्यर्णे नर्मदारोधसि न्यविशत्। तस्मिश्चावसरे महासामन्तस्य कुन्तलपतेरवन्तिदेवस्यात्मनाटकीयां क्षमातलोर्वशीं नाम चन्द्रपालितादिभिरतिप्रशस्तनृत्तकौशलामाहूयानन्तवर्मा नृत्तमद्राक्षीत्। अतिरक्तश्च भुक्तवानिमां मधुमत्ताम्। अश्मकेन्द्रस्तु कुन्तलपतिमेकान्ते समभ्यधत्त। प्रमत्त एष राजा कलत्राणि नः परामृशति। कियत्यवज्ञा सोढव्या। मम शतमस्ति हस्तिनां पञ्चशतानि च ते। तदावां संभूय मुरलेशं वीरसेनमृचीकेश्वरमेकवीरं, कोङ्कणपतिं कुमारगुप्तं, नासिक्यनाथं च नागपालमुपजपावः। ते चावश्यमस्याविनयमसहमाना अस्मन्मतेनैवोपावर्तेरन्। अयं च वानवास्यः परं मे मित्रम्। अमुनैनं दुर्विनीतमग्रतो व्यतिषक्तं पृष्ठतः प्रहरेम। कोशवाहनं च विभज्य गृह्णीम इति। हृष्टेन चामुनाभ्युपेते विंशतिं वरांशुकानां पञ्चविंशतिं काञ्चनकुंकुमकम्बलानां प्राभृतीकृत्याप्तमुखेन तैः सामन्तैः संमन्त्र्य तानपि स्वमतावस्थापयत्। उत्तरेद्युस्तेषां सामन्तानां वानवास्यस्य चानन्तवर्मा नयद्वेषादामिषत्वमगमत्। वसन्तभानुश्च तत्कोशवाहनमवशीर्णमात्माधिष्ठितमेव कृत्वा "यथाप्रयासं यथाबलं च विभज्य गृह्णीत। युष्मदनुज्ञया येन केनचिदंशेनाहं तुष्यामि' इति शाठ्यात्सर्वानुवर्ती तेनैवामिषेण निमित्तीकृत्योत्पादितकलहः सर्वसामन्तानध्वंसयत्। तदीयं च सर्वस्वं स्वयमेवाग्रसत्। वानवास्यं केनचिदंशेनानुगृह्य सर्वमनन्तवर्मराज्यमात्मसादकरोत्।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

हिन्दी अनुवाद— वसन्तभानु ने भानुवर्मा नामक वनवासी देश के राजा को उभाड़कर अनन्त वर्मा के साथ लड़ाई करवा दी। अनन्त-वर्मा, जिसके राष्ट्र का प्रान्त-प्रदेश (चौहद्दी वाला प्रान्त) भानुवर्मा द्वारा द्वारा दखल कर (या दबोच) लिया गया था, उस पर चढ़ाई करने के लिए, सेना इकट्ठी करने लगा। अश्मकेन्द्र वसन्तभानु, सभी जागीरदारों से पहिले आकर, उस (अनन्तवर्मा) का प्रिय पात्र (इष्टमित्र) बन गया। दूसरे जागीरदार भी (आकर) मिल गए। उन लोगों ने समीप जाकर नर्मदा नदी के तट पर डेरा (पड़ाव) डाला। उसी अवसर पर महासामन्त कुन्तलपति अवन्तिदेव की आत्मनाटकीया (खास वेश्या) को, बुलवाकर जो पृथ्वीतल की उर्वशी कही जाती थी, और जिसके नृत्य-कौशल की चन्द्रपालित आदि ने भूरि-भूरि प्रशंसा की थी, अनन्तवर्मा ने (उस वेश्या का) नृत्य देखा और अत्यन्त आसक्त होकर उस मधुमत्ता (शराब के नशे में चूर) के साथ सम्भोग भी किया।

अश्मकेन्द्र वसन्तभानु ने कुन्तलपति अवन्तिदेव से एकान्त में कहा। यह मतवाला राजा हम लोगों की स्त्रियों की बेइज्जती करता है। कितना अपमान सहा जाय (हम लोग कहाँ तक अपमान सहें)। मेरे पास एक सौ हाथी हैं और तुम्हारे पास पाँच सौ। तो हम दोनों मिलकर, मुरलदेश के राजा वीरसेन को, ऋचीक देश के राजा एकवीर को, कोङ्कणदेश के राजा कुमार गुप्त को, और नासिक्य देश के राजा नागपाल को अपनी ओर मिला लें। इसके अविनय (अत्याचार) को वे लोग भी नहीं सहन कर रहे हैं। इसलिए वे भी हमारी ही राय के अनुसार कार्य करेंगे। और यह वनवासी देश का राजा भानुवर्मा हमारा परम मित्र है। इस दुर्विनीत अनन्तवर्मा के ऊपर उसके (भानुवर्मा के) द्वारा सामने से आक्रमण करा कर, पीछे से हम लोग चढ़ाई कर दें और इसके खजाने को तथा इसकी सेना को बाँट कर ले लें।

जब कुन्तलपति अवन्तिदेव ने प्रसन्न होकर (वसन्तभानु की बातें) स्वीकार कर लीं, तब, [illegible] (केसर) के

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

रङ्ग के, एवं सोने की जरी के कामवाले पच्चीस दोशाले, विश्वासपात्र व्यक्ति द्वारा, उपहार के रूप में, (मुरलेश, ऋचीकेश, कोङ्कणपति तथा नासिक्य-नाथ के पास) भेजकर, और उन जागीरदारों से परामर्श कर, उनको भी अपनी राय में मिला लिया। दूसरे दिन, राजनीति से द्वेष रखने के कारण, अनन्तवर्मा उन जागीरदारों (मुरलेश, ऋचीकेश, कोङ्कणपति तथा नासिक्यनाथ) का तथा वनवासी देश के राजा भानुवर्मा का शिकार बन गया (मारा गया)। वसन्तभानु ने उसके छिन्न भिन्न हो गए हुए कोश तथा सेना को अपने अधीन करके, "अपने अपने परिश्रम तथा अपनी अपनी सेना के अनुसार, आप लोग बाँट कर, ले लेते जाइए, और आप लोगों की आज्ञा से थोड़े बहुत अंश से मैं भी सन्तुष्ट हो जाऊँगा" ऐसा कह कर, और सब की राय के अनुसरण (का बहाना) कर, (अपनी) शठता (धूर्तता) से, उसी (बँटवारे) के बहाने, (सभी में) झगड़ा पैदा कर, सभी जागीरदारों को नष्ट कर दिया, और उसके धन को स्वयं ही हड़प लिया। वनवासी देश के राजा भानुवर्मा को थोड़े से अंश से सन्तुष्ट कर, अपने देश को लौट कर, अनन्तवर्मा के सारे राज्य को अपने हाथ में कर लिया।

टिप्पणी—वानवास्यम्—वनवास्याः अधिपतिः वानवास्यः तम् वान-वास्यम्। वनवासी दक्षिण भारत में एक देश है। उसके राजा का नाम भानुवर्मा था। अनन्तवर्मणा—अनन्तवर्मा के साथ। व्यग्राहयत्—विग्रहं कारितवान्। विग्रह (झगड़ा) करा दिया, वि+अग्राहयत्, वि+ग्रह+णिच् अनद्यतन भूत प्रथम पुरुष एक वचन। तत्परामृष्ट-राष्ट्र पर्यन्तः—वह अनन्तवर्मा जिसके देश का प्रान्तभाग भानुवर्मा द्वारा दखल कर लिया गया था या दबोच लिया गया था। अर्थात् अन-न्तवर्मा के राष्ट्र का प्रान्त भाग भानुवर्मा द्वारा दबोच लिया गया था। परामृष्ट—आक्रान्त, दबाया हुआ, दखल किया हुआ, राष्ट्र—देश। पर्यन्त - प्रान्त भाग, चौहद्दी पर का देश। तेन (भानुवर्मणा) परा-मृष्टः राष्ट्रस्य (अनन्तवर्म-राज्यस्य) पर्यन्तः (प्रान्तभागः) यस्य स तत्परामृष्ट राष्ट्र-पर्यन्तः (बहु०) विशेषण है "अनन्तवर्मा" का।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
अभियोक्तुम्—आक्रमणं कर्तुम्, चढ़ाई करने के लिए, सामना करने के लिए, अभि+युज्+तुमुन् । **बलसमुत्थानम्**—सैन्यैकत्रीकरणम्, सेना का इकट्ठा करना। बलस्य (सैन्यस्य) समुत्थानम् (एकत्रीकरणम्) इति बलसमुत्थानम् (ष० त०), सेना का संग्रह । **प्राक्**—पहिले ही। **उपेत्य**—समीपं गत्वा, पास आकर, उप+आ+इण्+ल्यप् । **अस्य** —अनन्तवर्मणः । **समगंसत**—मिलिता अभवन्, मिल कर एक हो गए सम् पूर्वक गम् धातु आत्मने पदी होती है और इसका अर्थ होता है "मिलकर एक हो जाना" । 'समगंसत' सामान्यभूत (लुङ्) के प्रथम पुरुष बहुवचन का रूप है । **अभ्यर्णे**—समीपे । **नर्मदारोधसि**—नर्मदातटे, नर्मदा के किनारे, नर्मदायाः रोधः (तटः) इति नर्मदारोधः तस्मिन् नर्मदारोधसि (ष० त०) रोधः रोधसी रोधांसि इत्यादि "रोधस्" शब्द के रूप चलते हैं । **न्यविशन्**—सेवानिवेशमकुर्वन्, तम्बू डाला। **आत्मनाटकीयाम्**—निजां नर्तकीम्, खास वेश्या, आत्मनः नाटकीया इति आत्मनाटकीया ताम् आत्मनाटकीयाम् (ष० त०), स्वीयनृत्यांगनाम्। **क्ष्मातलोर्वशीम्**—क्ष्मा—पृथिवी, क्ष्मायाः तलम् इति क्ष्मातलम् (ष० त०), पृथिवी की सतह पर। क्ष्मातले अथवा क्ष्मातलस्य (पृथ्वीतले) उर्वशी इति क्ष्मातलोर्वशी ताम् (सप्तमी तत्पु० अथवा षष्ठी० तत्पु०) **अतिप्रशस्त-नृत्तकौशलाम्**—अतिप्रशस्तं नृत्तस्य कौशलं यस्याः सा अतिप्रशस्तनृत्त-कौशला ताम् अतिप्रशस्तनृत्त कौशलाम् (बहु०), जिसके नाचने का कौशल (कला, चतुरता) खूब प्रशंसित हो चुका था। **अतिरक्तः**—तस्याः स्वरूपसौन्दर्येण अति-शयितम् आसक्तः भूत्वा, उसके रूप की सुन्दरता से अत्यन्त आसक्त होकर। **भुक्तवान्**—विषय-भोगं कृतवान्, भोगविलास किया, भुज+क्तवतु। **इमाम्**—उसको, कुन्तलपति की आत्मनाटकीया को । **मधुमत्ताम्**—मद्यपान-प्रमत्ताम्, शराब पीने के कारण नशे में चूर। मधुना (सुरा पानेन) मत्ता इति मधुमत्ता ताम् मधुमत्ताम् (तृ० त०) । **समभ्यधत्त**—कहा, सम्+अभि+धा+आत्मने पद अनद्यतनभूत प्रथम पुरुष एक वचन । **प्रमत्तः**—मतवाला। **नः** कुल-
CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
त्राणि—अस्माकं स्त्रीः, हम लोगों की स्त्रियों को। परामृशति—धर्षयति, छूता है, बेइज्जती करता है। कियत्यवज्ञा—कियती+अवज्ञा, कितना अपमान। सोढव्या—सहनीया, सहाजाय, सह+तव्य+टाप्। तदावाम्—तद्+आवाम्, तो हम दोनों। सम्भूय—मिलित्वा, मिलकर, सम्+भू+ल्यप। मुरलेशम्—मुरलदेशस्य राजानम्, मुरलदेश के राजा (वीरसेन) को। मुरलानाम् (मुरलदेशस्य) ईशः इति मुरलेशः तम् मुरलेशम् (ष० त०)। ऋचीकेश्वरम्—ऋचीकानाम् ईश्वरः (राजा) इति ऋचीकेश्वरः तम् ऋचीकेश्वरम् (ष० त०) ऋचीक देश के राजा का नाम था एक वीर। कोङ्कणपतिम्—कौंकणानां पतिः इति कौंकणपतिः तम् कौंकणपतिम् (ष० त०), कौंकण देश के राजा का नाम था "कुमारगुप्त"। नासिक्यनाथम्—नासिक्यानां (नासिक्यदेशस्य) नाथः इति नासिक्यनाथः तम् नासिक्यनाथम् (ष० त०), नासिक्यनाथ का नाम था "नागपाल"। उपजपावः—विघटयावः, फोड़ कर अपनी ओर मिला-लेवें। अस्य—अनन्तवर्मणः। अविनयम्—धाष्टर्यम्, अत्याचारम्, न विनयः इति अविनयः तम् अविनयम् (नञ् तत्पुरुष)। नञ्+वि+नी+अच् (एरच्)। असहमानाः—न सहमानाः इति असहमानाः (नञ् तत्पुरुष) नञ्+सह्+शानच्। अस्मन्मतेन एव—मम मन्त्रणानुसारम् अस्माकम् मतम् इति अस्मन्मतम् तेन अस्मन्मतेन (ष० त०), हमारे मत से, हमारी राय से। उपावर्तेरन्—कार्यं कुर्युः, चलेंगे, व्यवहार करेंगे। अमुना—इसके द्वारा यानी वनवासी देश के राजा भानुवर्मा द्वारा। एनं दुर्विनीतम्—इस दुष्ट को। अग्रतः—पुरतः, सम्मुखे, सामने से, अग्र+तसिल्। व्यतिषक्तम्—आक्रान्तम् प्रतिरुद्धं वा आक्रमण किए गए हुए को, या रोके गए हुए को। पृष्ठतः—पीछे से, पृष्ठ+तसिल्। कोशवाहनम—धनराशिं सैन्यं च, खजाने को तथा सेना को। कोशश्च वाहनं च इत्यनयोः समाहारः इति कोशवाहनम् (द्वन्द्व), विभज्य—विभागं कृत्वा, बाँट कर, वि+भज्+ल्यप्। गृह्णीत—ग्रहीष्यामः इत्यर्थः, ले लेंगे। यहाँ पर यह लोट् लकार लृट् के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

हृष्टेन—प्रसन्नेन, हृष्+क्त । अमुना—कुन्तलपतिना अवन्तिदेवेन, कुन्तल देश के राजा अवन्तिदेव के द्वारा । अभ्युपेते—स्वीकृते, स्वीकार कर लिए जाने पर, अभि+उप+इण्+क्त । वरांशुकानाम् सुन्दराणा-मुत्तमोत्तमवस्त्राणाम्, उत्तमोत्तम वस्त्रों का, अंशुकम्—वस्त्रम् । वराणि (श्रेष्ठानि सूक्ष्माणि इति यावत्) च तानि, अंशुकानि (वस्त्राणि) इति वरां-शुकानि, तेषाम् वरांशुकानाम् (कर्मधारय)। काञ्चनकुङ्कुमकम्बलानाम् काञ्चनमयानि कुङ्कुम-वर्णानि च कम्बलानि इति काञ्चनकुङ्कुमकम्बलानि तेषाम् काञ्चन-कुकुमकम्बलानाम् (कर्मधारय), सुनहले किनारे वाले तथा केसरिया रङ्ग के कम्बलों का (दुशालों का)। प्राभृती कृत्य—उपहार-त्वेन समर्प्य प्रेष्य, उपहार के तौर पर भेज कर। प्राभृत—उपहार, भेंट। न प्राभृतम् अप्राभृतम्, अप्राभृतं प्राभृतं कृत्वा इति प्राभृतीकृत्य, प्राभृत +कृ+च्वि प्रत्यय। आप्तमुखेन—विश्वासपात्र पुरुष द्वारा, विश्वासपात्र व्यक्ति के द्वारा (उपहार भेजकर)। आप्त—विश्वासपात्र व्यक्ति, आप्तस्य मुखम् इति आप्त-मुखम् तेन आप्तमुखेन (ष० त०), सम्मन्त्र्य—मन्त्रणां कृत्वा, मन्त्रणा करके, सम्+मन्त्र्+ल्यप् । तान् अपि—उनको भी, मुरलेश ऋचीकेश कोंकणपति, नासिक्यनाथ को भी। स्वमतावस्थापयत्—स्वमतौ+ अस्थापयत्, स्वविचारमग्राहयत्, अपना विचार स्वीकार करवा दिया। स्वस्य मतिः इति स्वमतिः तस्यात् स्वमतौ (ष० त०) अपनी राय में। अस्थापयत्—कर लिया, स्था+णिच् अनद्यतनभूत प्रथम पुरुष एक वचन। उत्तरेद्युः—अपरस्मिन् दिने, दूसरे दिन, यह अव्यय है, उत्तर+एद्युस्। नयद्वेषात्—राजनीतेः वैमुख्यात्, राजनीति से द्वेष रखने के कारण। नयस्य (राजनीति-शास्त्रस्य) द्वेषः (घृणा) इति नयद्वेषः तस्मात् नयद्वेषात् (ष० त०), नय—नी+अच् । एरच्—सूत्र से इकारान्त नी धातु से भाव-वाचक संज्ञा बनाने के लिए अच् प्रत्यय जोड़ा गया। द्वेषः—द्विष्+ घञ्। आमिषत्वम्—लक्ष्यत्वम्, शिकार की अवस्था को। आमिष—शिकार, आमिष+त्व। अगमत्—प्राप्त हो गया गम धातु का सामान्य भूत, प्रथम पुरुष एक वचन। आमिषत्वम् अगमत्—तैः हतः इति भावः।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

शिकार हो गया यानी मारा गया। तत्कोशवाहनम्—अनन्तवर्मणः धनराशिर्गजाश्वादिकं सैन्यं च, अनन्तवर्मा के खजाने तथा उसकी सेना को। तस्य (अनन्तवर्मणः) कोशवाहनम् इति तत्कोश वाहनम् (ष० त०)। अवशीर्णम्—विध्वस्तम्, छिन्नभिन्नम्, नष्टम्, अव+शॄ+क्त। आत्माधिष्ठितम्—स्वाधिकृतम्, स्व-वशम्, स्वाधीनम्, अपने हाथों में, आत्मना अधिष्ठितम् इति आत्माधिष्ठितम् (तृ० त०)। यथा-प्रयासम्—यावच्छक्यम्, यथाशक्ति। प्रयासम् परिश्रमम् अनतिक्रम्य इति यथाप्रयासम् (अव्ययीभाव)। प्र+यस्+घञ्। अपनी अपनी मिहनत के अनुसार। यथाबलम्—सैन्यानुसारम्, सेना के अनुसार, जिसने जितनी सेना दी हो उसके हिसाब से। बलम् (सैन्यम्) अनतिक्रम्य इति यथाबलम् (अव्ययीभाव समास)। गृह्णीत—ले लेते जाओ, ग्रह् धातु लोट् मध्यम पुरुष बहु वचन। युष्मदनुज्ञया—भवतामनुमत्या, आप लोगों की आज्ञा से, इजाजत से, युष्माकम् अनज्ञा इति युष्मदनुज्ञा, तया युष्मदनुज्ञया (ष० त०)। येन केनचित् अंशेन—स्वल्पेनापि भागेन, जिस किसी भी अंश से, यानी चाहे थोड़ा मिल जाय चाहे ज्यादा जो कुछ भी आप लोग मुझे दे देंगे उस अंश से (मैं तृप्त हो जाऊँगा)। शाठ्यात्—धूर्ततापूर्वक, यानी ऊपर दिखावटी तौर से। 'शाठ्यात्' का अन्वय होगा शाठ्यात् सर्वानुवर्ती—ऊपर से देखने में मालूम होता था कि वह सब की आज्ञा-पालन करने वाला तथा सब के मन के मुताबिक काम करने वाला व्यक्ति है। यह व्यक्ति सब लोगों की इच्छा पूरी कर देने वाला है। सर्वानुवर्ती—सर्वान् अनुवर्तते इति सर्वानुवर्ती, सर्व+अनु+वृत्+णिनि। तेन एव आमिषेण—उसी चारे (प्रलोभन) के द्वारा। यानी बँटवारे को चारा (बहाना) बना कर। निमित्तीकृत्य—निमित्त (कारण) बना कर, न निमित्तम इति अनिमित्तम्, अनिमित्तं निमित्तं कृत्वा इति निमित्तीकृत्य निमित्त+च्वि+कृ+ल्यप्। उत्पादित-कलहः—विग्रहं

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
कारयित्वा, झगड़ा पैदा करवा कर, उत्पादितः कलहः येन सः उत्पादित-कलहः (बहु०) । उत्पादित—उत्+पद्+णिच्+क । व्यध्वंसयत्—व्यनाशयत्, नष्ट करवा दिया । वि+ध्वंस्+णिच्+लङ् प्रथम पुरुष एक वचन । तदीयम्—तेषाम् सामन्तानाम् इति तदीयम्, उन लोगों का । तत्+छ । सर्वस्वम्—सकलं धनम्, सारे धन को, सर्वं च तत् स्वं (धनं) इति सर्वस्वम् (कर्मधारय) । अग्रसत्—बलात् अगृह्णात् ग्रस लिया, (जबर्दस्ती) हड़प कर लिया । केनचित् अंशेन अनुगृह्य—अतिस्वल्पम् अंशं तस्मै दत्त्वा, किसी अंश से, यानी थोड़ा सा अंश देकर उसको प्रसन्न करके । प्रत्यावृत्य—स्वदेशं प्रति निवृत्य, (अपने देश को) लौट कर, प्रति+आ+वृत्+ल्यप् । आत्मसात् अकरोत्—स्वहस्तगतम् अकरोत्, अपने हाथ में कर लिया, आत्मन्+साति प्रत्ययः । इसी प्रकार भस्मसात् अकरोत्, अग्निसात् अकरोत् आदि शब्द होते हैं ।

अस्मिंश्चावसरे मन्त्रिवृद्धो वसुरक्षितः कैश्चिन्मौलैः संभूय बालमेनं भास्करवर्माणमस्यैव ज्यायसीं भगिनीं त्रयोदशवर्षां मञ्जुवादिनीमनयोश्च मातरं महादेवीं वसुंधरामादायापसर्प-न्नापदोऽस्या भावितया दाहज्वरेण देहमजहात् । अस्मन्मित्रैस्तु नीत्वा माहिष्मतीं भर्तुर्द्वैमातुराय भ्रात्रे मित्रवर्मणे सापत्न्या देवी दर्शिताऽभूत् । तां चार्यामनार्योऽसावन्यथाऽभ्यमन्यत । निर्भर्त्सितश्च तया सुतमियमस्खण्डचारित्रा राज्यार्हं चिकीर्षतीति नैघृण्यात्तमेनं बालमजिघांसीत् । इदं तु ज्ञात्वा देव्याऽहमाज्ञप्तः । 'तात नाली-जङ्घ, जीवताऽनेनार्भकेण यत्र क्वचिदपयाय जीवेः । जीवेयं चेदहमप्येनमनुसरिष्यामि । ज्ञापय मां क्षेमप्रवृत्तः स्ववार्तामिति ।' अहं तु संकुले राजकुले कथंचिदेनं निर्गमय्य विन्ध्याटवीं व्यगा-हिषि । पादचारदुःखितं चैनमाश्वासयितुं घोषे क्वचिदहानि कानिचिद्विश्रमय्य तत्रापि राजपुरुषसम्पातभीतो दूरध्वमपासरम् । तत्रास्य दारुणपिपासापीडितस्य वारि दातुकामः कूपेऽस्मि-न्नपभ्रश्य पतितस्त्वयैवमनुगृहीतः । त्वमेवास्यातः शरणमेधि विशरणस्य
CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

राजसूनोरित्यञ्जलिमबध्नात् । किमीया जात्या त्वस्य मातेत्यनुयुक्ते मयाऽमुनोक्तम्—पाटलिपुत्रस्य वणिजो वैश्रवणस्य दुहितरि सागरदत्तायां कोसलेन्द्रात्कुसुमधन्वनोऽस्य माता जातेति।' यद्येवमेतन्मातुर्मत्पितुश्चैको मातामह इति सस्नेहं तमहं सस्वजे। वृद्धेनोक्तम्। सिंधुदत्तापुत्राणां कतमस्ते पितेति। सुश्रुत इत्युक्ते सोऽत्यहृष्यत्। अहं तु तं नयाबलिप्तमश्मकेन्द्रं नयेनैवोन्मूल्य बालमेनं पित्र्ये पदे प्रतिष्ठापयेयमिति प्रतिज्ञाय कथमस्यैनां क्षुधं क्षपयेयमित्यचिन्तयम्। तावदापतितौ च कस्यापि व्याधस्य त्रीनिषूनतीत्य द्वौ मृगौ स च व्याधः। तस्य हस्तादवशिष्टमिषुद्वयं कोदण्डं चाक्षिप्याविधिषम्। एकः सपत्राकृतोऽन्यश्च निष्पत्राकृतोऽपतत्। तं चैकं मृगं दत्त्वा मृगयवेऽन्यस्यापलोमत्वचः क्लोमापोह्य निष्कुलाकृत्य विकृत्योर्वङ्घ्रिग्रीवादीनि शूलाकृत्य दावाङ्गारेषु तप्तेनामिषेण तयोरात्मनश्च क्षुधमतार्षम्।[1]

हिन्दी अनुवाद—इसी अवसर पर मन्त्रिवृद्ध वसुरक्षित ने, बारदादों से चले आए हुए कतिपय मन्त्रियों के साथ मिल कर, इस भास्करवर्मा नामक बालक को, तेरह वर्ष की अवस्था वाली इसकी बड़ी बहिन मंजुवादिनी को, तथा इन दोनों की माता बड़ी रानी वसुन्धरा को लेकर भागते-भागते, इस आपत्ति की भवितव्यता के कारण, दाहज्वर से देहत्याग कर दिया। हमारे मित्रों द्वारा माहिष्मती नगरी में पहुँचाई जाकर, रानी, पति के सौतेले भाई मित्रवर्मा के हाथ में, सन्तान-सहित सौंप दी गई। (परन्तु) उस अनार्य (दुष्ट) ने इस आर्या (पूज्या रानी) को दूसरी तरह की समझा (अर्थात् दुष्टाचरण वाली समझा)। उस (रानी) के द्वारा फटकारा गया हुआ (फटकारे जाने पर) वह "यह शुद्धचारित्रा रानी अपने बेटे को राज्य के योग्य बनाना चाहती है" इस विचार से क्रूरता (निर्दयता) के कारण, इस लड़के को मारने की इच्छा करने लगा। यह जान कर रानी द्वारा मैं आज्ञा दिया गया कि ऐ पूज्य नालीजङ्घ, इस जीते हुए बच्चे के साथ (तुम) कहीं

१. अतविषम् इत्यपि पाठः।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

टिक कर जीवन धारण करो। यदि जीती रही, तो मैं भी इसका अनुसरण करूँगी (इससे आकर मिलूँगी)। (इसके) कल्याण में लगे हुए तुम मुझे अपना समाचार बताते रहना।"

मैं, उस भीड़-भाड से भरे हुये राजकुल में से किसी प्रकार इस बालक को निकाल कर, विन्ध्याचल के जंगलों में घुस गया। पैदल चलने के कारण थके हुये इस बालक को ढाढ़स दिलाने के लिये, किसी घोष (अहीरों की बस्ती) में कुछ दिन विश्राम कर, वहाँ भी राजा के अफसरों के आने की आशंका से भयभीत होकर, मैं बहुत दूर निकल गया। घोर पिपासा से पीड़ित इस बालक को जल देने का इच्छुक मैं, फिसलकर, इस कुएँ में गिरा हुआ, तुम्हारे द्वारा, इस प्रकार, अनुगृहीत हुआ हूँ। अतः इस शरण-हीन राजकुमार के तुम्हीं शरण हो" ऐसा कह कर उस (जंगली आदमी) ने अँजुली बाँध ली (यानी हाथ जोड़ कर प्रणाम किया)।

मेरे (विश्रुत के) द्वारा यह पूछे जाने पर कि "इसकी माता किस जाति की है" उसके द्वारा उत्तर दिया गया "वैश्रवण नामक पाटलिपुत्र के बनिये की बेटी सागरदत्ता के पेट से, कोसल देश के राजा कुसुमधन्वा से, इसकी माँ पैदा हुई है।" "यदि ऐसी बात है तो इसकी माता के तथा मेरे पिता के एक ही नाना हैं" ऐसा कह कर मैंने स्नेह पूर्वक उसे गले लगाया।

वृद्ध द्वारा कहा गया "सिन्धुदत्ता के पुत्रों में से कौन तुम्हारे पिता थे।" "सुश्रुत" ऐसा कहे जाने पर वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ। राजनीति के मद से गर्वित अश्मकेन्द्र वसन्तभानु को; राजनीति के द्वारा ही, उखाड़ कर (विध्वंस कर), इस बालक को (इसके) पिता के स्थान पर स्थापित कर दूँगा ऐसी प्रतिज्ञा कर, इसकी इस क्षुधा को किस प्रकार दूर करूँ, यही सोचने लगा। तब तक, किसी बहेलिए के तीन बाणों को अतिक्रमण कर (तीन बाणों से बच कर) दो हिरन तथा वह बहेलिया आ गए। बचे हुये दोनों बाणों को तथा धनुष को उसके हाथ से छीन कर, (मैंने) (दोनों हिरनों को) मार डाला। एक हिरन इस प्रकार बिँधा कि बाण की पूँछ

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

उसके शरीर के बाहर दिखाई पड़ती रही; दूसरा हिरन इस प्रकार बिँधा कि बाण की पूँछ उसके शरीर में बिल्कुल पूरी पूरी धँस गई, जरा भी बाहर न दिखाई देती थी। इस प्रकार बिँध कर हिरन गिर पड़े। उनमें से एक हिरन बहेलिये को देकर, दूसरे की खाल तथा बाल निकाल कर, तथा उसकी अँतड़ियाँ (अथवा मस्तिष्क) निकाल कर, उसके आन्तरिक शरीरावयवों के समूह को निकाल कर, जघे, पाँव तथा गरदन को काट कर, लोहे के छड़ पर रख कर, जङ्गल की आग के अङ्गारों पर भूने हुए गोश्त से उन दोनों की (बालक तथा उस बुड्ढे की) तथा अपनी भूख को शान्त किया।

टिप्पणी—मौलैः—मूलात् आगताः मौलाः तैः मौलैः, अनन्त वर्मा की जड़ यानी उसके बाप दादों के समय से चले आए हुए मन्त्रियों के साथ। मूल+अण्। सम्भूय—मिलित्वा, मिलकर, सम्+भू+ल्यप्। ज्यायसीम् भगिनीम्—ज्येष्ठां स्वसारम्, बड़ी बहिन को। महादेवीम्—बड़ी रानी को। महती चासौ देवी च इति महादेवी ताम् (कर्मधारय)। अपसर्पन्—पलायमानः, भागता हुआ, अप+सृप्+शतृ। आपदः अस्याः भावितया—इस आपत्ति की अवश्यंभवितव्यता के कारण, चूँकि यह आपत्ति मुझे अवश्य भोगनी थी इसलिए। दाहज्वरेण—अत्यन्तं भयङ्करः ज्वरः, येन अखिलं शरीरं ज्वलति, तादृशेन ज्वरेण। दाहयुक्तः ज्वरः इति दाहज्वरः तेन दाहज्वरेण (मध्यम-पदलोपी कर्मधारय)। अजहात्—अत्यजत्, छोड़ दिया, हा धातु अनद्यतनभूत प्रथम पुरुष एक वचन। 'हा' धातु का अर्थ है त्यागना। अस्मन्मित्रैः—अस्माकं मित्राणि इति अस्मन्मित्राणि तैः अस्मन्मित्रैः (ष० त०), हमारे मित्रों के द्वारा। नीत्वा—गमयित्वा, ले जाई जाकर, पहुँचाई जाकर, नी+क्त्वा। माहिष्मती—नगरी का नाम है। भर्तुः—पत्युः, (रानी के) पति के अर्थात् अनन्तवर्मा के। द्वैमातुराय भ्रात्रे—वैमात्रे भ्रात्रे, सौतेले भाई को, द्वयोः मात्रोः अपत्यं पुमान् द्वैमातुरः, दो माताओं की सन्तान

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

यानी सौतेला । द्वैमातृ+अण=द्वैमातुरः । मित्रवर्मा—अनन्तवर्मा का सौतेला भाई था । सापत्या—अपत्यसहिता, ससन्ताना, विद्यमानम् अपत्यं यस्याः सा सापत्या (बहु०) विशेषण है "देवी" का । चार्यामनार्योऽसावन्यथाऽमन्यत—च आर्याम् अनार्यः असौ अन्यथा अमन्यत । आर्याम्—सम्माननीयां महाराज्ञीम् । उन माननीय महारानी को । अनार्यः—दुष्टः, न आर्यः इति अनार्यः (नञ् तत्पुरुष) अनार्यः असौ—दुष्ट मित्रवर्मा । अन्यथा अमन्यत—दुश्चरित्रामन्यत, दूसरी तरह से समझा यानी उसे भ्रष्टाचरण वाली समझा । निर्भर्त्सितः—भयं प्रदर्श्य कथितः, डाटा-फटकारा गया हुआ, निर्+भर्त्स्+क्त । अखण्डचारित्रा—अभ्रष्टाचरणा, सदाचारिणी, न विद्यते खण्डं यस्य तत् अखण्डम् (बहु०) अखण्ड चारित्र यस्याः सा अखंडचारित्रा (बहु०), जिसका चरित्र खंडित (भ्रष्ट) नहीं हुआ था । चारित्रम्—चरित्रम् एवं चारित्रम्, चरित्र+अण् (स्वार्थे) । राज्यार्हम्—राज्ययोग्यम्, राज्यस्य अर्हः इति राज्यार्हः तम् राज्यार्हम (ष० त०) । चिकीर्षति—कर्तुम् इच्छति इति चिकीर्षति, कृ धातु+सन् वर्तमान काल प्रथम पुरुष एक वचन । इति—अस्मात् कारणात्, इस कारण से (कि रानी अपने पुत्र को राज्य के योग्य बनाना चाहती थी) । नैर्घृण्यात्—घृणा अर्थात् दया, करुणा; निर्गता घृणा यस्मात् सः निर्घृणः (बहु० , अर्थात् निर्दयः; निर्घृणस्य भावः नैर्घृण्यम् तस्मात् नैर्घृण्यात् अर्थात् निर्दयत्वात्, निर्घृण+ष्यञ्=नैर्घृण्य । अजिघांसीत्—हन्तुमैच्छत्, मारने की इच्छा की, हन्+सन्+सामान्यभूत प्रथमपुरुष, एक वचन । देव्या—महिष्या, महारानी के द्वारा । अहम्—वह जंगली आदमी जो विश्रुत को अपनी कहानी सुना रहा था । आज्ञप्तः—आदिष्टः, आज्ञा दिया गया, आ+ज्ञा+णिच्+क्त । क्वचित्—कस्मिंश्चित् स्थाने—कहीं पर । अर्भकेण—शिशुना, लड़के के साथ । जीवता अनेन अर्भकेण सह—जीते हुए इस लड़के के साथ यानी इस लड़के को जिन्दा रखते हुए । अवस्थाप्य—आत्मानं स्थापयित्वा,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

अपने को रखकर, अव+धा+ल्यप् । जीवेयम् चेत्—यदि मैं जीती रही । ज्ञापय माम्—मम समीपे समाचारं प्रेषय, मुझे सूचित रखना, ज्ञा+णिच् लोट् मध्यम पुरुष एक वचन । क्षेमप्रवृत्तः—क्षेमः तथा क्षेमम् दोनों हुआ करते हैं । क्षेमे (कुशले, कल्याणे मंगलकरणे) प्रवृत्तः (संलग्नः) इति क्षेमप्रवृत्तः (सप्तमी तत्पुरुष), इस बच्चे के कल्याण में लगे रह कर । स्ववार्ताम्—स्व-समाचारम्, स्वस्य वार्ता इति स्ववार्ता ताम् स्ववार्ताम् (ष० त०) । संकुले राजकुले—जन-सम्मर्द-परिपूर्णे राजगृहे, भीड़-भाड़ से भरे हुए राजकुल में । कथञ्चित्—महता कष्टेन, किसी प्रकार बड़ी मुश्किल से । निर्गमय्य—बहिः प्रापय्य, निकलवा कर, निर्+गम्+णिच्+ल्यप् । व्यगाहिषि—प्राविशम्, मैं घुस गया, वि+गाह् भ्वादि आत्मनेपदी सामान्यभूत उत्तम पुरुष एक वचन । पादचारदुःखितम् —पादाभ्यां चारः (चलनं) इति पादचारः (तृतीया तत्पुरुष) । पांवों से चलना यानी पैदल चलना । पादचारस्य दुःखम् इति पादचारदुःखम् (षष्ठी तत्पुरुष) । पादचार-दुःखम् सञ्जातम् अस्य इति पादचारदुःखितः तम् पादचारदुःखितम् पादचारदुःख+इतच् । आश्वासयितुम्—सान्त्वयितुम्, ढाढस देने के लिए, आ+श्वस्+णिच्+तुमुन् । घोषे—आभीर-पल्ल्याम्, अहीरों का गाँव । "घोषः आभीर-पल्ली स्यात्" । क्वचित् घोषे—कस्यामपि आभीराणां वसतौ, किसी अहीर-बस्ती में । कानिचित् अहानि—कतिपयानि दिनानि, कुछ दिनों तक । विश्रमय्य—विश्रामं कारयित्वा, विश्राम दिलाकर, सुस्तवा कर, वि+श्रम्+णिच्+ल्यप् । राजपुरुष-सम्पात-भीतः—नृपकर्मचारिणाम् आगमनस्य शङ्कया व्याकुल-चित्तः । राजपुरुष—राजा के अफसर, सम्पात—आगमन, आक्रमण । सम्+पत्+घञ् । भीत—त्रस्त, डरा हुआ, भी+क्त । राज्ञः पुरुषाः इति राजपुरुषाः (ष० त०); तेषां सम्पातः इति राजपुरुष-सम्पातः (ष० त०) तेन भीतः इति राजपुरुषसम्पात-भीतः (तृ० त०), राजा के अफसरों के आ जाने की आशंका से भयभीत । दुरध्वम्—दुष्टः अध्वा इति दुरध्वः

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

तम् दुरध्वम् (कर्मधारय), बुरा रास्ता। कोई कोई विद्वान् लिखते हैं "दुरध्वम् दूरमार्गम्"। यह अर्थ ठीक नहीं मालूम पड़ता। दूरश्चासौ अध्वा च इति दूराध्वः तम् 'दूराध्वम्' ऐसा रूप बनेगा न कि 'दुरध्वम्'। 'दुरध्वम्' तो तभी बनेगा जब "दुष्टः अध्वा" विग्रह किया जायगा। जहाँ "दूराध्वम्" पाठ हो वहाँ "दूरमार्गम्" अर्थ लगाना चाहिए। दूराध्वम् का अर्थ होगा "दूर रास्ता"। अपासरम्—(मैं) भाग गया, पलायाम्बभूव। दारुणपिपासा पीडितस्य—अत्यन्तमसह्यया तृषा व्याकुलस्य, अत्यन्त असह्य प्यास से व्याकुल। दारुणा (घोरा) चासौ पिपासा च इति दारुणपिपासा (कर्मधारय), दारुणपिपासया पीडितः इति दारुणपिपासापीडितः तस्य दारुणपिपासापीडितस्य (तृ० त०) विशेषण है "अस्य" का। दातुकामः—दातुं कामः (इच्छा) यस्य सः दातुकामः (बहु०)। वारि दातुकामः—पानी देने की इच्छा थी जिसकी ऐसा मैं। अपभ्रश्य—स्खलित्वा, फिसल कर, अप+भ्रंश्+ल्यप्। अनुगृहीतः—अनुग्रह किया गया, अनु+ग्रह्+क्त। शरणम् एधि—शरण हो। 'एधि' माने "हो"। अस् (होना) अदादिगणी लोट् लकार मध्यम-पुरुष एकवचन। विशरणस्य—शरण-रहितस्य, शरणहीन की, विगतं शरणं यस्य स विशरणः तस्य विशरणस्य (बहु०)। राजसूनोः—राजकुमारस्य, राजकुमार का। राज्ञः सूनुः इति राज-सूनुः तस्य राजसूनोः, (ष० त०)। इति—इत्थमुक्त्वा, ऐसा कह कर। अञ्जलिम् अबध्नात्—अँजुली बाँधा, यानी हाथ जोड़ा। किमीया—कस्य इयम् इति किमीया, किसकी, किम्+छ+टाप्। जात्या—जाति से, जन्+क्तिन्=जाति, तृतीया एक वचन। इति अनुयुक्ते मया—इत्थं मया पृष्टे सति, मेरे द्वारा ऐसा पूछे जाने पर। अनु+युज्+क्त=अनुयुक्त, पृष्ट, पूछा गया हुआ। अस्य माता जात्या किमीया—इसकी माँ जाति से कौन है, यानी किस जाति की है। दुहितरि—कन्या में, दुहितृ शब्द की सप्तमी का एक वचन है, दुहिता दुहितरौ दुहितरः; दुहितरम् दुहितरौ दुहितॄः

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

इत्यादि रूप चलते हैं। कुसुमधन्वन:—कुसुमधन्वा से (पञ्चमी विभक्ति एक वचन); 'कुसुमधन्वन्' नाम था कोसल देश के राजा का। एतन्मातु:—अस्य जनन्या:, इसकी माता के, एतस्य माता इति एतन्माता तस्या: एतन्मातु: (ष० त०)। मत्पितु:—मम जनकस्य, मेरे पिता के। मम पिता इति मत्पिता तस्य मत्पितु: (ष० त०) सस्नेहम्—स्नेहपूर्वकम्। सस्वजे—आलिलिङ्ग, आलिङ्गन किया। कतमस्ते—कतम: ते। कतम:—कौन सा, किम्+डतमच्। नयावलिप्तम्—नय—(राजनीति); अवलिप्त—गर्वित, अव+लिप्+क्त। नयेन अवलिप्त: इति नयावलिप्त: तम् नयावलिप्तम् (तृ० त०) राजनीतौ चातुर्यात् अभिमानयुक्तम् राजनीति से गर्वित। नयेन एव—राजनीति से ही। उन्मूल्य—विनाश्य, उखाड़ कर, विध्वंस कर, उत्+मूल+ल्यप्। पित्र्ये पदे—पितु: स्थाने, पिता के स्थान पर, अर्थात् राजसिंहासन पर, पितु: सम्बन्धि इदम् इति पित्र्यम्, पितृ+यत्। प्रतिष्ठापयेयम्—आरूढं कारयेयम्, रख दूँ, प्रति+स्था+णिच् विधि उत्तम पुरुष एक वचन। तावत् तब तक, इतने ही में। आपतितौ—(द्वौ मृगौ) आगतौ, आ गए (दो मृग) आ+पत्+क्त। त्रीन् इषून् अतीत्य—त्रयाणां बाणानां प्रहारेभ्य: आत्मानं रक्षित्वा, तीन बाणों को अतिक्रमण कर, यानी तीन बाणों से बचकर। प्रतिज्ञाय—प्रतिज्ञां कृत्वा, प्रतिज्ञा कर, प्रति+ज्ञा+ल्यप्। कथम्—किस प्रकार, केन प्रकारेण। एनां क्षुधम्—इमां बुभुक्षाम्, इस क्षुधा को। क्षपयेयम्—निवारयेयम्, दूरीकुर्याम्, निवारण करें। अवशिष्टम्—बचे हुए, अव+शिष्+क्त। इषुद्वयम्—द्वौ बाणौ, दो बाणों को। इष्वो: (बाणयो:) द्वयम् इति इषुद्वयम् (ष० त०)। कोदण्डम्—धनु:। आक्षिप्य—बलात् गृहीत्वा, छीन कर, आ+क्षिप्+ल्यप्। अवधिषम्—अहनम्, मार डाला, हन् सामान्यभूत उत्तमपुरुष एक वचन। एक: सपत्राकृत:—पत्रेण सह विद्ध:। पत्र—पुङ्ख, डैना, जो बाण के अग्रभाग पर (बाण की नोक पर) लगा रहता है। "सपत्राकृत:" का अर्थ है "वह मृग पत्र सहित (पुङ्ख सहित)

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

कर दिया गया', यानी वह मृग इस प्रकार बिंध गया कि सारा बाण तो मृग के शरीर में धँस गया, केवल पुङ्ख शरीर के बाहर दिखाई देता रहा। सपत्र+डाच्+कृ+क्त, "सपत्रनिष्पत्रात् अतिव्यथने"—इति डाच्। निष्पत्राकृतः—दूसरा मृग इस प्रकार बिंध गया कि बाण का पुंख तक न दिखाई देता था; पुंखसमेत सारा बाण हिरन के शरीर में चला गया, निष्पत्र+डाच्+कृ+क्त। सिद्धान्त कौमुदी में यों व्याख्या की गई है सपत्राकरोति मृगम्—सपुंखशरप्रवेशेन सपत्रं करोति इत्यर्थः पुंखसहित अर्थात् नोक-सहित बाण के प्रवेश द्वारा मृग को 'सपत्र' करता है। निष्पत्राकरोति—सपुंखस्य शरस्य अपरपार्श्वे निर्गमनात् निष्पत्रं करोतीत्यर्थः। पुंख-समेत बाण मृग के शरीर के दूसरे पार निकल जाता है, तब "निष्पत्र"—करना कहलाता है। मृगयवे—लुब्धकाय, बहेलिये को, यह 'मृगयु' की चतुर्थी का वचन है, इसका अन्वय है "दत्त्वा" के साथ। मृगयवे दत्त्वा—बहेलिए को देकर। अपलोमत्वचः—लोमन—रोआँ, बाल, लोमानि च त्वक् च इति लोमत्वचौ (द्वन्द्व); अपगते लोमत्वचौ यस्य सः अपलोमत्वक् तस्य अपलोमत्वचः (बहु०) जिसके रोएँ तथा चमड़ा निकाल लिए गए हों, यानी उस मृग के बाल काट लिये तथा चमड़ा शरीर में से निकाल लिया गया। क्लोम—क्लोमन् (नपुं०), क्लोम क्लोम्नी क्लोमानि, 'क्लोम' माने "मस्तिष्क अथवा फेफड़ा अथवा अँतड़ियाँ"। अमरकोश में "तिलकं क्लोम मस्तिष्कम्" दिया हुआ। आप्टे कोश में क्लोमम्—दिया है, न कि "क्लोमन्" और अर्थ दिया है "lungs" (फेफड़े)। अपोह्य—हटा कर, निकाल, कर, अप+वह्+ल्यप्। निष्कुलाकृत्य—अन्दर के सारे शरीरावयवों को निकाल कर, निर्गतं कुलम् (अन्तरवयवानां समूहः) यस्मात् तत् निष्कुलम् निष्कुलं कृत्वा इति निष्कुलाकृत्य, निष्कुल+डाच्+कृ+ल्यप्। विकृत्य—विच्छिद्य, काट काट कर, इसका कर्मकारक है "ऊर्वस्थिग्रीवादीनि" अथवा "ऊर्वङ्घ्रिग्रीवादीनि" वि+कृत्+ल्यप्। ऊर्वस्थिग्रीवादीनि—ऊरु—जंघा, अस्थि—हड्डी, नपुंसकलिंग ... वहाँ "अङ्घ्रि"

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

माने "चरण" समझना चाहिए । ग्रीवा—गरदन । ऊरू (दो जंघे) च अस्थीनि च अथवा अङ्घ्रीच ग्रीवा च इति ऊर्वस्थिग्रीवाः (द्वन्द्व) अथवा ऊर्वङ्घ्रिग्रीवा (द्वन्द्व), ताः आदयो येषां तानि ऊर्वस्थिग्रीवादीनि (बहु०) अथवा ऊर्वङ्घ्रिग्रीवादीनि (बहु०), दोनों जंघों की हड्डियों को अथवा पैरों को तथा गरदन आदि को काटकर। शूलाकृत्य—शूले कृत्वा, शूलेन पाचयित्वा इत्यर्थः, लोहे के छड़ पर रख कर, तथा भून कर, "शूलात् पाके"—इति डाच्प्रत्ययः, शूल+डाच्+कृ+ल्यप् । दावाङ्गारेषु—वनवह्निषु, जंगल की आग में। दावः—वनवह्निः, दावस्य अङ्गाराः इति दावाङ्गाराः तेषु दावाङ्गारेषु (ष० त०)। दावाङ्गारेषु जंगल की आग में। तप्तेन—भर्जितेन, भूने हुए। मांसेन—मांस से। तप्तेन आमिषेण—भूने हुए गोश्त से। तयोः—उन दोनों की अर्थात् लड़के की तथा उस बूढ़े की। आत्मनः—अपनी, विश्रुत अपने लिए यह शब्द प्रयुक्त कर रहा है। क्षुधम्—बुभुक्षाम्, भूख को। अतक्षिषम्—काट दिया, तक्ष् धातु भ्वादिगणी तथा स्वादिगणी दोनों है। परस्मैपदी है। अर्थ है "काटना"। तक्षति तक्षतः तक्षन्ति तथा तक्ष्णोति तक्ष्णुतः तक्ष्णुवन्ति रूप चलते हैं। 'अतक्षिषम्' सामान्य भूतउत्तमपुरुष एकवचन का रूप है। जहाँ पर "अतार्षम्" पाठ है वहाँ अर्थ करना होगा "अतिक्रान्तवान्"—"मैं पार कर गया (भूख को)" यह 'तृ' धातु का लुङ् उत्तमपु० एक० रूप है।

तस्मिन्कर्मणि मत्सौष्ठवेनातिहृष्टं किरातमस्मि पृष्टवान् (अहम्)। अयि जानासि माहिष्मतीवृत्तान्तमिति। असावाचष्ट। तत्र व्याघ्रत्वचो हस्तीश्च विक्रीयाद्यैवागतः। किं न जानामि। प्रचण्डवर्मा नाम चण्डवर्मानुजो मित्रवर्मदुहितरं मञ्जुवादिनीं लिप्सुरभ्येतीति तेन सोत्सवा पुरीति। अथ कर्णे जीर्णमब्रवम्। धूर्तो मित्रवर्मा दुहितरि सम्यक्प्रतिपत्त्या मातरं विश्वास्य तन्मुखेन प्रत्याकृष्य बालकं जिघांसति। तत्प्रतिगत्य कुशलमस्य मद्वार्त्तां च देव्यै रहसि निवेद्य पुनः कुमारः शार्दूलभक्षित

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

इति प्रकाशमाक्रोशः कार्यः। स दुर्मतिरन्तःप्रीतो बहिर्दुःखं दर्शयन्देवीमनुनेष्यति। पुनस्त्वया तन्मुखेन स वाच्यः। यदपेक्षया त्वदुपक्रमत्यक्रमिषं सोऽपि बालः पापेन मे परलोकमगात्। अथ तु त्वदादेशकारिण्येवाहमिति। स तथोक्तः प्रीतिं प्रतिपद्याभिपत्स्यते। पुनरनेन वत्सनाभनाम्ना महाविषेण संनीय तोयं तत्र मालां मज्जयित्वा तया स वक्षसि मुखे च हन्तव्यः। 'स एवायमसिप्रहारः पापीयसस्तवास्तु यद्यस्मि पतिव्रता' इति। पुनरनेनागदेन सङ्गमितेऽम्भसि तां मालां मज्जयित्वा स्वदुहित्रे देया। मृते तु तस्मिंस्तस्यां च निर्विकारायां सत्यां सतीत्येवैनां प्रकृतयोऽनुवर्तिष्यन्ते।

हिन्दी अनुवाद—इस कार्य में मेरी निपुणता से (मेरी निपुणता देख कर) अत्यन्त प्रसन्न हुए किरात (बहेलिए) से मैंने पूछा—अरे, क्या माहिष्मती का समाचार जानते हो। उसने कहा—वहाँ बाघ के चमड़े तथा मशक (चमड़े के झोले) बेंचकर आज ही आया हूँ। (मैं) क्या नहीं जानता। चण्डवर्मा का छोटा भाई प्रचण्डवर्मा, मित्रवर्मा की लड़की मञ्जुवादिनी को पाने की इच्छा से आ रहा है। इस कारण नगरी उत्सव-युक्त है (नगरी में बड़े उत्सव मनाए जा रहे हैं)।

(मैंने) उस बुड्ढे से कान में कहा—धूर्त मित्रवर्मा कन्या के प्रति अत्युत्तम व्यवहार द्वारा (कन्या के प्रति खूब अच्छा व्यवहार करके), (कन्या की) माता को विश्वास में लाकर, उसी (माँ) के द्वारा बालक को (अपने पास) खींचकर (बुला कर), (इस बालक को) मारना चाहता है। सो तुम लौटकर, रानी से एकान्त में, इस बालक का कुशल-समाचार तथा मेरा समाचार बतलाकर, फिर "कुमार व्याघ्र द्वारा खा डाला गया" ऐसी अफवाह उड़ा कर खुले आम रोना-पीटना शुरू कर देना। वह दुष्ट अन्दर से प्रसन्न होता हुआ, और बाहर से (शोक) प्रकट करता हुआ, महारानी जी को सान्त्वना देगा। फिर तुम उस (देवी) के द्वारा, उस (मित्रवर्मा) से कहलाना कि जिसके कारण मैंने तुम्हारी कही हुई

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

बात का उल्लङ्घन किया, वह लड़का भी मेरे पाप से परलोक चला गया। अब तुम्हारी ही आज्ञाओं का पालन करूँगी।"

इस प्रकार कहा गया हुआ वह, प्रसन्नता को प्राप्त होकर, (रानी की बात) मान लेगा। फिर, इस वत्सनाभनामक महाविष को पानी में मिला कर उसमें माला डुबोकर, उस रानी के द्वारा, वह (मित्रवर्मा) छाती तथा मुँह पर यह कह कर मारा जाना चाहिए कि यदि मैं पतिव्रता हूँ तो यह माला-प्रहार तुझ पापी के लिए खड्गप्रहार हो जाये। फिर इस (दूसरी) दवा से मिले हुए (दूसरे) जल में, उस माला को डुबोकर, अपनी लड़की को दे दो उस (मित्रवर्मा) के मर जाने पर तथा उस (लड़की) के निर्विकार (सकुशल) बनी रहने पर, प्रजाएँ यह समझ कर कि 'यह रानी सती (पतिव्रता) है" इस (रानी) का अनुसरण करेंगी।

टिप्पणी—एतस्मिन् कर्मणि—इस कार्य में यानी हिरन को मारने से लेकर उसके गोश्त को आग में भूनने तक के कार्य में। मत्सौष्ठवेन—मदीयेन चातुर्येण। सौष्ठव—चातुरी, उत्कृष्टता, मम सौष्ठवम् इति मत्सौष्ठवम् तेन मत्सौष्ठवेन (ष० त०)। अतिहृष्टम्—अत्यन्तं प्रसन्नम् किरातम्—व्याधम्, बहेलिए को (से)। अस्मि—अहम्, मैं। यहाँ पर 'अस्मि' का अर्थ है "मैं"। पृष्टवान्—अपृच्छम्, पूछा, प्रच्छ +क्तवतु। अयि—अरे, सम्बोधन के लिए अव्यय है। जानासि—वेत्सि, क्या तुम जानते हो। माहिष्मती-वृत्तान्तम्—माहिष्मती-समाचारम्, माहिष्मती का वृत्तान्त, माहिष्मत्याः वृत्तान्तः इति माहिष्मतीवृत्तान्तः तम् माहिष्मतीवृत्तान्तम्। असावाचष्ट—असौ आचष्ट। आचष्ट—कहा, आपूर्वक चक्ष् धातु अदादिगणी, आत्मनेपदी अनद्यतन भूत का प्रथम पुरुष एक वचन है, अचष्ट अचक्षाताम् अचक्षत। अचष्ठाः अचक्षाथाम् अचड्ढ्वम्। अचक्षि अचक्ष्वहि अचक्ष्महि—अनद्यतन भूत के पूरे रूप हैं। व्याघ्रत्वचः—व्याघ्र-चर्माणि, बाघ के चमड़ों

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

को । व्याघ्राणां चर्माणि इति व्याघ्रचर्माणि । दृतीः—चमड़े के थैलों मशकों को । विक्रीय—बेंच कर, वि+क्री+ल्यप् ।

किं न जानामि—मैं क्या नहीं जानता यानी सब कुछ जानता हूँ । अथवा यह भी अर्थ हो सकता है, "मैं क्यों नहीं जानता" अर्थात् अवश्य जानता हूँ ।" मित्रवर्मदुहितरम्—मित्रवर्मणः दुहिता इति मित्रवर्म-दुहिता ताम् मित्रवर्म-दुहितरम् (ष० त०) । लिप्सुः—पाने का इच्छुक, लब्धुम् इच्छुः इति लिप्सुः, लभ्+सन्+उ । अभ्येति—अभ्यागच्छति, आ रहा है । इति तेन—इस कारण से । सोत्सवा—उत्सवेन सहिता इति सोत्सवा अर्थात् उत्सवपूर्णा । जीर्णम्—वृद्ध पुरुषम्, बुड्ढे को (से) । कर्णे—श्रवणे, कान में । सम्यक्—समीचीनेन प्रकारेण, भले प्रकार । प्रतिपत्त्या—व्यवहारेण, ध्यानदानेन, बर्ताव से । सम्यक् प्रतिपत्त्या—भले प्रकार बर्ताव से (करके) । मातरं विश्वास्य—(कन्या की) माता को विश्वास दिला कर, (विश्वास में लाकर), माता के हृदय में यह भाव पैदा कर कि यह मित्रवर्मा बड़ा सज्जन है, हमारा बड़ा हितैषी है, और हमारे लड़के-लड़की का बड़ा शुभचिन्तक है । तन्मुखेन—तस्याः मुखेन इति तन्मुखेन, अर्थात् मातृ-मुखेन, माता द्वारा । प्रत्याकृष्य—फिर से खींच कर, यानी, वापस बुलवा कर, प्रति+आ+कृष्+ल्यप् । बालकं जिघांसति—बालकं हन्तुम् इच्छति । हन्+सन् वर्तमानकाल प्र० पु० एक वचन । तत्—तस्मात् कारणात्, इसलिए, तो । प्रतिगत्य—प्रतिनिवृत्य, वापस जाकर, प्रति+गम्+ल्यप् । अस्य कुशलम्—अस्य बालकस्य सकुशला स्थितिम्, इस बालक का कुशल पूर्वक रहना । मद्वार्त्ताम्—मम समाचारम्, मेरा समाचार, मम वार्त्ता इति मद्वार्त्ता ताम् मद्वार्त्ताम् (ष० त०) । देव्यै—महारानी (वसुन्धरा) से । रहसि—एकान्ते । निवेद्य—कथयित्वा, नि+विद्+णिच्+ल्यप् । शार्दूलभक्षितः—शार्दूलेन (व्याघ्रेण) भक्षितः खादितः इति शार्दूलभक्षितः (तृ० त०), व्याघ्रद्वारा खा लिया गया । प्रकाशम्—सर्वजन-समक्षम्, जन-साधारण के सामने । आक्रोशः—जोर जोर से रुलाई-पिटाई । कार्यः—किया

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

जाना चाहिए, कृ+ण्यत् "ऋहलोर्ण्यत्" सूत्र से ण्यत् प्रत्यय हुआ। दुर्मतिः—दुष्टः। दुष्टा मतिः यस्य सः दुर्मतिः (बहु०)। अन्तःप्रीतः—अन्तः (अन्तःकरणे) प्रीतः (प्रसन्नः), हृदय से प्रसन्न। अनुनेष्यति—सान्त्वयिष्यति, समझावेगा बुझावेगा, ढाढस देगा।

पुनः त्वया तन्मुखेन स वाच्यः—फिर तुम, तुम, देवी (रानी) द्वारा उससे कहलाना। यदपेक्षया—यस्य अपेक्षा इति यदपेक्षा तथा यदपेक्षया (ष० त०) जिसके निमित्त। त्वदुक्तम्—तुम्हारी कही हुई बात, त्वया उक्तम् इति त्वदुक्तम् (तृतीया तत्पुरुष)। अत्यक्रमिषम्—उल्लंघित-वती, मैंने अतिक्रमण (उल्लंघन) किया। अगात्—चला गया, इण् धातु अनद्यतनभूत प्रथमपुरुष एक वचन। त्वदादेशकारिणी—तव आदेशः इति त्वदादेशः (ष० त०), तुम्हारी आज्ञा। त्वदादेशं कुरुते तच्छीला इति त्वदादेशकारिणी (उपपद तत्पुरुष), त्वदादेश+कृ+णिनिस्ताच्छील्ये+ङीप्, तुम्हारी (ही) बात मानूँगी। प्रीतिं प्रतिपद्य—प्रसन्नताम् प्राप्य। प्रीति—प्री+क्तिन्। प्रतिपद्य—प्रति+पद्+ल्यप्। अभिपत्स्यते—समीपं गमिष्यति 'अभि' पूर्वक 'पद्' धातु का अर्थ होता है "पास जाना"—रावणावरजा तत्र राघवं मदनातुरा। अभिपेदे निदाघार्ता व्यालीव मलयद्रुमम्। (रघुवंश सर्ग १२, श्लोक ३२) तात्पर्य यह कि महारानी की बातों में विश्वास कर, उसके साथ दुराचार करने के लिए, उसके पास आवेगा। तब रानी जहर-मिले हुए जल में एक माला डुबोकर, उसकी छाती और मुँह पर मारेगी और कहेगी कि यदि मैं पतिव्रता हूँ तो यह माला प्रहार तेरे लिए खड्गप्रहार बन जाय। फिर एक दूसरी दवा दूसरे जल में घोल कर उस माले को उसी जल में डुबो कर अपनी लड़की को दे देगी। परिणाम यह होगा कि मित्रवर्मा मर जायगा परन्तु लड़की को कुछ भी न होगा। तब प्रजा के लोग कहेंगे कि यह रानी वसुन्धरा पतिव्रता है, अतः इसके शासन में रहना चाहिए।

वत्सनाभनाम्ना—'वत्सनाभ' नाम था जहर का। 'दारदो वत्सनाभः स्यात्' इत्यमरः। वत्सनाभः इति नाम यस्य तत् वत्सनाभनाम, तेन

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
वत्सनाभनाम्ना (बहु०) । महाविषेण—महत् च तत् विषम् इति महाविषम् तेन महाविषेण (कर्मधारय) । संनीय—सम्मिश्र्य, मिला कर, सम्+नी+ल्यप् , तोये—जले, जल में । मज्जयित्वा—डुबो कर, मस्ज् धातु+क्त्वा प्रत्यय । तया—देव्या वसुन्धरया । वक्षसि—उरसि, छाती पर । सः एव अयम्—अयम् मालाप्रहारः असिप्रहारः—तलवार की चोट । असि—खड्ग, तलवार । प्रहार—चोट, प्र+हृ+घञ् । असेः (खड्गस्य) प्रहारः इति असिप्रहारः (ष० त०) । पापीयसः—पापिनः, पापी के । अतिशयेन पापः इति पापीयान् तस्य पापीयसः पाप+ईयसुन् षष्ठी एक वचन, विशेषण है "तव" का । यद्यस्मि पतिव्रता—यदि+अस्मि पतिव्रता, यदि (मैं) पतिव्रता हूँ । अगदेन—औषधेन, दवा से । "संजीवनं स्यादगदम्" इति वैजयन्ती । संगमिते—सम्मेलिते, सम्मिश्रिते, मिलाए गए हुए, सम्+गम्+णिच्+क्त । अम्भसि—जले, जल में । अम्भः अम्भसी अम्भांसि रूप चलते हैं । स्वदुहित्रे—अपनी कन्या मंजुवादिनी को, स्वस्य दुहिता इति स्वदुहिता तस्यै स्वदुहित्रे (ष० त०) । देया—दी जानी चाहिए, दा+यत्+टाप् । 'अचोयत्' सूत्र से स्वरान्त धातु दा के आगे यत् प्रत्यय जुड़ा है । निर्विकारायाम्—विकारशून्यायाम् , विकाररहित, किसी भी प्रकार के परिवर्तन से रहित । निर्गतः विकारः यस्यः सा निर्विकारा तस्याम् निर्विकारायाम् (बहु०) । सत्याम्—होने पर, अस् धातु+शतृ प्रत्यय+ङीप् सप्तमी एक वचन, भावे सप्तमी "यस्य च भावेन भाव-लक्षणम्"—सूत्र से यहाँ सप्तमी हुई है । सतीत्येवैनां—सती इति एव एनाम् अर्थात् "इयं महारानी वसुन्धरा सती पतिव्रता स्त्री अस्ति', इति कथयित्वा जनाः एनाम् (वसुन्धराम्) अनुवर्तिष्यन्ते (अनुसरिष्यन्ति) ।

पुनः प्रचण्डवर्मणे संदेश्यम् । 'अनायकमिदं राज्यम् । अनेनैव सह बालिकेयं स्वीकार्या' इति । तावदावां कापालिकवेषच्छन्नौ देव्यैव दीयमानभिक्षौ पुराद्बहिरुपश्मशानं वत्स्यावः । पुनरार्यप्रायान्पौरवृद्धानामात्यांश्च मन्त्रवृद्धानेकान्ते ब्रवीतु देवी । स्वप्नेऽद्य मे देव्या विन्ध्यवासिन्या कृतः प्रसादः । अद्य चतुर्थेऽहनि प्रचण्डवर्मा मरिष्यति ।
CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

पञ्चमेऽहनि रेवातटवर्तिनि मद्भवने परीक्ष्य वैजन्यं जनेषु निर्गतेषु कपाटमुद्घाट्य त्वत्सुतेन सह कोऽपि द्विजकुमारो निर्यास्यति। स राज्यमिदमनुपाल्य बालं ते प्रतिष्ठापयिष्यति। स खलु बालो मया व्याघ्रीरूपया तिरस्कृत्य स्थापितः। सा चेयं वत्सा मञ्जुवादिनी तस्य द्विजातिदारकस्य दारत्वेनैव कल्पितेति तदेतदतिरहस्यं युष्मास्वेव गुप्तं तिष्ठतु यावदेतदुपपत्स्यत इति।

स साम्प्रतमतिप्रीतः प्रायात्। अर्थश्चायं यथाचिन्तितमनुष्ठितोऽभूत्। प्रतिदिशं च लोकवादः प्रासर्पत् अहो माहात्म्यं पतिव्रतानाम्। असिप्रहार एव हि स मालाप्रहारस्तस्मिन्जातः। न च शक्यमुपधियुक्त-मेतत्कर्मेति वक्तुम्। यतस्तयैव दत्तं तद्दाम दुहित्रे स्तनमण्डनमेव तस्यै जातं न मृत्युः। योऽस्याः पतिव्रतायाः शासनमतिवर्तते स भस्मैव भवेदिति।

हिन्दी अनुवाद—फिर प्रचण्ड-वर्मा के पास सन्देश भेज दिया जाना चाहिये (सन्देश भेज देना) कि यह राज्य राजा-हीन है। इस (राज्य) के साथ ही यह लड़की (आप के द्वारा) स्वीकार की जानी चाहिये। तब तक हम दोनों कापालिक के वेष में छिपे हुये, महारानी ही द्वारा दी गई हुई भिक्षा को लेकर, पुर से बाहर, श्मशान भूमि के समीप, निवास करेंगे। तदनन्तर सम्माननीय व्यक्तियों, वृद्ध पुरवासियों तथा विश्वास-पात्र मन्त्रिवृद्धों को (बुलाकर) एकान्त में रानी कहे कि आज स्वप्न में विन्ध्यवासिनी देवी द्वारा मेरे ऊपर कृपा की गई है। आज के चौथे दिन प्रचण्डवर्मा मर जायगा, पाँचवें दिन, रेवा (नर्मदा) नदी के किनारे बना हुआ मेरा जो मन्दिर है; उसमें, सुनसान की खूब जाँच पड़ताल कर, लोगों के निकल जाने पर (मन्दिर से बाहर चले जाने पर), किवाड़ उघाड़ कर तेरे बेटे के साथ कोई ब्राह्मण-कुमार निकलेगा। वह इस राज्य का पालन कर तेरे लड़के को (सिंहासन पर) स्थापित करेगा। वह लड़का व्याघ्री का रूप धारण करने वाली मुझ विन्ध्यवासिनी देवी द्वारा छिपाकर रक्खा गया है। यह

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
लड़की मञ्जुवादिनी उस ब्राह्मणकुमार की स्त्री बनाई गई (निश्चित की गई) है। इसलिए यह अत्यन्त रहस्य घटना तब तक तुम्हीं तक गुप्त रहे जब तक कि यह बात घटित न हो जाय (पूरी न हो जाय)।

वह (नालीजंघ) "ठीक है" ऐसा कह कर, अत्यन्त प्रसन्न हो, चला गया और यह बात जैसी सोची गई थी वैसी ही सम्पादित हो गई। प्रत्येक दिशा में जन साधारण में यह चर्चा फैल गई। "ओहो, (देखो) पतिव्रताओं का माहात्म्य। माला की वह चोट उस (मित्रवर्मा) के ऊपर तलवार की चोट बन गई। 'यह कार्य कपट-युक्त था' ऐसा कहना उचित नहीं है, क्योंकि उसी (वसुन्धरा रानी) के द्वारा (अपनी) कन्या को दी गई हुई वही माला, उस (कन्या) के लिए स्तन का आभूषण हो गई न कि मृत्यु। जो (व्यक्ति) इस पतिव्रता (रानी वसुन्धरा) की आज्ञा का उल्लघंन करेगा वह भस्म ही हो जायगा।"

टिप्पणी—**प्रचण्डवर्मणे**—चतुर्थी विभक्ति एक वचन, प्रचण्ड-वर्मा के लिए (यह मालवा का राजा था जिसने मञ्जुवादनी को ब्याहने की आशा लगा रक्खी थी)। **सन्देश्यम्**—कथनीयम्, सन्देश भेज दिया जाना चाहिए, सम्+दिश्+णिच्+यत्। **अनायकम्**—नायक, रहितम्, अविद्यमानः नायकः यस्मिन् तत् अनायकम् (बहुव्रीहि) विशेषण है "राज्यम्" का। **अनेन एव सह**—इस राज्य के ही साथ। **इयं बालिका**—इयं मञ्जुवादिनी। **स्वीकार्या**—भवता ग्रहणीया भार्या-त्वेन इति शेषः। **तावदावाम्**—तावत् आवाम्। तब तक हम दोनों। **कापालिकवेषच्छन्नौ**—छन्न—छिपा हुआ, छद्+क्त। कपालेन चर-तीति कापालिकः, अर्थात् व्रतधारी, कपाल+ठक्। 'कापाली स्यात् महा-व्रती' इति कोषः। जो मनुष्य मुर्दों का कपाल लेकर उसी में भीख माँगता है और उसी से भोजन-छाजन इत्यादि करता है उसे 'कापालिक' कहते हैं। कापालिकस्य वेषः इति कापालिक-वेषः (ष० त०), कापालिकवेषेण छन्नौ इति कापालिकवेषच्छन्नौ (तृ० त०), कापालिक के वेष से (में) ढके हुए (छिपे हुये)। **देव्या एव**—राज्ञ्या वसुन्धरया एव, रानी

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

वसुन्धरा ही के द्वारा। दीयमानभिक्षौ—दीयमान—दी जाती हुई, दा + शानच् कर्मणि। दीयमाना भिक्षा याभ्यां तौ दीयमानभिक्षौ (बहु०), दी जाती हुई हो भिक्षा जिनको ऐसे हम दोनों। देव्या एव दीयमानभिक्षौ—रानी ही द्वारा दी जा रही हो भिक्षा जिनको ऐसे हम दोनों। अर्थात् रानी वसुन्धरा हम दोनों को भिक्षा देगी, उस भिक्षा को लेकर। उपश्मशानम्—श्मशानस्य समीपम् इति उपश्मशानम् (अव्ययीभाव समास) श्मशान घाट के पास। वत्स्यावः—निवासं करिष्यावः। हम दोनों रहेंगे: वस् धातु लृट् लकार उत्तम पुरुष द्विवचन। आर्यप्रायान्—सम्माननीयान् पुरुषान्, प्रायेण आर्याः इति आर्यप्रायाः तान् आर्यप्रायान्, बहुत ही सम्मानित व्यक्तियों को। पौरवृद्धान्—पौराः—पुरवासिनः, पुर में रहने वाले लोग। पुरे भवाः पौराः, पुर + अण्। पौरेषु वृद्धाः इति पौरवृद्धाः तान् पौरवृद्धान् (सप्तमी तत्पुरुष) पुरवासियों में जो वृद्ध लोग हैं उनको। आप्तान्—विश्वसनीयान्, विश्वसनीय लोगों को। मन्त्रिवृद्धान्—मन्त्रियों में जो वृद्ध थे उनको। मन्त्रिषु वृद्धाः इति मन्त्रिवृद्धाः तान् मन्त्रिवृद्धान् (सप्तमीतत्पुरुष)। मे कृतः प्रसादः—मयि वसुन्धरायाम् अनुग्रहः कृतः, मुझ वसुन्धरा पर अनुग्रह किया गया। देव्या विन्ध्यवासिन्या—देवी विन्ध्यवासिनी द्वारा। अद्य चतुर्थे अहनि—आज के चौथे दिन। रेवातटवर्तिनि—रेवा—नर्मदा। रेवायाः तटम् (तटः वा) इति रेवातटः (ष० त०), रेवातटे वर्तते तच्छीलः इति रेवातटवर्ती तस्मिन् रेवातटवर्तिनि (उपपद तत्पुरुष) रेवा (नर्मदा) नदी के तट पर स्थित। यह विशेषण है "मद्भवने" का। मद्भवने—मम मन्दिरे, मेरे मन्दिर में। मम भवनम् इति मद्भवनम् तस्मिन् मद्भवने (ष० त०)। परीक्ष्य—परीक्षा (जांच) करके, परि + ईक्ष् + ल्यप्। इसका कर्म है 'वैजन्यम्"। वैजन्यम्—विगताः जनाः यस्मात् तत् विजनम्, (बहु०)। विजनस्य भावः वैजन्यम् अर्थात् शून्यत्वम्। अर्थात् इस मन्दिर के अन्दर अब कोई भी मनुष्य नहीं रह गया है इस बात की पूरी जाँच कर। वैजन्यं परीक्ष्य—सुनसान

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

को देख कर (जाँच कर)। जनेषु निर्गतेषु—लोकेषु मन्दिरात् बहिः निस्सृतेषु, लोगों के निकल जाने पर। कपाटम्—किवाड़ को। उद्घाट्य—उघाड़ (खोल) कर। त्वत्सुतेन—तव (वसुन्धरायाः) सुतः इति त्वत्सुतः तेन त्वत्सुतेन (ष० त०), तुम्हारे बेटे के साथ। निर्यास्यति—निर्गमिष्यति, निकलेगा। अनुपाल्य—पालन कृत्वा, पालन (रक्षा) कर, अनु+पाल्+ल्यप्। बालं ते—ते—तव, तुम्हारे, तुम्हारे बालक को। प्रतिष्ठापयिष्यति—(सिंहासन पर) बैठावेगा, प्रति+स्था+णिच्+लृट् प्रथम पुरुष एक वचन। व्याघ्रीरूपया—व्याघ्र्याः रूपं यस्याः सा व्याघ्रीरूपा तया व्याघ्रीरूपया (बहु०), बाघिन का सा रूप था जिसका ऐसी मुझ विन्ध्यवासिनी देवी द्वारा। तिरस्कृत्य—छिपाकर, तिरस्+कृ+ल्यप्। पदचन्द्रिका टीका कहती है—"तिरस्कृत्य" का अर्थ है "भीषयित्वा"—यानी डरा कर। स्थापितः—रक्खा गया है, स्था+णिच्+क्त। वत्सा—कन्या। द्विजातिदारकस्य—ब्राह्मण-बालकस्य, ब्राह्मण के लड़के की। दारकः—कुमारः। द्विजातेः (ब्राह्मणस्य) दारकः (बालकः) इति द्विजातिदारकः तस्य द्विजातिदारकस्य (ष० त०)। दारत्वेन—भार्यात्वेन, पत्नी होने के लिए। कल्पिता—रचिता, क्लृप्+क्त+टाप्। तत्—तो, इसलिए। अतिरहस्यम्—अतिशयितं रहस्यम् इति अतिरहस्यम्, अत्यन्त गुप्त घटना। युष्मासु एव—तुम्हीं में यानी वसुन्धरा में ही। गुप्तम् तिष्ठतु—छिपी हुई रहे। यावदेतदुपपत्स्यते—यावत् एतत् उपपत्स्यते, जब तक यह (घटना) घट (न) जाय। साम्प्रतम्—उचितम्, ठीक है। अतिप्रीतः—अतिशयितं प्रीतः इति अतिप्रीतः, अत्यन्त प्रसन्न होकर। प्रायात्—अगच्छत्, (नालीजंघ) चला गया, प्र+या धातु अनद्यतनभूत प्रथम पुरुष एक वचन। अर्थः च अयम्—और यह बात (आयोजन)। यथाचिन्तितम्—चिन्तितम् अनतिक्रम्य इति यथाचिन्तितम् (अव्ययी भाव समास), जैसा पहिले से सोचा गया था वैसा ही। अनुष्ठितः अभूत्—सम्पादितः अभवत्, कर दिया गया, अनु+स्था+क्त। प्रतिदिशम्—दिशि दिशि इति

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

प्रतिदिशम् (अव्ययी भाव समास), प्रत्येक दिशा में। लोकवादः—(जनानां) वादः इति लोकवादः (ष० त०), लोगों में शुहरत (खबर)। प्रासर्पत्—प्रसृतोऽभूत्, फैल गई। माहात्म्यम्—महान् आत्मा यस्य सः महात्मा (बहु०), महात्मा+ष्यञ्। पतिव्रतानाम्—साध्वीनां सतीनां स्त्रीणाम्, पतिव्रता स्त्रियों का। मालाप्रहारः—माला की चोट, मालायाः प्रहारः इति मालाप्रहारः (ष० त०)। तस्मिन्—प्रचण्डवर्मणि, प्रचण्डवर्मा के ऊपर। न च शक्यम्—न उचितम्। उपधि—कपटम्। उपधियुक्तम्—उपधिना युक्तम् इति उपधियुक्तम् (तृ० तत्पु०), कपटयुक्तम्, चालबाजी या कपट से भरा हुआ। एतत् कर्म—यह काम यानी रानी का माला से प्रचण्डवर्मा को मारना। यतः—क्योंकि। तत् एव दाम—वही माला। दामन् का अर्थ है माला, नपुंसकलिंग है। दाम दाम्नी दामानि आदि रूप चलते हैं। दुहित्रे दत्तं दाम—लड़की को दी हुई माला। "दुहित्रे" को 'दत्तम्' के साथ लगाइये। स्तनमण्डनम्—कुचयोः आभूषणम्, स्तनों का आभूषण (शोभा)। स्तनयोः मण्डनम् इति स्तनमंडनम् (ष० त०)। अतिवर्तते—उल्लंघयिष्यति, उल्लंघन करेगा यह वर्तमान काल प्रयुक्त हुआ है "अतिवर्तिष्यते" सामान्य भविष्य के अर्थ में। भस्मैव—भस्म एव, राख ही। भवेत्—भविष्यति इत्यर्थः।

अथ महाव्रतिवेषेण मां च पुत्रं च भिक्षायै प्रविष्टो दृष्ट्वा प्रस्नुतस्तनी प्रत्युत्थाय हर्षकलमब्रवीत्। भगवन्नयमञ्जलिः। अनाथोऽयं जनोऽनुगृह्यताम्। अस्ति ममैकः स्वप्नः। स सत्यो न वेति। मयोक्तम्। फलमस्याद्यैव द्रक्ष्यसीति। 'यद्येवं बहु भागधेयमस्याः वो दास्याः। स खल्वस्याः सानाथ्यशंसी स्वप्न' इति सदर्शनबद्धरागसाध्वसां मञ्जुवादिनीं प्रणमय्य भूयोऽपि सा हर्षगर्भमब्रूत। 'तच्चेन्मिथ्या सोऽयं युष्मदीया बालकपालो स्त्रो मया निरोद्धव्य' इति। मयाऽपि सस्मितं मञ्जुवादिनीरागलानदृष्टिलाडधैर्येण एवमस्त्विति लब्धभैक्ष्यो नातोजक्लाकार्य निर्गम्य ततश्च तं

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

चानुयान्तं शनैरपृच्छम् । क्वासावल्पायुः प्रथितः प्रचण्डवर्मेति । सोऽभूत । राज्यमिदं समेत्यपास्तशंको राजास्थानमण्डप एव तिष्ठत्युपास्यमानः कुशीलवैरिति । यद्येवमुद्याने तिष्ठेति तं जनन्तमादिश्य तत्प्राकारैकपार्श्वे कस्यांचिच्छून्यमठिकायां मात्राः समवतार्य तद्ग्रहणनियुक्तराजपुत्रः कृतकुशीलववेषलीलः प्रचण्डवर्माणमेत्यान्वरञ्जयम् । अनुरञ्जितातपे तु समये जनसमाजज्ञानोपयोगीनि संहृत्य नृत्यगीतनानारदितादिहस्तचङ्क्रमणमूर्ध्वपादालातपादपीडवृश्चकमकरलङ्घनादीनि मत्स्योद्वर्तनादीनि च करणानि पुनरादायादायासन्नवर्तिनां छुरिकास्ताभिरुपाहितवर्ष्मा चित्रदुष्कराणि करणानि श्येनपातोत्क्रोशपातादीनि दर्शयन्विंशतिचापान्तरालावस्थितस्य प्रचण्डवर्मणः छुरिकयैकया प्रत्युरसं प्रहृत्य जीव्याद्वर्षसहस्रं वसन्तभानुरिति गदन्मद्गात्रमुत्कर्तुमुद्यतासेः कस्यापि चारभटस्य पीवरांसबाहुशिखरमाक्रम्य तावतैव त विचेतीकुर्वन्नाकुलं च लोकमुच्चकूर्वन्द्विपुरुषोच्छ्रितं प्रकारमत्यलङ्घयम् । अवप्लुत्य चोपवने मदनुपातिनामेष पन्था दृश्यत इति ब्रुवाण एव नालीजङ्घसमीकृतसैकतास्पष्टपादन्यासया तमालवीथ्या चानुप्राकारं प्राच्या प्रतिधावितः पुनरवाचीच्चितेष्टकत्वादलक्ष्यपदेन प्रद्रुत्य लङ्घितप्राकारखातवलयस्तस्यां शून्यमठिकायां तूर्णमेव प्रविश्य प्रतिमुक्तपूर्ववेषः सह कुमारेण मत्कर्मतुमुलराजद्वारि दुःखलब्धवर्त्मा श्मशानोद्देशमभ्यगाम् । प्रागेव तस्मिन्दुर्गागृहे प्रतिमाधिष्ठान एव मया कृतं भग्नपार्श्वस्थूलप्रस्तरस्थगितबाह्यद्वारं बिलम् ।

हिन्दी अनुवाद—मुझको तथा (अपने) पुत्र को महाव्रती (कापालिक) के वेष में भिक्षा (माँगने) के लिए आया हुआ देखकर दूध-चूते हुए स्तनों वाली (रानी) स्वागत कर, हर्ष के मारे अस्पष्ट-मधुर शब्दों में बोली—भगवन्, यह (मेरा) प्रणाम (है)। यह अनाथ (निस्सहाय) जन (अर्थात् मैं) अनुगृहीत किया जाय (मुक्त निस्सहाय

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
जन पर अनुग्रह कीजिए)। मेरा एक स्वप्न है। वह (स्वप्न) सत्य होगा या नहीं।

मेरे द्वारा कहा गया (मैंने कहा)—इस (स्वप्न) का फल आज ही देखोगी। "यदि ऐसी बात हो जाय, तो आप की इस दासी का (अर्थात् मेरा) परम सौभाग्य है। क्योंकि वह स्वप्न इस (मञ्जुवादिनी) की सनाथता का सूचक है" ऐसा कह कर, मेरे दर्शन के कारण जिसके हृदय में राग (प्रेम) तथा साध्वस (घबराहट) पैदा हो गए थे ऐसी उस मञ्जुवादिनी से (मुझे) प्रणाम करवा कर, वह (रानी) फिर हर्षपूर्वक बोली—"यदि वह (मेरा स्वप्न) मिथ्या निकला तो कल आप का यह बाल-कपाली (छोटा कापालिक) मेरे द्वारा रोक लिया जायगा।"

मञ्जुवादिनी की प्रेमासक्त (रागलीन) दृष्टि के कारण (मेरा) धैर्य नष्ट हो गया। मुस्कुराहट के साथ "एवम् अस्तु—ऐसा ही हो" कहकर मैंने भिक्षा ली (और) नालीजङ्घ को पुकार कर, वहाँ से निकल कर, पीछा करते हुए उससे (नालीजङ्घ से) मैंने धीरे से पूछा—वह अल्पायु (जिसकी जिन्दगी अब थोड़ी ही रह गई है) प्रसिद्ध प्रचण्डवर्मा कहाँ है। उसने (नालीजङ्घ ने) कहा—"यह राज्य मेरा ही है" ऐसा सोचकर निर्भीक (प्रचण्डवर्मा) गायकों द्वारा उपासना किया जाता हुआ (प्रसन्न किया जाता हुआ) राजा के सभामण्डप में ही बैठा है।

"यदि ऐसी बात है तो तुम (इसी) बगीचे में ठहरो"—इस प्रकार उस बूढ़े को आज्ञा देकर, उस (बाग) की चहारदीवारी के एक कोने में बनी हुई किसी सुनसान झोपड़ी में सारे कपड़े इत्यादि उतार कर, उस (कपड़े इत्यादि) की रक्षा के लिए (उस) राजपुत्र को नियुक्त कर, गायक का वेष तथा ढंग धारण कर, प्रचण्डवर्मा के पास जाकर, मैं उसे प्रसन्न करने लगा। जिस समय सूर्य की किरणें लाल हो जाती हैं उस समय (अर्थात सायङ्काल में) जन-समाज के ज्ञान के लिये उपयोगी कृत्यों (करामात) को—जैसे नाच, गान, नाना प्रकार के रोदन आदि,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

हाथ घुमाना, दोनों पैरों को ऊपर करके हाथों के बल चलना, एक पैर को उठाकर और दूसरे को मोड़कर आपीडवृश्चिक नाचना, मगर के समान कूदना इत्यादि, मछली के समान उलटना, इत्यादि—चन्दकर, फिर, पास बैठे हुए लोगों की छूरियाँ ले लेकर, उन (छूरियों) से (अपने) शरीर को सयुक्त कर (अर्थात् उन छूरियों की नोकों को अपने शरीर में लगाकर) बाज के समान तथा कुररी पक्षी के समान झपट्टा मारना आदि अद्भुत तथा दुष्कर कृत्यों को दिखलाता हुआ, बीस चाप के फासले पर बैठे हुए प्रचण्डवर्मा की छाती में एक छूरी से प्रहार कर, "वसन्त भानु हजार वर्ष जीवे" ऐसा कह कर गरजता हुआ, मेरे शरीर को काटने के लिए जिसने (अपनी) तलवार उठाई थी ऐसे एक योद्धा-दूत को, (उसकी) सुपुष्ट कन्धों वाली भुजा के उठे हुए भाग पर कूद कर और इतने ही से उसे बेहोश कर व्याकुल (आश्चर्य-चकित) हुए लोगों की आँखों को ऊपर करता हुआ, दो पुरुषों की ऊँचाई वाली चहारदीवारी को मैं लाँघ गया।

बगीचे में कूदकर 'मेरा पीछा करने वालों का यह मार्ग दिखाई पड़ता है" ऐसा कहता हुआ नालीजङ्घ द्वारा बराबर कर दी हुई बालू के कारण जिसमें पदचिह्न अस्पष्ट हो गए थे (साफ दिखाई नहीं पड़ते थे) ऐसी एक, तमालवृक्षों की सड़क से, चहारदीवारी के पीछे से (या बगल से) पूर्व की ओर भागा। फिर ढेर लगी हुई ईंटों के कारण (मेरे) पद-चिह्नों के किसी को दिखाई पड़े हुए बिना, दक्षिण की ओर भाग कर चहार-दीवारी के चारों ओर खुदी हुई खाईं रूपी घेरे को लाँघ कर, उस सुनसान मन्दिर में तुरन्त घुसकर, पहिले का वेष त्याग कर, कुमार के साथ, मेरे कार्यों के कारण घबराए हुए अथवा शोरगुल से भरे हुए राजद्वार पर बड़ी मुश्किल से रास्ता पाकर (मैं) श्मशान भूमि को गया। पहिले ही से, उस दुर्गा-मन्दिर में, मूर्ति के आधार में मेरे द्वारा एक छिद्र बना दिया गया था। जिसका बाहरी दरवाजा एक मोटे पत्थर से बन्द कर दिया गया था वह पत्थर ऐसा था जिसके बगल की स्थिरता (मजबूती) भग्न हो गई थी (टूट गई या नष्ट हो गई थी)।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

टिप्पणी—महाव्रतिवेषेण—व्रतः अस्यास्तीति व्रती, व्रत+इनि, महांश्चासौ व्रती च इति महाव्रती (कर्मधारय), महाव्रतिनः वेषः इति महाव्रति-वेषः तेन महाव्रतिवेषेण (ष० त०) अर्थात् कापालिकवेषेण। प्रस्नुतस्तनी—प्रस्नुत—दूध चुवाते हुए, प्र+स्नु+क्त। प्रस्नुतौ स्तनौ यस्याः सा प्रस्नुतस्तनी (बहु०), जिसके स्तन से दूध चू रहा था। पुत्र को देखकर रानी का वात्सल्य उमड़ पड़ा। इसी से उसके स्तनों से दूध चूने लगा। प्रत्युत्थाय—स्वागत करके, प्रति+उत्+ल्यप्, "प्रत्युत्थान" कहते हैं 'स्वागत करने को'। हर्षकलम्—हर्षेण कलम् (अस्पष्टं मधुरम् यथा स्यात्तथा) हर्षकलम्, हर्ष के कारण अस्पष्ट प्रसन्नता की दशा में मुख से अस्पष्ट शब्द निकलते हैं। प्रसन्नता इतनी अधिक रहती है कि मनुष्य बहुत जल्दी जल्दी बोलता है। जल्दी जल्दी बोलने में शब्द ठीक नहीं निकलते। अयम् अञ्जलिः—यह अँजुली (प्रणाम) है यानी मैं आप को प्रणाम करती हूँ। अयं जनः—अहम्। अनुगृह्यताम्—अनुगृहीत किया जाना चाहिए, अनु+ग्रह्+कर्मणि लोट् प्रथम पुरुष एकवचन। अय जनः अनुगृह्यताम्—इस जन पर कृपा की जानी चाहिए यानी मुझपर कृपा कीजिए। बहुभागधेयम्—परमं सौभाग्यम्। "तद् भागधेयं परमं पशूनाम्।" वः—युष्माकम् तुम्हारी, आप लोगों की। अस्याः दास्याः—इस दासी का अर्थात् मञ्जुवादिनी का सानाथ्यशंसी—यह लड़की सनाथ (पतियुक्त) बन जावेगी इस बात का सूचक। विद्यमानः नाथः यस्याः सा सनाथा, सनाथायाः भावः सानाथ्यम् अर्थात् सनाथता, सनाथ+ष्यञ्, सानाथ्यं शंसति तच्छीलः इति सानाथ्यशंसी, (उपपद तत्पुरुष) विशेषण है "स्वप्न" का। सानाथ्य—सनाथता, यह लड़की नाथ (पति) से युक्त होगी। शंसी-सूचक शंस+णिनि। मद्दर्शनबद्धरागसाध्वसाम्—साध्वस—घबराहट। राग—प्रेम। मम दर्शनम् इति मद्दर्शनम् (ष० त०), मद्दर्शनेन बद्धः रागः इति मद्दर्शनबद्धरागः, मद्दर्शनबद्धरागसाध्वसा ताम् मद्दर्शनबद्धरागसाध्वसाम् (बहु०)। मुझे देखकर उसके हृदय में प्रेम (राग) उत्पन्न हुआ। उस प्रेम के कारण

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

उसे कुछ घबराहट पैदा हो गई। मद्दर्शनबद्धरागसाध्वसाम् का शब्दानुवाद होगा "मेरे दर्शन के कारण पैदा हुए प्रेम की वजह से उत्पन्न हो गया था साध्वस (घबराहट) जिसको ऐसी मञ्जुवादिनी को। प्रणमय्य—नमस्कारं कारयित्वा, प्रणाम करवाकर, प्र+नम्+णिच्+ल्यप्। भूयःअपि—पुनरपि, फिर से। हर्षगर्भम्—हर्ष पूर्वकम् हर्षः गर्भे यस्मिन् कर्मणि तद् यथास्यात् तथा। बहुव्रीहि समास। सः अयम्—वह यह। साथ में जो राजकुमार था उसकी तरफ सङ्केत करती हुई रानी कहती है। यह कुमार इसी रानी का पुत्र था जो इस समय कापालिक के वेष में था। रानी के कहने का तात्पर्य यह है कि यदि यह स्वप्न सच्चा न ठहरा तो मैं अपने इस पुत्र को रोक लूँगी और तुम्हारे साथ नहीं रहने दूँगी।

युष्मदीयः—तुम्हारा, युष्मद्+छ। बालकपाली—बालश्चासौ कपाली च इति बालकपाली (कर्मधारय), छोटा कापालिक, अथवा कापालिक बालक। निरोद्धव्यः—नि+रुध्+तव्य। सस्मितम्—स्मित पूर्वकम्, विद्यमानं स्मितं यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात् तथा सस्मितम् (बहु०), मञ्जुवादिनीराग-लीन-दृष्टि-लीढ-धैर्येण—रागे लीना इति रागलीना (सप्तमी तत्पुरुष) अर्थात् मत्प्रेमासक्ता। मेरे प्रेम में आसक्त। रागलीना चासौ दृष्टिश्च इति रागलीना दृष्टिः (कर्मधारय) मेरे प्रेम में आसक्त नेत्र। मञ्जुवादिन्याः रागलीनदृष्टिः इति मञ्जुवादिनीरागलीन-दृष्टिः (प० त०), मञ्जुवादिनीरागलीनदृष्ट्या लीढं (नाशितं) यत् धैर्यं तत् मञ्जुरागिनी राग-लीनदृष्टि लीढ धैर्यम् तेन मञ्जुरागिनी राग-लीन दृष्टि लीढ धैर्येण (कर्मधारय) लीढ—आस्वादितम् चाट लिया यानी नष्ट कर दिया हुआ लिह् धातु (चाटना)+क्त। लब्धभैक्ष—भिक्षाणां समूहः भैक्षम्, भिक्षा+अण् समूहार्थे। भिक्षादिभ्योऽण्। लब्धं भैक्षं येन स लब्धभैक्षः (बहु०)। यहाँ पर बड़ा विचित्र वाक्य है। व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध है। कुछ भी पता नहीं चलता कि "लब्धभैक्षः" किसका विशेषण है। यदि हो सकता है तो छिपे हुए "अहम्" का विशेषण हो सकता है। परन्तु फिर "मया" का अन्वय

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

किसके साथ किया जायगा—इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता। दूसरी गड़बड़ी यह पड़ती है कि "मया" की क्रिया कहीं भी नहीं दिखाई पड़ती। आकार्य—पुकारकर, आ+कृ+णिच्+ल्यप्। अनुयान्तम्—अनुसरन्तम्, अनुगच्छन्तम्, पीछे पीछे आते हुए (नालीजङ्घ) को, अनु+या शतृ द्वितीया एकवचन। क्वासावल्पायुः—क्व+असौ+अल्पायुः। अल्पायुः—अल्पम् आयुः (जीवनावधिः) यस्य सः अल्पायुः (बहु०) जिसकी आयु अब थोड़ी ही शेष रह गई है ऐसा प्रचंडवर्मा। प्रथितः—विख्यातः। "राज्यम् इदं मम"—प्रचंडवर्मा का यह विचार है कि "यह राज्य मेरा हो गया"। अपास्तशङ्कः—निर्भीकः, निडर। अपास्ता (अपगता) शंका यस्य सः अपास्तशंकः (बहु०), जिसकी शंका (डर) निकल गई थी, जिसके हृदय में जरा भी डर नहीं रह गया था। आस्थान-मंडपे—सभामण्डपे, दरबार घर में। उपास्यमानः—सेव्यमानः, प्रसाद्य-मानः, प्रसन्न किया जाता हुआ। उप+आस्+कर्मणि शानच्। कुशी-लवैः—गायकैः, "गायकास्तु कुशीलवाः" इति वैजयन्ती। उद्याने—उपवने, बगीचे में। जरन्तम्—वृद्धम्, बुड्ढे को, जॄ+शतृ द्वितीया एकवचन। आदिश्य—आज्ञाप्य, आज्ञा देकर, आ+दिश्+ल्यप्। तत्प्राकारैकपार्श्वे—उद्यानस्य रक्षाभित्त्येकभागे, बगीचे की रक्षा-दीवार के एक बगल में। प्राकार—रक्षाभित्तिः। शहर की या किसी महल या किले की रक्षा के लिए जो दीवार बनाई जाती है उसे रक्षा-दीवार या चहारदीवारी कहते हैं। प्रकारो वरणः सालः—इत्यमरः। तस्य उद्यानस्य प्राकारः इति तत्प्राकारः (ष० त०), उस बागीचे की चहारदीवारी। एकश्चासौ पार्श्वश्च इति एकपार्श्वः (कर्मधारय), एक बगल। तत्प्राकारस्य एकपार्श्वः इति तत्प्राकारैकपार्श्वः तस्मिन् तत्प्राकारैकपार्श्वे (ष० त०), बगीचे की चहारदीवारी के एक बगल में। मठिका—झोपड़ी। अल्पो मठः इति मठिका। शून्य-मठिकायाम्—शून्या चासौ मठिका च इति शून्यमठिका तस्यां शून्यमठिका-याम् (कर्मधारय), सुनसान (खाली) झोपड़ी में। मात्राः—

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

परिच्छदादीन् वस्त्रादीन्, वस्त्र इत्यादि "मात्रा परिच्छदेऽल्पेंऽशे प्रवृत्तौ कर्ण-भूषणे। अक्षरावयवे माने' इति वैजयन्ती। समवतार्य शरीरात् छित्वा, उतारकर, सम्+अव+तृ+णिच्+ल्यप्। तद्रक्षणनियुक्तराजपुत्रः—तासां मात्राणां रक्षणम् इति तद्रक्षणम् (ष० त०), तद्रक्षणे नियुक्तः राजपुत्रः येन स तद्रक्षणनियुक्तराज्यपुत्रः (बहु०), विशेषण है "अहम्" का, मात्राओं अर्थात् वस्त्रादिकों की रक्षा के लिए राजपुत्र को नियुक्त करके मैं। कृतकुशी-लववेषलीलः—लीला—आकृति, स्वरूप। वेष—वस्त्र। वेषश्च लीला च इति वेषलीले (द्वन्द्व), कुशीलवस्य वेषलीले इति कुशीलववेषलीले (ष० त०)। कृते कुशीलववेषलीले येन सः कृतकुशीलववेषलीलः (बहु०), विशेषण है "अहम्" का, कुशीलव (गायक) का सा कपड़ा पहिन कर तथा उसी का सा स्वरूप बना कर। एत्य—आगत्य आकर, आ+इण्+ल्यप्। अन्वर-ञ्जयम्—प्रासादयम्, मैंने अनुरञ्जन किया, प्रसन्न किया, अनु+रञ्ज्+णिच् अनद्यतनभूत उत्तमपुरुष एक वचन। अनुरञ्जितातपे—आतप—घाम, धूप अनुरञ्जितः (रक्तवर्णः) आतपः यस्मिन् स अनुरञ्जितातपः तस्मिन् अनुरञ्जितातपे (बहु०), विशेषण है "समये" का। अनुरञ्जितातपे समये—ऐसे समय में जब कि धूप लाल-लाल हो गई थी यानी सायंकाल में। जन-समाज-ज्ञानोपयोगीनि—जन समाज के ज्ञान बढ़ाने के लिए उपयोगी जनानां समाजः इति जनसमाजः (ष० त०), स जन-समा-जस्य ज्ञानम् इति जनसमाजज्ञानम् (ष० त०), तस्य तस्मै वा उपयो-गीनि (लाभकारीणि) इति जनसमाजज्ञानोपयोगीनि। संहृत्य—समेट कर, बन्द कर, सम्+हृ+ल्यप्। नानारुदितादि—रोदनशब्दानु-करणानि नाना प्रकार का रोना आदि यानी रोने की नकल करना—सियारों का रोना, कुत्तों का रोना, भैंस, गाय का रोना, बिल्ली का रोना। हस्तचंक्रमणम्—हस्तयोः चंक्रमणम् (इतस्ततः प्रसारणम् भ्रामणं वा।) (षष्ठी तत्पुरुष) हाथों का इधर उधर फैलाना या घुमाना। ऊर्ध्वपादम्—"कराभ्यामवनीं स्पृष्ट्वा मूर्धानं भ्रामयेन् मुहुः। उत्तानीकृत्य चरणा-वूर्ध्वपादं तदुच्यते" इति नाट्यशास्त्रे भरतः।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

दोनों हाथों से पृथ्वी को छुए, और सिर को बार बार घुमावे और दोनों पैरों को ऊपर की ओर कर दे—इसी को 'ऊर्ध्वपादम्' कहते हैं। अलातपादम्—"उद्घृत्यैकं तु चरण मन्यं कृत्वैव कुञ्चितम्। नृत्यत्यनुमंतुतिर्यक् तदालातकमेव च"—(भरत) एक पाँव को ऊपर उठाकर दूसरे पाँव को मोड़कर तिरछा तिरछा नाचना 'अलातपादम्' कहलाता है। आपीड वृश्चिक मकर लङ्घनादीनि—मगर के समान कूदना यह भी सम्भव है कि 'आपीड" कोई खेल हो। इस दशा में "आपीड" को अलग कर लेना चाहिए और "वृश्चिक" को "मकर लङ्घनादीनि" के साथ ले जाना चाहिए—इस प्रकार "वृश्चिकमकरलङ्घनादीनि"—बिच्छू तथा मगर के समान कूदना इत्यादि। यदि "आपीडवृश्चिक" को एक शब्द मानें तो मानना पड़ेगा कि यह कोई अलग खेल था। तब "आपीड वृश्चिक" अलग लिया जाना चाहिए और "मकर लंघन" अलग लिया जाना चाहिए। मत्स्योद्वर्तनादीनि—मीनवत् विलसितानि, मछली के समान उलटना मत्स्य—मछली; उद्वर्तन—उलटना, करणानि करतब, करामात, कलाबाजी। आदाय आदाय—ले लेकर। आसन्नवर्तिनाम्—समीपोपविष्टानां पुरुषाणाम्, समीप में बैठे हुए लोगों की, आसन्ने वर्तन्ते तच्छीलाः इति आसन्नवर्तिनः तेषाम् आसन्नवर्तिनाम् (उपपद तत्पुरुष), आसन्न+वृत्+णिनिस्ताच्छील्ये। छुरिकाः—छूरियाँ। ताभिः—छुरिकाभिः। उपाहितवर्ष्मा "संयुक्तदेहः" अर्थ पदचन्द्रिका टीका देती हैं। उपहित—"छिन्न शरीरः" अर्थ भूषण टीका देती हैं। "तिरस्कृत शरीरः" लघुदीपिका टीका देती हैं। "उपहितवर्ष्मा" और "उपाहितवर्ष्मा" ये दो पाठ मिलते है। वर्ष्मन्—शरीर, नपुंसकलिंग, वर्ष्म वर्ष्मणी वर्ष्माणि। "वर्ष्म विग्रहः" इत्यमरः। उपाहित—संयुक्त, मिला दिया गया हुआ, जोड़ दिया हुआ। उपाहितं वर्ष्म (शरीरं) यस्य स उपाहितवर्ष्मा (बहु०) विशेषण है "अहम्" का। ताभिः उपाहितवर्ष्मा—उन छूरियों से अपने शरीर को सटा (लगा) कर। चित्रतरकरणानि करणानि—विचित्र (अद्भुतानि,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

आश्चर्यकराणि) दुष्कराणि (दुःखेन कर्तुं शक्यानि) च इति चित्र-दुष्कराणि (विशेषणोभयपदकर्मधारय), अद्भुत तथा महा-कठिन करामात । श्येनपात—श्येन—बाज । पात—गिरना, झपट्टा मारना, श्येनस्य पातः इति श्येनपातः (ष० त०)। बाज चिड़िया का झपट्टा । परिक्रम्यान्तरिक्षेण सम्प्राप्योच्चैरदृश्यताम् आकस्मिकाभि-पातेन श्येनपात इतीरितः । भरतः । उत्क्रोश—कुररी । "उत्क्रोशकुररौ समौ" इत्यमरः । उत्क्रोशपात—कुरर पक्षी के समान आकाश से पृथ्वी पर उतरना । त्रिंशति चापान्तरालावस्थितस्य—चाप एक नाप है जो दोनों भुजाओं को फैलाने में जितना फासला आ जाता है उसे "चाप" कहते हैं । अन्तराल—दूर, फासला । अवस्थित—उपविष्ट बैठा हुआ, अव+स्था+क्त । त्रिंशतिः चापाः इति त्रिंशतिचापाः, त्रिंशति-चापानाम् अन्तरालम् इति त्रिंशतिचापान्तरालम् (ष० त०), त्रिंशति-चापान्तराले अवस्थितः इति त्रिंशतिचापान्तरालावस्थितः तस्य त्रिंशति चापान्तरालावस्थितस्य (ष० त०) बीस चाप के फासले पर बैठे हुए (प्रचण्ड वर्मा) के । प्रत्युरसम्—छाती में उरसि इति प्रत्युरसम्, सप्तमी विभक्ति के अर्थ में अव्ययीभाव समास हुआ है, प्रति+उरस्+अ (समासान्त)। एकया छुरिकया—एक छूरी से । प्रहृत्य—प्रहारं कृत्वा, प्रहार करके, प्र+हृ+ल्यप् । वर्षसहस्रम्—वर्षाणां सहस्रम् इति वर्षसहस्रम् (ष० त०), हजार वर्ष तक, 'कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे द्वितीया' नियम से यहाँ द्वितीया विभक्ति हुई है । जीव्यात्—जीवे, जीव् धातु भ्वादिगणी परस्मैपदी आशीर्लिङ् प्र० पु० एकवचन । अभिगर्जन्—गरजता हुआ (मैं)। मद्गात्रम्—मेरे शरीर को, मम गात्रम् इति मद्गात्रम् (ष० त०)। उत्कर्त्तुम्—छेत्तुम्, काटने के लिए उत्+कृत्+तुमुन् । पदचन्द्रिका टीका अर्थ देती है "त्रोटितुम्" अर्थात् तोड़ने के लिए । जहाँ "अरुन्तुदम्" पाठ आता है वहाँ भूषण टीका ने "छेत्तुम्" अर्थ दिया है ।

उद्यतासिः—"ऊर्ध्वीकृतखड्गस्य" इति पदचन्द्रिका । उद्यत—उठी हुई । असिः—खड्गम्, तलवार । उद्यतः (ऊर्ध्वं गतः) असिः (खड्गः)

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

यस्य सः उद्यतासिः तस्य उद्यतासेः (बहु०) ऊपर को उठी थी तलवार जिसकी। 'उद्यतः' का 'उद्धृतः' अर्थ करना ठीक नहीं होगा, क्योंकि 'उद्यत' में उत्+यम्+क्त है और यम् धातु अकर्मक है। अकर्मक धातु का कर्म "असि" नहीं हो सकता है। "उद्धृतः असि येन" यह विग्रह अशुद्ध है। चारभटस्य—चारश्चासौभटश्च इति चारभटः तस्य चारभटस्य (कर्मधारय) अर्थात् वह व्यक्ति 'भट' यानी योद्धा भी था और 'चार' यानी दूत का भी काम करता था। 'चार' का अर्थ "गायक" लगाना अशुद्ध है। "भटश्चारभटो मतः"—इति हलायुधः। "पीवरांसम्—मांसल-स्कन्धम्" इति पदचन्द्रिका। पीवरांसबाहुशिखरम्—पीवर—मांसल, स्थूल। अंस—स्कन्ध। बाहु—भुज। पीवरौ अंसौ ययोः तौ पीवरांसौ (बहु०); पीवरांसौ च तौ बाहू इति पीवरांसबाहू (कर्मधारय)। पीवरांसबाह्वोः शिखरम् इति पीवरांसबाहुशिखरम् (ष० त०), मोटे मोटे कन्धों वाली भुजाओं की चोटी पर। आक्रम्य—आरुह्य, आ+क्रम्+ल्यप्। तावतैव—तावता एव, उतने ही से अर्थात् बाहुशिखर पर चढ़ने मात्र से ही। तम्—चारभटम्। विचेतीकुर्वन्—विगतं चेतः यस्य स विचेताः (बेहोश); न विचेताः इति अविचेताः (नञ् तत्पुरुष)। अविचेतसं विचेतसं कुर्वन् इति विचेतीकुर्वन विचेतस्+च्वि+कृ+शतृ। आकुलम्—व्याकुलम्, क्षुब्धम्। आकुललोकम्—तया घटनया चकितं क्षुब्धं जनसमूहम्। उच्चक्षूकुर्वन्—उद्गतानि चक्षूंषि येषां ते उच्चक्षुषः न उच्चक्षुषः इति अनुच्चक्षुषः। अनुच्चक्षून् उच्चक्षून् कुर्वन् इति उच्चक्षूकुर्वन् उच्चक्षुष्+च्वि+कृ शतृ प्रत्यय। तात्पर्य यह है कि जो पब्लिक वहाँ इकट्ठी थी वह भौचक्की रह गई और आँखें ऊपर उठा कर आश्चर्यान्वित हो देखने लगी। इसीलिए विश्रुत कह रहा है "लोगों की आँखें ऊपर करता हुआ मैं"। द्विपुरुषोच्छ्रितम्—पुरुषद्वयप्रमाणोच्चम्, दो पुरसा ऊँचा। द्वौ पुरुषौ इति द्विपुरुषौ (द्विगु) द्विपुरुषौ प्रमाणं यस्य तत् द्विपुरुषप्रमाणम् द्विपुरुषप्रमाणम् उच्छ्रितं इति द्विपुरुषोच्छ्रितः (मध्यमपदलोपि कर्मधारय) तम् द्विपुरुषोच्छ्रितप्राकारम्, दो

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

पुरुष की ऊँचाई वाली चहारदीवारी। अत्यलङ्घयम् (मैं) कूद (लाँघ) गया, अति+लङ्घ+णिच् अनद्यतनभूत, उत्तमपुरुष एकवचन। अवप्लुत्य उड्डीय इति पदचन्द्रिका। कूद कर, अव+प्लु+ल्यप्, 'प्लु' माने 'तैरना'। मदनुपातिनाम्—माम् अनुपतन्ति (अनुसरन्ति) तच्छीलाः इति मदनुपातिनः तेषाम् मदनुपातिनाम् (उपपदत०), अस्मद्+अनु+पत् णिनिस्ताच्छील्ये, मुझे अनुसरण करने वालों का, यानी जो लोग मेरी घात में मेरा पीछा कर रहे हैं, वे इसी रास्ते से गए हैं, उन्हीं के जाने से यह रास्ता बन गया है। ब्रुवाणः—कथयन्, कहता हुआ, ब्रू+शानच्। नालीजङ्घसमीकृतसैकतास्पष्टपादन्यासया—समीकृत—समानीकृत, बराबर कर दी गई हुई। सैकत—सिकतामय, बालुकाराशिः सिकतानां समूहम् सैकतम् (बालुकाराशिः), सिकता+अण् समूहार्थे। अस्पष्ट—न स्पष्टः इति अस्पष्टः (नञ् तत्पुरुष), साफ साफ नहीं दीख रहे थे। पादन्यासाः—चरणचिह्नानि, पादानां (चरणानां) न्यासाः (चिह्नानि) इति पादन्यासाः (ष० त०) नालीजङ्घेन समीकृतम् इति नालीजङ्घसमीकृतम् (तृ० त०)। नालीजङ्घसमीकृतं च तत् सैकतम् इति नालीजङ्घसमीकृतसैकतम् (कर्मधारय)। नालीजङ्घसमीकृतसैकतेन अस्पष्टाः पादन्यासा यस्यां तमालवीथ्याम् सा नालीजङ्घसमीकृतसैकतास्पष्टपादन्यासा तया नालीजङ्घसमीकृतसैकतास्पष्टपादन्यासया (बहु०) विशेषण है "तमालवीथ्या" का। बालू की राशि पर मेरे जो चरणचिह्न पड़े थे उनको नालीजङ्घ मिटा कर बराबर करता गया था। इसलिए मेरे पदचिह्न स्पष्ट मालूम नहीं पड़ रहे थे। तमालवीथ्या—तमालपङ्क्त्या, तमालवृक्षों की सड़क से तमाल—एक प्रकार का वृक्ष होता है, वीथी—सड़क, गली। तमालानां वीथी इति तमालवीथी तया तमालवीथ्या (ष० त०) उस सड़क से जिसके दोनों तरफ तमालवृक्षों की पंक्ति की पंक्ति लगी थी। अनुप्राकारम्—प्राकार—चहारदीवारी। प्राकारस्य पृष्ठतः इति अनुप्राकारम् अथवा प्राकारस्य समीपे इति अनुप्राकारम्, अथवा प्राकारस्य पार्श्वतः इति अनुप्राकारम् (अव्ययीभाव समास) चहारदीवारी के पीछे पीछे अथवा चहार-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

दीवारी के पास अथवा चहारदीवारी के बगल बगल। प्राच्या—पूर्वया दिशा, पूर्व दिशा से। प्राची—पूर्व। प्रतिधावितः—(मैं) दौड़ा; प्रति+धाव्+क्त। पुनरवाचा—पुनः+अवाचा। अवाचा—दक्षिण दिशा, दक्षिण से। अवाच्—दक्षिण। उच्चितेष्टकत्वात्—उच्चित—उत्+चि+क्त, राशि लगी हुई। इष्टका—ईंट। उच्चिताः इष्टका इति उच्चितेष्टकाः (कर्मधारय) ढेर की ढेर रक्खी हुई ईंटें। तासां भावः उच्चितेष्टकत्वम् तस्मात् उच्चितेष्टकत्वात्,—ऊँचे ढेर लगी हुई ईंटों के कारण। कहीं कहीं "उच्चितेष्टकचितत्वात्" पाठ है। इसका अर्थ होगा—उच्चिताः इष्टकाः इति उच्चितेष्टकाः (कर्मधारय); उच्चितेष्टकाभिः चितम् (व्याप्तम्) इति उच्चितेष्टकाचितम् (तृ० त०) उच्चितेष्टकाचितस्य भावः उच्चितेष्टकाचितत्वम् तस्मात् उच्चितेष्टकाचितत्वात्। चित—व्याप्त जड़ी हुई। (सड़क ईंटों से जड़ी या भरी हुई थी); ढेर की ढेर लगी हुई ईंटों से जड़ी हुई होने के कारण। अलक्ष्यपादेन—न लक्ष्यः इति अलक्ष्यः (नञ् तत्पुरुष); अलक्ष्यश्चासौ पादश्च इति अलक्ष्यपादः तेन अलक्ष्यपादेन (कर्मधारय), बिना दीखे हुए पाँव से, यानी मेरे पाँव के चिह्न दिखाई नहीं पड़ रहे थे। कहीं कहीं पर "अलक्ष्यपातेन" पाठ है। उसका अर्थ होगा—अलक्ष्यः पातः (चरणपातः—पाँव का गिरना, पाँव का पड़ना) इति अलक्ष्यपातः तेन अलक्ष्यपातेन। प्रद्रुत्य—धावित्वा, दौड़कर, भागकर प्र+द्रु+ल्यप्। लङ्घितप्राकारखातवलयः—खातम्—चारों ओर खुदी हुई खाई। वलयः—चक्कर, घेरा, वलयः तथा वलयम् दोनों ठीक हैं। प्राकारस्य खातम् इति प्राकारखातम् (ष० त०) चहारदीवारी के चारों ओर खुदी हुई खाई। प्राकारखातस्य वलयः इति प्राकारखातवलयः (ष० त०) चहारदीवारी के चारों ओर खुदी हुई खाई का घेरा या चक्कर लङ्घितः प्राकारखातवलयः येन सः लङ्घितप्राकारखातवलयः (बहु०) विशेषण है "अहम्" का। तूर्णम्—शीघ्रम्। प्रतिमुक्तपूर्ववेषः—पूर्वः वेषः इति पूर्ववेषः (कर्मधारय), पहले की पोशाक। प्रतिमुक्तः पूर्ववेषः कुशीलववेषः येन सः प्रतिमुक्तपूर्ववेषः (बहु०) त्याग दी गई थी पहिले की पोशाक जिसके

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

द्वारा, यानी पहिले की पोशाक (गायक की वेष-भूषा) त्याग कर। मत्कर्मतुमुलराजद्वारि—तुमुलः—व्याकुलरवः । "तुमुलो व्याकुलरवः" इति महीपः । संकुल—घबड़ाया हुआ, क्षुब्ध । मम कर्म इति मत्कर्म (ष० त०), मेरा कर्म यानी प्रचण्ड वर्मा का वध, राज्ञः द्वाः इति राजद्वाः (ष० त०) राजा का दरवाजा (फाटक) । मत्कर्मणा तुमुला (क्षुब्धा, व्याकुला) इति मत्कर्मतुमुला (तृ० त०), मत्कर्मतुमुला राजाद्वाः इति मत्कर्मतुमुलराजद्वाः, तस्याम् तुमुल राजद्वारि (कर्मधारय) मेरे कर्म से क्षुब्ध या घबड़ाये हुए राजद्वार पर । दुःखलब्धवर्त्मा—वर्त्मन—रास्ता, लब्धं वर्त्म येन सः लब्धवर्त्मा (बहु०) । दुःखेन कष्टेन (कठिनतया) लब्धवर्त्मा इति दुःखलब्धवर्त्मा (तृ० त०), दुःख से (मुश्किल से) प्राप्त किया गया था मार्ग जिसके द्वारा ऐसा मैं यानी बड़ी मुश्किल से रास्ता पाकर मैं । श्मशानोद्देशम्—उद्देश—स्थान, प्रदेश, श्मशानस्य उद्देशः (भूमिः) इति श्मशानोद्देशः तम् श्मशानोद्देशम् (ष० त०) श्मशान की भूमि को । अभ्यगाम्—अभ्यगच्छम् (मैं) गया अभि+इण्+सामान्यभूत उत्तम पुरुष एकवचन अगात अगाताम् अगुः अगाः अगातम् अगात अगाम् अगाव अगाम । प्रागेव—प्राक् एव, पहिले ही । दुर्गागृहे—दुर्गामन्दिरे । प्रतिमाधिष्ठाने—अधिष्ठानम्—आधारः । प्रतिमा—मूर्ति । प्रतिमायाः अधिष्ठानम् इति प्रतिमाधिष्ठानम् तस्मिन् प्रतिमाधिष्ठाने (ष० त०) मूर्ति के आधार में । भग्नपार्श्वस्थैर्यस्थूलप्रस्तरस्थगितबाह्यद्वारम्—भग्न—त्रुटित, टूट गया था । पार्श्व—बगल । स्थैर्य—दाढ्र्य, काठिन्य, मजबूती, स्थिर+ष्यञ्, स्थिरस्य भावः स्थैर्यम् । स्थूल—मोटा । प्रस्तरः—पत्थर पाषाणः स्थगितम्—आच्छादितम् । बाह्यद्वारम्—बहिर्द्वारं, बाहरी दरवाजा । पार्श्वयोः, स्थैर्यम् इति पार्श्वस्थैर्यम् (षष्ठी तत्पुरुष) भग्नं पार्श्वस्थैर्यं यस्य स भग्नपार्श्वस्थैर्यः (बहुव्रीहि), जिसके बगल की मजबूती टूट गई थी (ऐसा प्रस्तर) । स्थूलश्चासौ प्रस्तरश्च इति स्थूलप्रस्तरः (कर्मधारय) मोटा पत्थर । भग्नपार्श्वस्थैर्यश्चासौ स्थूलप्रस्तरश्च इति भग्नपार्श्वस्थैर्य

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

स्थूलप्रस्तरः (कर्मधारय)। तेन स्थगितम् (बन्द कर दिया गया था) बाह्यद्वारं यस्य तत्। यह "बिलम्" का विशेषण है। ऐसा बिल जिसका बाहरी दरवाजा एक ऐसे मोटे पत्थर से बन्द कर दिया गया था जिसके बगल की मजबूती टूट गई थी यानी जाती रही थी यानी जिसका बगल वाला भाग कमजोर पड़ गया था। मया कृतम्—मेरे द्वारा बना दी गई थी एक बिल (छिद्र)।

अथ गलति मध्यरात्रे वर्षवरोपनीतमहार्हरत्नभूषणपट्टनिवसनौ तद्बिलमावां प्रविश्य तूष्णीमतिष्ठाव। देवी तु पूर्वेद्युरेव यथार्हमग्निसंस्कारं बालस्य दापयित्वा प्रचण्डवर्मणे, चण्डवर्मणे च तामवस्थामश्मकेन्द्रोपधिकृतामेव संदिश्योत्तरेद्युः प्रत्युषस्येव पूर्वसंकेतितपौरामात्यसामन्तवृद्धैः सहाभ्येत्य भगवतीमर्चयित्वा सर्वजनप्रत्यक्षं परीक्षितकुक्षिरेजन्यं तद्भवनं विधाय तद्दत्तदृष्टिः सह जनेन स्थित्वा पटीयांसं पटहशब्दमकारयत्। अणुतररन्ध्रप्रविष्टेन तेन नादेनाहं दत्तसंज्ञः शिरसैवोत्क्षिप्य सप्रतिमं लोहपादपीठमतिगुरुभास्वररत्नदुश्चलमुभयकरविधृतैकपार्श्वमेकतो निवेश्य निरगमम्। निरगमयम् च कुमारम्। अथ यथापुरमर्पयित्वा दुर्गामुद्घाटितकपाटः प्रत्यक्षीभूय प्रत्ययहृष्टहृष्टस्पष्टरोमाञ्चमुद्यताञ्जलि रूढविस्मयं च प्रणिपतन्तीः प्रकृतीरभ्यधाम्—इत्थं देवी विन्ध्यवासिनी. मन्मुखेन युष्मानाज्ञापयति। स एष राजसूनुरापन्नो मया सक्रोधया शार्दूलरूपेण तिरस्कृत्याद्य वो दत्तः। तमेनमद्यप्रभृति मत्पुत्रतयाऽमन्दमातृवत्त इति परिगृह्णन्तु। भवन्तः अपि च दुर्घटकूटकोटिघटनापाटवप्रकटशाठ्यनिष्ठुराश्मकघटवट्टनात्मानं मां मन्यध्वमस्य रक्षितारम्। रक्षानिवेशाश्चास्य स्वसेयं सुभ्रूरभ्यनुज्ञाता महामात्ययेति।

हिन्दी अनुवाद—आधी रात बीत जाने पर, एक हिजड़े द्वारा लाए हुए बहुमूल्य रत्नजटित आभूषणों तथा रेशमी वस्त्रों को पहन कर, हम दोनों, उस बिल में घुस कर, चुपचाप बैठे रहे। महारानी ने पहिले

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

ही दिन मालवराज प्रचंडवर्मा को यथोचित अग्नि-संस्कार (दाह) दिलवा (करवा) कर, और चंडवर्मा को "यह दशा अश्मकेन्द्र के कपट से की गई है" ऐसा सन्देश भेजकर, दूसरे दिन बड़े सवेरे ही, पहिले ही से इशारा दिए गए हुए पुरवासियों, मन्त्रियों तथा सामन्तवृद्धों के साथ जाकर, भगवती की पूजा कर, सब लोगों के सामने उस मन्दिर के भीतरी भाग की विजनता की परीक्षा (जाँच) कर, उसी मन्दिर की ओर दृष्टि लगाए हुए जन-समूह के साथ खड़ी रह कर, बड़े जोरों से नगाड़े की आवाज कराई। अत्यन्त सूक्ष्म छेद से गए हुए उस नाद से संकेत पाकर, जो लौह पादपीठ (लौहाधार) बहुत हृष्ट-पुष्ट पुरुष के प्रयत्न करने पर भी मुश्किल से हिल-डुल सकता था उसे मैं मूर्ति समेत सिर से उठा कर, दोनों हाथों से पकड़कर, एक सिरे को, एक तरफ रख कर निकल आया और कुमार को (भी) निकाल लाया। फिर पहिले ही की तरह दुर्गादेवी (की मूर्ति) को (बिल पर) रख कर, केवाड़ को खोलकर प्रत्यक्ष होकर, मैंने, विश्वास के कारण नेत्रों में प्रफुल्लता धारण करती हुई, साफ साफ (अपना) रोमाञ्च प्रकट करती हुई, अञ्जुली उठाकर (यानी हाथ जोड़कर) विस्मयपूर्वक प्रणाम करती हुई प्रजाओं को कहा "विन्ध्यवासिनी देवी मेरे द्वारा आप लोगों को आज्ञा देती है कि आपत्ति में पड़ा हुआ यह राजपुत्र, बाघ का रूप धारण कर मेरे द्वारा कृपापूर्वक छिपाया जाकर, आज आप लोगों को समर्पित कर दिया गया। उसको, आज से, आप लोग, यह समझते हुए ग्रहण करें कि यह लड़का मेरा (देवी विन्ध्यवासिनी का) पुत्र है अतः इस का मातृपक्ष (मातृकुल) अमन्द (नीचा नहीं बल्कि अत्यन्त ऊँचा) है। और मुझे (विश्रुत को) इस (लड़के) का रक्षक समझो—वह मैं जिसकी आत्मा निष्ठुर अश्मकेन्द्ररूपी घड़े को घट्टन करने वाली (फोड़ने वाली) है—वह अश्मकेन्द्र जिसकी शठता (शाठ्य) करोड़ों दुष्कर कपटों की योजना करने की चातुरी के कारण (सर्व साधारण को) प्रकट है। सुन्दर भौं वाली इसकी यह बहिन, आर्या विन्ध्यवासिनी द्वारा मेरे लिए, रक्षा की मजदूरी के तौर पर पत्नीत्वेन आदिष्ट की गयी है।"

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

स्पष्टार्थ—चंडवर्मणे च ताम् अवस्थाम् अश्मकेन्द्रोपविकृताम् एव सन्दिश्य—प्रचंडवर्मा तथा चंडवर्मा के पास यह सन्देशा भेज दिया कि प्रचंडवर्मा की जो यह दशा हुई है अर्थात् उसका जो वध हुआ है सो अश्मकेन्द्र वसन्तभानु द्वारा दगाबाजी से करवाया गया है।

पूर्वसंकेतितपौरामात्यसामन्तवृद्धैः—जिन्हें पहिले ही से यह संकेत दे दिया गया था कि स्वप्न को गुप्त रखना।

सर्वजनसमक्षं परीक्षितकुक्षिवैजन्यं तद्भवनं विधाय—सारी जनता के सामने उस मन्दिर की कुक्षि (अन्दरूनी भाग) की जाँच पड़ताल कराई और सब को दिखला दिया कि मन्दिर के अन्दर अब कोई भी आदमी कहीं भी छिपा लुका नहीं है (परीक्षित कुक्षि वैजन्यम्)।

तदुत्तदृष्टिः—रानी उसी मन्दिर की ओर दृष्टि लगाए रही।

पटीयांसं पटहशब्दम् अकारयत्—बड़े जोरों से नगाड़ा बजवाया। विश्रुत के साथ रानी ने यह बात पहिले साध-बाध लिया था कि मैं नगाड़ा बजवाऊँगी, तो नगाड़े की आवाज सुन कर तुम पत्थर को हटा देना आदि आदि।

अणुतररन्ध्रप्रविष्टेन तेन नादेन—बिल बना कर उसका मुँह ऊपर से एक बड़ी शिला से बन्द कर दिया गया था। परन्तु कहीं पर, शिला के नीचे, कोई छोटा सा रन्ध्र (सूराख) अवश्य ऐसा था जो ढका नहीं गया था, बल्कि खुला रह गया था। नगाड़े की आवाज उसी के द्वारा अन्दर गई जहाँ विश्रुत उस कुमार को लेकर बैठा हुआ था। जब नगाड़े का शब्द विश्रुत को सुनाई पड़ा तो उसे तुरन्त ही संज्ञा (संकेत) मिल गई कि अब सब मामला ठीक है, यहाँ से चलना चाहिए और प्रस्तरशिला को हटा कर बाहर निकलना चाहिए।

टिप्पणी—गलति—गच्छति व्यतीते, गल् धातु (जाना, गुजरना) +शतृ सप्तमी एकवचन। मध्यरात्रे—मध्यं रात्रेः इति मध्यरात्रः तस्मिन् मध्यरात्रे (तत्पुरुष), "अहःसर्वैकदेशसंख्यातपुण्याच्च रात्रेः"

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

सूत्र से समासान्त रात्रि के बाद अच् प्रत्यय जुड़ा और 'रात्रि' का 'इकार' लुप्त हो गया। वर्षवरोपनीतमहार्हरत्नभूषणपट्टनिवसनौ—वर्षवर—हिंजड़ा। "षण्ढो वर्षवरः" इत्यमरः। उपनीत—आनीत, लाया गया हुआ, उप+नी+क्त। महार्ह—बहुमूल्य, महान् अर्हः (मूल्यं) येषां तानि महार्हाणि (बहु०) रत्नमयानि भूषणानि इति रत्नभूषणानि (मध्यमपदलोपि कर्मधारय) यानी रत्न जड़े हुए गहने। पट्ट-कौशेय, रेशम। निवसनानि—वस्त्राणि। पट्टानि निवसनानि इति पट्टनिवसनानि (कर्मधारय), रेशमी वस्त्र। रत्नभूषणानि च पट्टनिवसनानि च इति रत्नभूषणपट्टनिवसनानि (द्वन्द्व)। महार्हाणि च तानि रत्नभूषणपट्टनिवसनानि च इति महार्हरत्नभूषणपट्टनिवसनानि (कर्मधारय) बहुमूल्य रत्नजटित आभूषण तथा रेशमी वस्त्र। वर्षवरेण—उपनीतानि इति वर्षवरोपनीतानि (तृ० त०) हिंजड़े द्वारा लाए गए हुए। वर्षवरोपनीतानि महार्हरत्नभूषणपट्टनिवसनानि ययोः तौ वर्षवरोपनीतमहार्हरत्नभूषणपट्टनिवसनौ (बहु०), विशेषण है "आवाम्" का। आवाम्—हम दोनों यानी कुमार तथा विश्रुत। तूष्णीम्—चुपचाप। पूर्वेद्युः—पूर्वस्मिन्दिने पहिले दिन, पूर्व+एद्युस्। यथार्हम्—अर्हः (मूल्यम्), कीमत। अर्हम् अनतिक्रम्य इति यथार्हम् (अव्ययीभाव समास), यथायोग्यम्। अग्निसंस्कारम्—अग्नौ संस्कारः इति अग्निसंस्कारः तम् अग्निसंस्कारम् (सप्तमी तत्पुरुष) अर्थात् दाहक्रियाम्। मालवाय प्रचण्डवर्मणे अग्निसंस्कारं दत्वा—मालवदेशनरेशाय प्रचण्डवर्मनाम्ने नृपाय दाहक्रियां दत्वा। दापयित्वा—दिलवाकर, दा धातु+णिच्+क्त्वा। ताम् अवस्थाम्—प्रचण्डवर्मणः मरणरूप घटनाम् उस अवस्था को यानी प्रचण्डवर्मा की हत्या को। अश्मकेन्द्रोपधिकृताम् एव—उपधि—कपट, दुष्कर्म। अश्मकेन्द्रस्य उपधि इति अश्मकेन्द्रोपधिः (ष० त०) अश्मकेन्द्र का कपट। अश्मकेन्द्रोपधिना कृता इति अश्मकेन्द्रोपधिकृता ताम् अश्मकेन्द्रोपधिकृताम् (तृ० त०), विशेषण है "ताम् अवस्थाम्" का। अश्मकेन्द्रोपधिकृताम् एव ताम् अवस्थाम्—अश्मकेन्द्र के छलकपट द्वारा की गई हुई उस अवस्था को। चण्डवर्मणे सन्दिश्य—चण्डवर्मा के

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

पास सन्देश भेज कर। सन्दिश्य—सन्देश भेजकर, सम्+दिश्+ल्यप्। उत्तरेद्युः—अन्यस्मिन्दिने, दूसरे दिन। प्रत्युषस्येव—प्रत्युषसि+एव। प्रातःकाले एव, सबेरे ही। पूर्वसङ्केतितपौरामात्यसामन्तवृद्धैः—पूर्व—सङ्केतित—पहिले ही से इशारा दिए गये हुए। पूर्वं सङ्केतिताः इति पूर्वसङ्केतिताः। पौराश्च अमात्याश्च सामन्तवृद्धाश्च इति पौरामात्यसामन्तवृद्धाः (द्वन्द्व); पूर्वसङ्केतिताश्च ते पौरामात्यसामन्तवृद्धाश्च इति पूर्वसङ्केतितपौरामात्यसामन्तवृद्धाः, तैः (कर्मधारय) पूर्वसङ्केतितपौरामात्यसामन्तवृद्धैः। सहयोगेतृतीया। पहिले ही से इशारा दिए गए हुए पुरवासियों, अमात्यों और बूढ़े बूढ़े सामन्तों के साथ। अभ्येत्य—अभ्यागत्य, आकर अभि+आ+इ+ल्यप्। सर्वजनप्रत्यक्षम्—अक्ष्णोः प्रति इति प्रत्यक्षम् (अव्ययीभाव समास) सर्वे च ते जनाश्च इति सर्वजनाः (कर्मधारय)। सर्वजनानां प्रत्यक्षम् इति सर्वजनप्रत्यक्षम् (ष० त०) सब लोगों के सामने। भगवतीम्—दुर्गादेवीम्। अर्चयित्वा—पूजयित्वा, पूजा करके अर्च्+क्त्वा। परीक्षितकुक्षिवैजन्यम्—कुक्षि—अभ्यन्तरम् कोख, भीतरी भाग (मन्दिर का)। विगताः जनाः यस्मात् तत् विजनम्, (बहु०) जनशून्यम् इत्यर्थः विजनस्य भावः वैजन्यम् अर्थात् जनशून्यत्वम्, विजन+ष्यञ्। परीक्षितं (सम्यग् दृष्टं कुक्षेः वैजन्यं यस्य तथोक्तम् भवनम् इति परीक्षित—कुक्षिवैजन्यभवनम् (बहु०) जिसकी कोख (भीतरी भाग) की विजनता (शून्यता) परीक्षित कर ली गई थी (जाँच ली गई थी) ऐसा भवन। तद्भवनम्—दुर्गामन्दिरम्। विधाय—कृत्वा, करके वि+धा+ल्यप्। तद्दत्तदृष्टिः—तस्मिन् मन्दिरे दत्ता दृष्टिः यया राज्ञ्या सा तद्दत्तदृष्टिः राज्ञी (बहु०), वह रानी जिसकी दृष्टि उसी मन्दिर पर लगी हुई थी। कहीं-कहीं पर पाठ है "दत्तादृष्टिः" जिसका विग्रह यों होगा "दत्तादृष्टिः यया सा" दत्तादृष्टिः (बहु०)'। जनेनासहास्थित्वा—सर्वसाधारणलोकसमूहेन सह स्थित्वा। पटीयांसम्—महान्तम्, विपुलं अतिशयेन पटुः इति पटीयान् तं पटीयांसम्, अति उच्चतरम् इत्यर्थः पटु+ईयसुन्=पटीयस्, पटीयान्, पटीयांसौ, पटीयांसः, पटीयांसम्, पटीयांसौ, पटीयसः

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

इत्यादि रूप चलते हैं। पटहशब्दम्—दुन्दुभिध्वनिम्। पटह—नगाड़ा, पटहस्य शब्दः इति पटहशब्दः तम् पटहशब्दम् (ष० त०) अकारयत्—करवाया, कृ+णिच् अनद्यतनभूत प्रथमपुरुष एकवचन। अणुतररन्ध्रप्रविष्टेन—रन्ध्रम्—छिद्रम्, सूराख। अतिशयेन अणु इति अणुतरम् अर्थात् बहुत बारीक अणु+तरप्, अणुतरं च तत् रन्ध्रं च इति अणुतररन्ध्रम् (कर्मधारय), अणुतररन्ध्रेण प्रविष्टः, इति अणुतररन्ध्रप्रविष्टः तेन अणुतररन्ध्रप्रविष्टेन (तृ० त०) विशेषण है "तेन नादेन" का। उस नाद के द्वारा जो बहुत बारीक छिद्र के द्वारा घुस गया था। दत्तसंज्ञः—संज्ञा—इशारा, संकेत, दत्ता संज्ञा यस्मै स दत्तसंज्ञः (बहु०) जिसको इशारा दिया गया था ऐसा मैं। उत्क्षिप्य—उत्थाप्य, उठाकर, उत्+क्षिप्+ल्यप्। सप्रतिमम्—प्रतिमा—मूर्ति, प्रतिमया सह वर्तमानं सप्रतिमम् (बहु०), देवीमूर्तिसहितम्, देवी की मूर्ति के सहित। लोहपादपीठम्—पादपीठः अथवा पादपीठम् दोनों शुद्ध हैं। लोहनिर्मित पादपीठम् इति लोहपादपीठम् (मध्यमपदलोपि कर्मधारय), लोहे का बना हुआ पावदान (वह स्टूल या आधार जिस पर पाँव रक्खा जाता है)। अंसलपुरुषप्रयत्नदुश्चलम्—अंसल—बलवान्, अंस+लच् "वत्सांसाभ्यां कामबले" इति लच् प्रत्ययः। काम (प्रेम) तथा बल (शक्ति) के अर्थ में वत्स तथा अंस शब्दों के अनन्तर लच् प्रत्यय लगता है। दुश्चलम्—दुःखेन चालयितुं शक्यम् इति दुश्चलम्, मुश्किल से जो हिल सके, दुस्+चल्+णिच्+खल्। अंसलश्चासौ पुरुषः इति अंसलपुरुषः (कर्मधारय) बलवान् पुरुष अंसलपुरुषस्य प्रयत्नाः इति अंसलपुरुषप्रयत्नाः (ष० त०) अंसलपुरुषप्रयत्नैः दुश्चलम् इति अंसलपुरुषप्रयत्नदुश्चलम् (तृ० त०) "बलवान् मांसलोंऽसलः" इत्यमरः, बलवान् पुरुष के प्रयत्नों से भी मुश्किल से हिलने-डुलने वाला लोह-पादपीठ। उभयकरविधृतम्—विधृत—गृहीत, पकड़ा हुआ, धारण किया हुआ, वि+धृ+क्त। उभयौ करौ इति उभयकरौ (कर्मधारय), उभयकराभ्यां विधृतम् इति उभयकरविधृतम् (तृ० त०) दोनों हाथों से पकड़ा हुआ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

कहीं-कहीं पर "उभयकरविधृतैकपार्श्वम्" पाठ है जिसका विग्रह यों होगा, उभयकराभ्यां विधृतः एकपार्श्वः यस्य तत् उभयकरविधृतैकपार्श्वम्, विशेषण है "लोहपादपीठम्" का। जिसका एक पार्श्व (बगल) दोनों हाथों से पकड़ा गया था ऐसा लोह-पादपीठ। पादपीठः तथा पादपीठम् दोनों ठीक हैं यानी पुलिंग तथा नपुंसक लिंग दोनों ठीक है। एकतः—एक+तसिल् बिलस्यैकपार्श्वे, बिल के एक तरफ। निवेश्य—स्थापयित्वा, रखकर, नि+विश्+णिच्+ल्यप्। निरगमम्—(मैं) निकल आया। निरगमयम्—मैंने निकाला, अहं निष्कासितवान् निर+गम्+णिच् अनद्यतनभूत उत्तम पुरुष एकवचन। यथापूर्वम्—पूर्वम् अनतिक्रम्य इति यथापूर्वम् (अव्ययीभाव)। "यथापुरम्" पाठ भी कहीं-कहीं पाया जाता है पुरा अनतिक्रम्य इति यथापुरम् अर्थात् पहिले के अनुसार। अर्पयित्वा—रखकर। दुर्गाम्—दुर्गादेव्याः मूर्तिम्। उद्घाटितकपाटः—उद्घाटित—उघाड़ा गया। कपाट—केवाड़ा, उद्घाटितौ कपाटौ येन सः उद्घाटितकपाटः (बहु०) विशेषण है 'अहम्' का। उघाड़ा गया था अर्थात् खोला गया था केवाड़ जिसके द्वारा—ऐसा मैं। प्रत्यक्षीभूय—अक्ष्णोः प्रति इति प्रत्यक्षः। न प्रत्यक्षः इति अप्रत्यक्षः (नञ् तत्पुरुष) अप्रत्यक्षः प्रत्यक्षः भूत्वा इति प्रत्यक्षीभूयः अर्थात् सर्वजनसमक्षं निर्गत्य, सारी पब्लिक के सामने निकलकर प्रत्यक्ष+च्वि+भू+ल्यप्। प्रत्ययहृष्टदृष्टि—प्रत्यय—विश्वास, प्रति+इ+अच् एरच्। प्रत्ययेन (विश्वासेन) हृष्टाः दृष्टयः यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात् तथा प्रत्ययहृष्टदृष्टि (बहुव्रीहि) यह क्रियाविशेषण अव्यय है। और "प्रणिपतन्तीः" की विशेषता बताता है। स्पष्टरोमाञ्चम्—स्पष्टाः रोमाञ्चाः यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात् तथा इति स्पष्टरोमाञ्चम्, यह भी क्रियाविशेषण अव्यय है, विशेषता बताता है "प्रणिपतन्तीः" का। उद्यताञ्जलि—उद्यत—उठी हुई, ऊपर गई हुई, उत्+यम्+क्त, उद्यतः अञ्जलयः यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात् तथा इति उद्यताञ्जलि। यह भी क्रियाविशेषण अव्यय है,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

"प्रणिपतन्तीः" की विशेषता बताता है। रूढविस्मयम्—रूढः (उत्पन्न) विस्मयः (आश्चर्य) यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात्तथा रूढविस्मयम्, क्रिया-विशेषण अव्यय है, विशेषता बताता है "प्रणिपतन्तीः" की। प्रणिपतन्तीः—प्रणमन्तीः, प्रणाम करती हुई, प्र+नि+पत्+शतृ द्वितीया बहुवचन, विशेषण है "प्रकृतीः" का। प्रकृतीः—प्रजाओं को द्वितीया बहुवचन। प्रणिपतन्तीः प्रकृतीः—प्रणाम करती हुई प्रजाओं को। अभ्यधाम् अकथयम्, (मैंने कहा) अभि+धा सामान्यभूत उत्तम पुरुष एकवचन। विन्ध्यवासिनी—विन्ध्ये (विन्ध्यनामके पर्वते) वसति इति विन्ध्यवासिनी, विन्ध्य+वस्+णिनि+ङीप्। मन्मुखेन—मम मुखम् इति मन्मुखम् तेन मन्मुखेन (ष० त०), मेरे द्वारा। आपन्नः आपत्ति-प्राप्तः, आपत्तिग्रस्तः आ+पद्+क्त। सकृपया—विद्यमाना कृपा यस्यां सा सकृपा तया सकृपया (बहु०), विशेषण है 'मया' का। शार्दूलरूपेण—शार्दूलस्य (व्याघ्रस्य) रूपम् इति शार्दूलरूपम् तेन शार्दूलरूपेण (ष० त०) अर्थात देवी ने व्याघ्र का रूप धारण कर कुमार को छिपा रक्खा था। तिरस्कृत्य—संगोप्य, छिपाकर, तिरस्+कृ+क्त। वो—वः अर्थात् युष्मभ्यम् तुम लोगों को। अद्यप्रभृति—आज से। मत्पुत्रतया—मम पुत्रः इति मत्पुत्रः (ष० त०) तस्य भावः मत्पुत्रता, तया मत्पुत्रतया, मेरे पुत्र होने के कारण। यह लड़का मेरा पुत्र है इस कारण। असन्दमातृपक्षः—मातुः पक्षः इति मातृपक्षः (ष० त०), अर्थात मातृकुलम्, न मन्दः (न नीचः, न क्षुद्रः) इति अमन्दः (नञ् तत्पु०), अमन्दः मातृपक्षः यस्य सः अमन्द-मातृपक्षः (बहु०), विशेषण है "स एष राजसूनुः" का। जिसका मातृकुल क्षुद्र (नीच) नहीं है बल्कि बहुत ऊँचा है ऐसा यह राजकुमार। इति—इति हेतोः इस कारण से। दुर्घटकूटकोटिघटनापाटव इत्यादि—दुर्घट—मुश्किल से की जा सकने वाली, दुःखेन घटयितुं शक्यानि इति दुर्घटानि, दुर्+घट्+खल्। कूट—कपट, धोखाबाजी। कोटि—करोड़। घटना—योजना, करणम्। पाटव—नैपुण्य, पटोः भावः पाटवम्, पटु+

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

अण् । प्रकट—विदित, विख्यात । शाठ्य—शठता, दुष्टता, शठस्य भावः शाठ्यम् शठ्+ष्यञ् । निष्ठुर—क्रूर । अश्मकेन्द्रघट—अश्मकेन्द्ररूपी घड़ा । घट्टनः—हिलाने वाला घट्ट धातु भ्वादिगणी आत्मनेपदी का अर्थ होता है "हिलाना", घट्टते आदि रूप होता है, घट्टते इति घट्टनः (हिलाने वाला), घट्ट्+ल्यु । अथवा घट्ट धातु चुरादिगणी उभयपदी ली जा सकती है जिसके अर्थ होते हैं "छेड़ छाड़ करना", घट्टयति इति घट्टनः (छेड़-छाड़ करने वाला)। दुर्घटानि च तानि कूटानि इति दुर्घटकूटानि (कर्मधारय)। कूटः कूटम् दोनों (पुलिङ्ग तथा नपुंसकलिङ्ग) शुद्ध हैं। दुर्घटकूटानां कोटयः इति दुर्घटकूटकोटयः अर्थात् दुस्साध्यकपट-समूहाः। (ष० त०), दुर्घटकूटकोटीनाम् घटना (योजना रचना) इति दुर्घटकूटकोटिघटना (ष० त०)। तस्यां पाटवम् इति दुर्घटकूटकोटिघटना-पाटवम्, (सप्तमी तत्पुरुष)। तेन प्रकटं (विख्यातं) शाठ्यम् (दुष्टत्वं) यस्य सः दुर्घटकूटकोटिघटनापाटवप्रकटशाठ्यः (बहु०)। दुर्घट कूटकोटिघटनापाटवप्रकटशाठ्यश्चासौ निष्ठुरश्च इति दुर्घट कूटकोटि घटना पाटव प्रकट शाठ्य निष्ठुरः (विशेषणोभयपद कर्मधारय) अश्मकेन्द्रः एव घटः इति अश्मकेन्द्रघटः (रूपक कर्मधारय)। दुर्घटकूटकोटिघटनापाटवप्रकटशाठ्यनिष्ठुरश्चासौ अश्मकेन्द्रघाटश्च इति दुर्घटकूटकोटिघटनापाटव प्रकटशाठ्यनिष्ठुराश्मकेन्द्रघटः (कर्मधारय) तस्य घट्टनः (नाशकः) आत्मा यस्य स दुर्घटकूट—कोटिघटनापाटव-प्रकटशाठ्यनिष्ठुराश्मकेन्द्रघटघट्टनात्मा तम् (बहु०), विशेषण है "माम्" का। मन्यध्वम्—जानीत, समझते जाओ। अस्य— राजकुमारस्य। रक्षितारम्—रक्षकम्, रक्ष्+तृन=रक्षितृ, रक्षिता रक्षितारौ रक्षितारः रक्षितारम् रक्षितारौ रक्षितॄन् इत्यादि रूप चलते हैं। रक्षानिर्वेशः—निर्वेशः—मजदूरी, मेहनताना, पारिश्रमिक, रक्षायाः निर्वेशः इति रक्षा-निर्वेशः (ष० त०), अर्थात् रक्षणपारिश्रमिकम् रक्षा की मजदूरी स्वस्रेयम्—स्वसा+इयम्, स्वसा—भगिनी, बहिन। सुभ्रूः शोभनाः भ्रुवः यस्याः सा सुभ्रूः (बहु०), जिसकी सुन्दर-सुन्दर भौंहें हों। विशेषण

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

है "इयं स्वसा" का अभ्यनुज्ञाता दातुं स्वीकृता अभि+अनु+ज्ञा+क्त+टाप्, आज्ञा पा चुकी है। मह्यम्—विश्रुताय। पत्नीत्वेन इति शेषः, पत्नी हो जाने के लिए। आर्यया—देव्या विन्ध्यवासिन्या।

श्रुत्वैतदहो भाग्यवान्भोजवंशो यस्य त्वमार्यादत्तो नाथ इत्यप्रीयन्त प्रकृतयः। सा तु वाचामगोचरां हर्षावस्थामस्पृशन्मे श्वश्रूः। तदहरेव च यथावदग्राहयन्मञ्जुवादिनीपाणिपल्लवम्। प्रपन्नायां च यामिन्यां सम्यग्विलं प्रत्यपूरयम्। अलब्धरन्ध्रश्च लोको नष्टमुष्टिचिन्तादिकथनैरभ्युपायान्तरप्रयुक्तैर्दिव्यांशतामेव मे समर्थयमानो मदाज्ञां नात्यवर्तत। राजपुत्रस्यार्यापुत्र इति प्रभावहेतुः प्रसिद्धिरासीत्। तं च गुणवत्यहनि मुद्राकृतमुपनाय्य पुरोहितेन पाठयन्राजकार्याण्यन्वतिष्ठम्। अचिन्त्यं च राज्यं नाम शक्तित्रयायत्तम्। शक्तयश्च मन्त्रप्रभावोत्साहाः परस्परानुगृहीताः कृत्येषु कल्पन्ते। मन्त्रेण हि विनिश्चयोऽर्थानाम्। प्रभावेण प्रारम्भः। उत्साहेन निर्वहणम्। अतः पञ्चाङ्गमन्त्रमूलो द्विरूपप्रभावस्कन्धश्चतुर्गुणोत्साहविटपो द्विसप्ततिप्रकृतिपत्रः षड्गुणकिसलयः शक्तिसिद्धिपुष्पफलश्च नयवनस्पतिर्नेतुरुपकरोति। स चायमनेकाधिकरणत्वादसहायेन दुरुपजीवः। अस्त्ययमार्यकेतुर्नाम मित्रवर्ममन्त्री स कोसलाभिजनत्वात्कुमारमातृपक्षो मन्त्रिगुणैश्च युक्तस्तन्मतिमवमत्यैव ध्वस्तो मित्रवर्मा। स चेल्लब्धः पेशलमिति। अथ नालिजङ्घं रहस्यशिक्षयम्। तातार्यकेतुमेकान्ते ब्रूहि। कोन्वेष मायापुरुषो य इमां राज्यलक्ष्मीमनुभवति। स चायमस्मद्बालो भुजङ्गेनामुना परिगृहीतः। किमुद्गीर्यते ग्रस्यते वेति। स यद्वदिष्यति तदस्मि बोध्य इति।

हिन्दी अनुवाद—इस बात को सुन कर "ओहो भोजवंश भाग्यवान् है जिसमें आर्या विन्ध्यवासिनी देवी द्वारा दिए गए हुए तुम जैसे स्वामी हुए" ऐसा कह कर प्रजा हर्षित होने लगी। मेरी वह सास, वाणी द्वारा अकथनीय हर्षावस्था को प्राप्त हुई और उसी दिन, विधिपूर्वक मञ्जुवादिनी का पाणिपल्लव (मुझे) ग्रहण करवा दिया। रात्रि हो जाने

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

पर (मैंने) अच्छी तरह बिल को बन्द कर दिया। लोगों को (जरा सा भी) (इसका) रन्ध्र (रहस्य) नहीं मिला, साथ ही खोई हुई चीजों को, मुट्ठी में बँधी हुई चीजों को, तथा किसको क्या चिन्ता है इत्यादि बातों को बता देने के कारण, तथा बहुत से अन्य उपायों के प्रयोग से, मेरी उत्पत्ति दिव्य कारणों से हुई है ऐसा समझते हुए वे मेरी आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं करते थे। राजपुत्र की "यह आर्या विन्ध्यवासिनी देवी का पुत्र है" इस प्रभाव के कारण (खूब) प्रसिद्धि हुई। एक शुभ दिन राजपुत्र का मुण्डन करा कर, पुरोहित द्वारा उपनयन (यज्ञोपवीत) संस्कार करा कर, नीति पढ़ाता हुआ, मैं, राज कार्य करने लगा। (फिर) मैंने सोचा "राज्य वस्तुतः तीन शक्तियों के अधीन होता है। और, शक्तियाँ तीन होती है मन्त्रशक्ति, प्रभावशक्ति, उत्साहशक्ति, ये तीनों पारस्परिक अनुग्रह (सहयोग अथवा सहायता) से कार्यों में सफल होती हैं। मन्त्र-शक्ति से अर्थों (करणीय कार्यों) का निश्चय होता है, प्रभावशक्ति से प्रारम्भ होता है और उत्साह शक्ति से सिद्धि (अथवा निर्वाह) होती है। अतः नीतिरूपी वृक्ष, नेता (राजा) का उपकार करता है—नीति वृक्ष जिसका मूल पाँच अंगों वाला मन्त्र है, जिसका स्कन्ध (तना) दो प्रकार का प्रभाव है, जिसकी शाखाएँ हैं चार प्रकार के उत्साह, जिसके पत्ते बहत्तर प्रकार की प्रकृतियाँ है, जिसकी कोंपलें छः गुण हैं, जिसके फूल-फल शक्तियाँ तथा सिद्धियाँ हैं। अनेक अधिकरण वाला (अर्थात् अनेक प्रकार का) होने के कारण इसका अवलम्बन, कोई भी असहाय व्यक्ति, बड़ी मुश्किल से कर सकता है। आर्यकेतु नामक जो यह मित्रवर्मा का मन्त्री है वह कोशल-देश वासी वंश की सन्तान होने के कारण, राजकुमार के मातृपक्ष का है, और मन्त्री के गुणों से युक्त है। उसी की राय की अवहेलना कर मित्रवर्मा नष्ट हुआ है। यदि वह मिल जाय तो अत्युत्तम हो" ऐसा विचार कर (मैंने) नालीजङ्घ को एकान्त में सिखाया—हे तात, आर्यकेतु से एकान्त में कहो कि यह मायावी पुरुष कौन है जो इस राज-लक्ष्मी को भोग रहा है। हमारा राजकुमार इस सर्प द्वारा पकड़ लिया गया

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

है, न जाने निगल लिया जायगा अथवा उगल दिया जायगा'। वह जो कुछ कहेगा (उत्तर देगा) सो मुझे बताना।

टिप्पणी—श्रुत्वैतत्—श्रुत्वा एतत्। यस्य—इसका अन्वय "नाथः" के साथ होगा—यस्य नाथः—जिसके स्वामी। त्वम्—विश्रुतः। आर्यादत्तः—आर्या विन्ध्यवासिनी के द्वारा दिया हुआ आर्यया देव्या विन्ध्यवासिन्या दत्तः इति आर्यादत्तः (तृ० त०)। अप्रीयन्त—प्रीतिमापुः, प्रसन्न हुई। सा—इसका अन्वय होगा "श्वश्रूः" के साथ। सा श्वश्रूः—वह सास। सा मे श्वश्रूः—वह मेरी सास। मे—इसका सम्बन्ध है "श्वश्रूः" के साथ। वाचाम्—वाणीनाम्। अगोचराम्—अविषयाम् न गोचरा इति अगोचरा (नञ् तत्पुरुष)। वाचाम् अगोचराम्—वाण्याः अविषयाम्, अर्थात् वाण्या अवर्णनीयाम्। हर्षावस्थाम्—हर्षस्य अवस्था (दशा) इति हर्षावस्था ताम् हर्षावस्थाम् (ष० त०)। तदहरेव—तदहः एव, तस्मिन् अहनि इति तदहः, उसी दिन। यथावत्—विधिपूर्वकम्। अग्राहयत्—पकड़वा दिया, ग्रह् धातु+णिच्, अनद्यतनभूत प्र० पु० एकवचन। मञ्जुवादिनीपाणिपल्लवम्—पाणिः (करः हाथ) पल्लवम् इव इति पाणिपल्लवम् (उपमानोत्तरपद कर्मधारय)। मञ्जुवादिन्याः पाणिपल्लवम् इति मञ्जुवादिनीपाणिपल्लवम् (ष० त०), मञ्जुवादिनी का पल्लवसदृश कोमल हाथ। प्रपन्नायाम्—प्राप्तायाम्, पहुँच जाने पर, आजाने पर, प्र+पद्+क्त+टाप्। यामिन्याम्—रात्र्याम्। यामिनी—रात्रि। सम्यक्—पूर्णरूपेण पूरी तौर से। प्रत्यपूरयम्—मैंने पाट दिया, बन्द कर दिया, प्रति+पूर् चुरादिगणी अनद्यतनभूत उत्तम पुरुष एकवचन। अलब्ध-रन्ध्रः—रन्ध्र—छिद्र अर्थात् रहस्य, न लब्धं रन्ध्रं येन सः अलब्धरन्ध्रः (बहु०), नहीं पाया जा सका रहस्य जिसके द्वारा ऐसा "लोकः" यानी वह जनता जो रहस्य को नहीं समझ सकी थी। नष्टमुष्टिचिन्तादिकथनैः—नष्टकथनैः—खोई हुई चीजों को बतला देने के कारण। मुष्टिकथनैः—मुट्ठी में बन्द करके रक्खी हुई चीजों को बतला देने के कारण। चिन्ताकथनैः—

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

कौन मनुष्य क्या सोच रहा है इस बात को बता देने के कारण। विश्रुत इन सभी बातों में निपुण था। यदि किसी की कोई चीज खो जाती थी तो वह तुरन्त बतला देता था कि आप की अमुक चीज खो गई है, फलाँ जगह मिलेगी या बिल्कुल मिलेगी ही नहीं। इसी प्रकार, लोग अपनी मुट्ठी में कोई चीज बन्द करके रख लेते थे और विश्रुत से कहते थे कि बताइए, हमारी मुट्ठी में क्या है। विश्रुत शीघ्र ही बतला देता था कि आप की मुट्ठी में अमुक चीज है। इसी प्रकार वह यह भी बतला देता था कि कौन मनुष्य क्या सोच रहा है। नष्टं च मुष्टिश्च चिन्ता च इति नष्टमुष्टिचिन्ताः (द्वन्द्व), ताः आदयो येषां तानि नष्टमुष्टिचिन्तादयः (बहु०) तेषां कथनानि इति नष्ट मुष्टिचिन्तादिकथनानि तैः नष्टमुष्टिचिन्तादिकथनैः (ष० त०)। अभ्युपाया-न्तरप्रयुक्तैः—"प्रयुक्त" में जो क्त प्रत्यय लगा है वह भाववाचक संज्ञा का द्योतक है। "प्रयुक्त" माने प्रयोग। अन्ये अभ्युपायाः इति अभ्युपायान्तराणि (मयूरव्यंसकादित्वात् समासः), अभ्युपायान्तराणां प्रयुक्तानि (अर्थात् प्रयोगः) इति अभ्युपायान्तर-प्रयुक्तानि, तैः अभ्यु-पायान्तर प्रयुक्तैः (षष्ठी तत्पुरुष), दूसरे-दूसरे उपायों के प्रयोग से यानी दूसरे दूसरे उपाय प्रयोग करके। दिव्यांशताम्—दिवि भवाः दिव्याः अर्थात् सुराः दिव्+यत् तेषाम् अंशः इति दिव्यांशः (ष० त०), तस्य भावः दिव्यांशता ताम् दिव्यांशताम्। "मैं (विश्रुत) दिव्य विभूतियों का अंश हूँ" इस बात को। समर्थयमानः—द्रढयन्, समर्थन करते हुए, दृढतापूर्वक कहते हुए, सम्+अर्थ+शानच्। मदाज्ञाम्—मेरी आज्ञा को, मम आज्ञा इति मदाज्ञा ताम् मदाज्ञाम् (ष० त०), विश्रुतस्य आज्ञाम्। नात्यवर्तत—न उदलङ्घयत् उल्लंघन नहीं करती थी। राज-पुत्रस्य—इसका अन्वय होगा "प्रसिद्धिः" के साथ। राजपुत्रस्य प्रसिद्धिः आसीत्—राजपुत्र की ख्याति हुई, प्रसिद्धि=प्र+सिध्+क्तिन्। आर्यापुत्रः इति—आर्यायाः (विन्ध्य-वासिन्याः देव्याः) पुत्रः इति आर्यापुत्रः (ष० त०) इत्येवंरूपा ख्यातिः अभवत्। प्रभावहेतुः—प्रभावः एव हेतुः यस्याः सा प्रभावहेतुः (बहु०), विशेषण है "प्रसिद्धिः"

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
का। यानी प्रभाव (रोआब) ही था कारण (उत्पादक) जिसका ऐसी प्रसिद्धि—प्रसिद्धि का मूल कारण था प्रभाव,—यह प्रभाव (रोआब) कि यह राजकुमार, देवी विन्ध्यवासिनी का, पुत्र है। दूसरा विग्रह यह हो सकता है—प्रभावस्य हेतुः इति प्रभावहेतुः (ष० त०), इस अवस्था में अर्थ होगा कि प्रभाव का कारण था प्रसिद्धि—प्रभाव को पैदा करने वाली थी 'प्रसिद्धि' यानी प्रसिद्धि ही से प्रभाव पैदा हुआ।

गुणवति अहनि—शुभे दिने, गुणाः विद्यन्ते अस्मिन् इति गुणवत् तस्मिन् गुणवति, गुण+मतुप्। भद्राकृतम्—मुण्डितम्, जिसका बाल बनवा दिया गया हो, भद्रा+कृ+क्त। उपनाय्य—उपनयन-संस्कार (यज्ञोपवीत संस्कार) कारयित्वा, यज्ञोपवीतसंस्कार करवा कर, उप+नी+णिच्+ल्यप्। पुरोहितेन उपनाय्य—पुरोहित द्वारा उपनयन संस्कार करवा कर। पाठयन् नीतिम्—राजनीतिम् अध्यापयन् नीति पढ़ाता हुआ, पठ्+णिच्+शतृ, विश्रुत स्वयं उस राजकुमार को नीति पढ़ाता था। अथवा पुरोहितेन नीतिं पाठयन्—पुरोहित के द्वारा नीति पढ़वाता हुआ। इस सूरत में "पुरोहितेन" को दोनों तरफ जोड़ना होगा "पुरोहितेन उपनाय्य" और "पुरोहितेन नीतिं पाठयन्" यानी पुरोहित के द्वारा उपनयन संस्कार करवा कर और उसी पुरोहित से नीति पढ़वाता हुआ। राजकार्याणि—राज्ञः कार्याणि इति राजकार्याणि (ष० त०) राजा के कार्य। "राज्यकार्याणि" पाठ होने पर राज्यस्य कार्याणि इति राज्यकार्याणि (ष० त०), राज्य के कार्य। अन्वतिष्ठम्—अकरवम्, मैंने किया, अनु उपसर्ग पूर्वक स्था धातु का अर्थ होता है "करना"। शक्तित्रयायत्तम्—शक्तीनां त्रयम् इति शक्तित्रयम् (ष० त०), तस्य आयत्तम् (अधीनम्) इति शक्तित्रयायत्तम् (ष० त०), तीन शक्तियों के अधीन। तीन शक्तियों पर निर्भर मन्त्रप्रभावोत्साहाः—मन्त्रश्च प्रभावश्च उत्साहश्च इति मन्त्रप्रभावोत्साहाः (द्वन्द्व), मन्त्रशक्ति, प्रभावशक्ति तथा उत्साहशक्ति—ये तीन शक्तियाँ होती हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

मन्त्रशक्ति—अच्छी सलाह देने वाले अच्छे-अच्छे मन्त्रियों का होना। प्रभावशक्ति—चारों ओर प्रभाव (रोआब, आतङ्क) फैला रहे। उत्साह-शक्ति—प्रत्येक कार्य को करने के लिए पर्याप्त उत्साह रक्खे, असफल होने पर भी निराश न होवे। परस्परानुगृहीताः—परस्परेण अनुगृहीताः इति परस्परानुगृहीताः (तृतीया तत्पुरुष) अर्थात् अन्योन्यकृतसहायाः एक दूसरे से अनुगृहीत हो कर, एक दूसरे को सहयोग देती हुई। कृत्येषु—कार्येषु। क्रमन्ते—स्वकीयं पुरुषार्थं प्रदर्शयन्ति, सफलीभवन्ति। अपना पुरुषार्थ दिखलाती हैं अथवा सफल होती हैं। विनिश्चयः—स्थिरीकरणम्, दृढसङ्कल्पः, वि+निस्+चि+अच्। एरच् सूत्र से अच् प्रत्यय हुआ है। अर्थानाम् विनिश्चयः—अमुक कार्य अवश्य करना है ऐसा सङ्कल्प। निर्वहणम्—निभाना सिद्धिप्राप्तिकरणम्। निर्+वह्+ल्युट्। उत्साहेन निर्वहणम्—उत्साह से ही कार्य की सफलता-पूर्वक समाप्ति होती है। पञ्चाङ्गमन्त्रमूल :—पञ्च अङ्गानि यस्य सः पञ्चाङ्गः (बहु०) पंचांगश्चासौ मन्त्रश्च इति पंचांगमन्त्रः (कर्मधारय), पाँच अंगों वाला मन्त्र। पंचांगमन्त्रः मूल यस्य स पंचांगमन्त्रमूलः (बहु०), विशेषण है "नयवनस्पतिः" का, ऐसा नयरूपी वृक्ष जिसकी जड़ें हैं "पंचांग मन्त्र"। मन्त्र के पाँच अंग ये हैं—

१ सहायाः २ साधनोपायाः ३ विभागो देशकालयोः।
४ विपत्तेश्च प्रतीकारः ५ सिद्धिः पंचांगमुच्यते॥

१ सहाया :—सहायक। २ साधनोपाया :—अभीष्ट मनोरथ की प्राप्ति के साधन। ३ देशविभाग तथा कालविभाग—स्थान का विभाग, तथा समय का विभाग। ४ विपत्तेः प्रतीकारः—आने वाली विपत्ति को हटाना या दूर करना। ५ सिद्धि—अभीष्ट कार्य में सफलता। द्विरूपप्रभावस्कन्ध—द्वे रूपे यस्य स द्विरूपः (बहु०) जिसके दो रूप हों यानी दो ढंग हों। द्विरूपश्चासौ प्रभावश्च 'इति द्विरूपप्रभावः (कर्म-धारय), दो प्रकार वाला प्रभाव। द्विरूप प्रभाव एव स्कन्धः यस्य स द्विरूप-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

प्रभावस्कन्ध: (बहु०), जिसके दो रूप (प्रकार) हैं ऐसा प्रभाव ही स्कन्ध (तना) है जिस (नय-वनस्पति) का ऐसा नय-वनस्पति। स प्रभावः प्रतापश्च यत्तेजः) कोशदंडजम्—(इत्यमरः)। प्रभाव दो प्रकार का होता है। (१) कोशज—कोश से उत्पन्न यानी खूब धन होना। (२) दंडज—दंड विधान से उत्पन्न। यदि कभी कोई भी व्यक्ति बद-माशी करे तो उसे इतना दंड देवे कि देखने वाले लोग भयभीत हो जायँ और उनके ऊपर आतंक छा जाय। चतुर्गुणोत्साहविटप:—चत्वारो गुणाः यस्य स चतुर्गुणः (बहु०) चतुर्गुणश्चासौ उत्साहश्च इति चतुर्गु-णोत्साहः (कर्मधारय) चतुर्गुणोत्साह एव विटपा: (शाखा:) यस्य स: चतुर्गुणोत्साह-विटप: (बहु०), विशेषण है "नय-वनस्पतिः" का, चार गुणों वाला उत्साह ही जिसकी शाखाएँ हैं। चार प्रकार के उत्साह ये हैं—१ साम २ दान ३ दंड ४ भेद। द्विसप्ततिप्रकृतिपत्र:—द्विसप्तति: प्रकृतयः इति द्विसप्ततिप्रकृतय: (द्विगु), ता एव पत्राणि यस्य सः द्विसप्तति प्रकृतिपत्रः (बहु०), बहत्तर प्रकृतियाँ ही जिसके पत्ते हैं। षड्गुण-किसलयः—किसलय—कोंपलें, बहुत ही कोमल कोमल पत्तियाँ जो पतझड़ के बाद तुरन्त ही वृक्षों में लगती रहती हैं और पहिले लाल-लाल रहती हैं। षड्गुणाः एव किसलयानि यस्य सः षड्गुणकिसलयः (बहु०)। छः गुण ही जिसकी कोंपलें हैं।

सन्धिर्ना विग्रहो यानमासनं द्वैधमाश्रयः।
षड्गुणाः शक्तयस्तिस्रः प्रभावोत्साहमन्त्रजाः॥

(१) सन्धि—(२) विग्रह—(लड़ाई झगड़ा) (३) यान—(चढ़ाई करना) (४) आसनम्—घेरा डाल कर ताक में बैठे रहना (५) द्वैधम्—दुरंगी चाल चलना (६) आश्रयः—किसी बलवान् राजा का सहारा लेकर शत्रु पर चढ़ाई करना अथवा उसे परास्त करना। शक्तिसिद्धिपुष्पफलः—शक्तयश्च सिद्धयश्च इति शक्तिसिद्धयः (द्वन्द्व)। पुष्पाणि च फलानि च इति पुष्पफलानि (द्वन्द्व)। शक्तिसिद्धयः एव पुष्पफलानि यस्य स

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

शक्तिसिद्धिपुष्पफलः (बहु०), शक्तियाँ ही जिसके फूल हैं और सिद्धियाँ ही जिसके फल हैं। पहिले ही बता दिया जा चुका है कि सिद्धियाँ और शक्तियाँ तीन प्रकार की होती हैं। षड्गुणाः शक्तयस्तिस्रः सिद्धयश्चोदयास्त्रयः। नयवनस्पतिः—नयः (राजनीतिः) एव वनस्पतिः वृक्षः इति नयवनस्पतिः (अवधारणापूर्वपद कर्मधारय) राजनीतिरूपी वृक्ष। नेतुः—नेता का (चाहे वह राजा हो, चाहे प्रधान मन्त्री), नी+तृन्=नेतृ। उपकरोति—उपकार करता है। अनेकाधिकरणत्वात्—अनेकप्रकारत्वात्, अनेकानि अधिकरणानि यस्य स अनेकाधिकरणः (बहु०) तस्य भावः अनेकाधिकरणत्वम्, तस्मात् अनेकाधिकरणत्वात् अनेक प्रकार का होने के कारण। असहायेन—अविद्यमानः सहायः यस्य सः असहायः तेन असहायेन (बहु०) जिसके कोई सहायक न हो ऐसे पुरुष के द्वारा। दुरुपजीव्यः—दुःखेन उपजीवितुं शक्यः इति दुरुपजीव्यः, दुस्+उप+जीव्+यत्। जीविका के लिए जिसका आश्रय मुश्किल से लिया जा सकता हो। जीविका के लिए जिस पर निर्भर नहीं हुआ जा सकता। कोसलाभिजनत्वात्—कोसलवंश का होने के कारण—कोसलवंशत्वात् "सन्ततिर्गोत्रजननकुलान्यभिजनान्वयौ" इत्यमरः। कुमारमातृपक्षः—कुमारस्य माता इति कुमारमाता (ष० त०), कुमारमातुः पक्षः इति कुमारमातृपक्षः (ष० त०) कुमार की माता के पक्ष वाला। मन्त्रिगुणैः—प्रधानगुणैः, मन्त्रियों के गुणों से, मन्त्रिणः गुणाः इति मन्त्रिगुणाः तैः (ष० त०), मन्त्रियों में जो गुण होने चाहिए उन गुणों से। तन्मतम्—तस्य मतम् इति तन्मतम् (ष० त०), उसकी राय को। अवमत्य—अनादृत्य, तिरस्कृत्य, अवहेलना (तिरस्कार) कर, अव+मन्+ल्यप्। ध्वस्तः—नष्टः, ध्वंस्+क्त। स चेल्लब्धः—स चेत् लब्धः यदि वह मिल जाय। चेत्—यदि स लब्धः—वह (मित्रवर्मा) मिल जाय (हमें)। पेशलम्—सुन्दरम्, उत्तमम्। सचेल्लब्ध पेशलम्—यदि वह मिल जाय, तो (बहुत) सुन्दर (अच्छा) हो। मायापुरुषः—मायामयः

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
(कपटमयः) पुरुषः इति मायापुरुषः (मध्यमपदलोपि कर्मधारयः) । राजलक्ष्मीम्—राज्ञः लक्ष्मीः इति राजलक्ष्मीः ताम् राजलक्ष्मीम् (ष० त०) । अथवा राज्यलक्ष्मीम्—राज्यस्य लक्ष्मीः इति राज्यलक्ष्मीः ताम् राज्यलक्ष्मीम् (ष० त०) । अनुभवति—उपभुङ्क्ते भोगता है । अस्मद्बालः—अस्माक बालः (बालकः) इति अस्मद्बालः (ष० त०), हमारा लड़का । भुजङ्गेन—सर्पेण । किम् उद्गीर्येत—त्यज्येत, उगल दिया जाय । किम् उद्गीर्येत ग्रस्येत वा—क्या यह सम्भव है कि यह लड़का उसके द्वारा उगल दिया जाय (छोड़ दिया जाय) । ग्रस्येत वा—भक्षिष्यते अथवा ग्रस (निगल) लिया जाय । तदस्मि बोध्यः—तत् अस्मि बोध्यः, वह मैं सूचित किया जाने योग्य हूँ । यानी वह बात मुझे सूचित कीजिएगा । अस्मि—का यहाँ पर अर्थ है "अहम्" । बोध्यः—बोधयितुं योग्य इति बोध्यः, बुध्+णिच्+यत् ।

सोऽप्यन्यदैवं मामावेदयत । मुहुरुपास्य प्राभृतैः प्रवर्त्य चित्राः कथाः संवाह्य पाणिपादमतिविस्रम्भदत्तक्षणं तमप्राक्षं त्वदुपदिष्टेन नयेन । सोऽप्येवमकथयत । भद्र, मैवं वादीः । अभिजनस्य शुद्धिर्दर्शनमसाधारणं बुद्धिनैपुणमतिमानुषं प्राणबलमपरिमाणमौदार्यमत्याश्चर्यमस्त्रकौशलमनल्पं शिल्पज्ञानमनुमहार्द्रं चेतस्तेजश्चाप्यविषह्यमस्यमित्रीणमित्यस्मिन्नेव संनिपातिनो गुणाः येऽन्यत्रैकैकशोऽपि दुर्लभाः । द्विषतामेष चिरं बल्वद्रुमः प्रजानां तु चन्दनतरुस्तमुद्धृत्य नीतिज्ञम्मन्यमश्मकमिमं च राजपुत्रमनेन पित्र्ये पदे प्रतिष्ठितमेव विद्धि । नात्र संशयः कार्य इति । तच्चापि श्रुत्वा भूयो भूयश्चोपधाभिर्विशोध्य तं मे मतिसहायमकरवम् । ततस्तश्च सत्यशौचयुक्तानमात्यान्विविधव्यञ्जनांश्च गूढपुरुषानुदपादयम । तेभ्यश्चोपलभ्य लुब्धसमृद्धमत्यन्तिकमविधेयप्रायं च प्रकृतिमण्डलमलुब्धतामभिख्यापयन्धार्मिकत्वमुद्भावयन्नास्तिकान्कदर्थयन्कण्टकान्विशोधयन्नमित्रोपधीरुपघ्नंश्चातुर्वर्ण्यं च स्वधर्मकर्मसु स्थापयन्नभिसमाहरेयमर्थान् । अर्थमूला हि दण्डविशिष्टकर्मारम्भाः । न चान्यदस्ति पापिष्ठं तत्र दौर्बल्यादित्याकलय्य योगादन्वतिष्ठम् ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

हिन्दी अनुवाद—उसने भी दूसरे समय मुझसे इस प्रकार कहा—बार बार उपहारों से (उसकी) सेवा कर (अथवा उसे प्रसन्न कर), विचित्र विचित्र कहानियाँ कह कर, (उसके) हाथ पाँव दबाकर, मैंने, जब मुझे उसके द्वारा अत्यन्त एकान्त में अवसर दिया गया तब, उससे आपके बताए हुए राजनीतिक तरीके से पूछा। उसने भी इस प्रकार कहा—ऐ भद्र, ऐसा मत कहो। वंश की शुद्धता (अर्थात् शुद्ध वंश), असाधारण स्वरूप, बुद्धि की निपुणता, तमाम मनुष्यों से बढ़कर पुरुषार्थ, अपरम्पार उदारता, अत्यन्त आश्चर्यजनक अस्त्र चलाने की निपुणता, प्रचुर शिल्प (कला)-ज्ञान (कारीगरी), दयार्द्र चित्त, शत्रुओं का सामना करने वाला तथा असह्य तेज ये गुण जो दूसरे लोगों में एक एक करके भी मुश्किल से पाए जाते हैं, इस (विश्रुत) में एक साथ विद्यमान हैं। शत्रुओं के लिए यह (विश्रुत) विजबिल (विष) के वृक्ष हैं और नम्रों (या इनमें अनुराग रखने वालों) के लिए चन्दनवृक्ष हैं। अपने को नीतिज्ञ लगाने वाले उस अश्मकेन्द्र को उखाड़ कर इस राजपुत्र को (अपने) पिता के स्थान पर प्रतिष्ठित (बैठा हुआ) ही समझो। इसमें सन्देह नहीं किया जाना चाहिए। इस बात को सुनकर, और बार बार अनेक परीक्षोपायों से उसको जाँच कर, उस (आर्यकेतु) को (मैंने) अपना मति-सहायक (सहायक मन्त्री) बना लिया। (फिर) उसके साथ, सत्य तथा शौच (ईमानदारी) से युक्त मन्त्रियों को तथा नाना प्रकार के वेष धारण करने वाले गुप्तचरों को पैदा किया अर्थात् गुप्तचरों का एक विभाग तैयार किया। उनके द्वारा लोभी तथा धनाढ्य, अत्यन्त अभिमानी, प्रायः अवज्ञाकारी प्रजामण्डल का पता लगा कर "अलुब्धता (लोभी न होना) अच्छी चीज है" ऐसा घोषित करता हुआ, धार्मिकता को बढ़ाता हुआ, नास्तिकों को सताता हुआ, कण्टकों को (राज्य में विघ्न-बाधा पैदा करने वालों को) साफ करता हुआ, शत्रुओं की चालबाजियों को नष्ट करता हुआ, चारों वर्णों को अपने अपने धर्म-कार्यों में स्थापित करता हुआ, मैं धन (राज्य के कर) इकट्ठा करूँ क्योंकि दण्ड विशिष्ट

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri
कर्मों के आरम्भ करने की जड़ धन (ही) है। उसमें दुर्बलता (कमजोरी) (दिखाने) से बढ़कर पाप दूसरा कोई नहीं है ऐसा विचार कर मैं (अर्थोपार्जन के लिए) अनेक उपाय करने लगा।

टिप्पणी—अन्यदा—अन्यस्मिन् समये, दूसरे समय, दूसरे अवसर पर। आवेदयत्—व्यज्ञापयत्, सूचित किया। मुहुः—पुनः पुनः। उपास्य—सेवित्वा, सेवा करके, प्रसन्न करके, उप+आस्+ल्यप्। प्रभृतैः—उपायनैः, उपहारैः उपहारों से। प्रवर्त्य—आरभ्य, चला कर, छेड़कर, प्र+वृत्+णिच्+ल्यप्। चित्राः—अद्भुताः। संवाह्य—दबाकर; सम्+वह्+णिच्+ल्यप्। पाणिपादम्—पाणी च पादौ च इत्येतेषां समाहारः पाणिपादम् (समाहारद्वन्द्व), "द्वन्द्वश्च प्राणितूर्यसेनाङ्गानाम्—से समाहारद्वन्द्व हुआ है। अतिविस्रम्भदत्तक्षणः—अतिविस्रम्भ—महान् विश्वास, क्षण—अवकाश। अतिविस्रम्भे दत्तः क्षणः (क्षणं वा) येन सः अतिविस्रम्भदत्तक्षणः तम् अतिविस्रम्भदत्तक्षणम् (बहु०); महान् विश्वास (एकान्तस्थान) में दिया गया है अवसर जिसके द्वारा ऐसे उस आर्यकेतु को। अप्राक्षम्—(मैंने) पूछा। प्रच्छ् धातु सामान्य भूत उत्तम पुरुष एकवचन। त्वादुपदिष्टेन—भवता शिक्षितेन त्वया उपदिष्टः इति त्वदुपदिष्टः तेन त्वदुपदिष्टेन (तृ० त०), तुम्हारे द्वारा सिखाया हुआ। नयेन—नीतिमार्गेण तरीके से। अभिजनस्य—कुलस्य। शुद्धिदर्शनम्—वैमल्यदर्शनम्, शुद्धता का सूचित होना या दिखाई पड़ना शुद्धेः दर्शनम् (ज्ञापकम्) इति शुद्धिदर्शनम्। असाधारणम्—साधारणातिगम्, अतिमहत् न साधारणम् इत्यसाधारणम् (नञ् तत्पुरुष)। असाधारणं बुद्धिनैपुण्यम्—अतिमहत् बुद्धिचातुर्यम्—अत्यधिक बुद्धि की चतुरता अथवा तीक्ष्णता। अतिमानुषम्—अलौकिकम्। अतिक्रान्तं मानुषम् इति अतिमानुषम् (प्रादितत्पुरुष) अत्यादयः क्रान्ताद्यर्थे द्वितीयया नियम से 'अति' का समास द्वितीयान्त 'मानुषम्' के साथ किया गया है मनुष्याणां समूहः मानुषम्, मनुष्य+अण्। प्राणबलम्—सत्त्वम, साहसम् प्राणानां बलम् इति प्राणबलम् (ष० त०) शरीरबलम् इति शेषः।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

अपरिमाणम्—परिमाणरहितम् अविद्यमानं परिमाणं यस्य तत् अपरिमाणम् (बहु०)। औदार्यम्—उदारस्य भावः औदार्यम्, उदार+ ष्यञ् । अत्याश्चर्यम्—अत्यन्तम् आश्चर्यजनकम् । अस्त्रकौशलम्—अस्त्र चलाने की चतुरता। अस्त्रेषु कौशलम् इति अस्त्रकौशलम् (सप्तमी तत्पुरुष), कुशलस्य भावः कौशलम्, कुशल+अण् । अनल्पम्—अतिमहत्, अत्यधिकम्, न अल्पम् इति अनल्पम् (नञ् तत्पुरुष)। शिल्पज्ञानम्—कलाज्ञानम्; शिल्पानां (कलानां) ज्ञानम् इति शिल्पज्ञानम् ष० त०)। अनुग्रहार्द्रम्—दयया स्निग्धम् । अनुग्रहः—दया। आर्द्र, स्निग्ध, गीला, भीगा हुआ। अनुग्रहेण आर्द्रम् इति अनुग्रहार्द्रम् (तृ० त०) अर्थात् दयार्द्र, दया के कारण पिघल जाने वाला। तेजः—प्रतापः, कान्तिः । अविषह्यम्—विषोढुं शक्यम् विषह्यम्, वि+सह्+यत्, न विषह्यम् इति अविषह्यम्, (नञ् तत्पुरुष), अर्थात् सोढुमशक्यम्, न सहा जा सकने वाला। अभ्यमित्रीणम्—शत्रुओं का सामना करने वाला, अमित्र—शत्रु, अमित्राणि (शत्रून्) अभिमुख गच्छति इति अभ्यमित्रीणम् अभि+अमित्र+ख (ईन) विशेषण है "तेजः" का। अस्मिन् एव—विश्रुते एव । संनिपातिनः—एकत्रावस्थिताः, एक जगह पर इकट्ठा, सम्+नि+पत्+णिनि। अन्यत्र—अन्यस्मिन् पुरुषे, दूसरे पुरुष में। एकैकशः अपि—एक एक करके भी, एक+एक+शस्। द्विषताम्—शत्रूणाम्, द्विष्+शतृ षष्ठी बहुवचन । चिरबिल्वद्रुमः—विषवृक्षः, चिलबिल का पेड़, चिरबिल्वस्य द्रुमः इति चिरबिल्वद्रुमः (ष० त०)। प्रह्वानाम्—नम्राणाम्, नम्र व्यक्तियों के लिए, अथवा अनुरागवताम्, अनुराग रखने वालों के लिए। तम्—इसका अन्वय होगा "नीतिज्ञम्मन्यम् अश्मकेन्द्रम्" के साथ। उद्धृत्य—विनाश्य, उखाड़ कर, उत्+धृ+ल्यप्। नीतिज्ञम्मन्यम्—आत्मानं नीतिज्ञं मन्यते इति नीतिज्ञम्मन्यः तम् नीतिज्ञम्मन्यम्, "आत्ममाने खश्च" सूत्र से "अपने को समझता है" के अर्थ में मन् धातु से ख प्रत्यय हुआ है। जानाति इति ज्ञः ज्ञा+क, "इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः" से क प्रत्यय हुआ है। नीतेः ज्ञः इति

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

नीतिज्ञः (ष० त०) नीतिज्ञ+मन्+ख। पित्र्ये पदे—पिता के स्थान पर, पितुः इदं पित्र्यं पदम् तस्मिन्। पितृ+यत्। प्रतिष्ठितम् एव—बैठा ही हुआ, प्रति+स्था+क्त। विद्धि—जानीहि, जानो। उपधाभिः—परीक्षोपायैः, ईमानदारी को जाँचने के लिए जो उपाय किए जाते हैं उन्हें 'उपधा' कहते हैं। विशोध्य—परीक्ष्य, परीक्षा करके, वि+शुध्+णिच्++ल्यप्। तम्—आर्यकेतुम्। मे—स्वकीयस्य। मतिसहायम्—बुद्धिसहायम्, राय में सहायक, मतौ सहायः इति मतिसहायः तम् मतिसहायम् (सप्तमी तत्पुरुष)। तत्सखः—तत्सहायः, तस्य सखा इति तत्सखः (ष० त०), उसका मित्र (बन कर) (मैं); यानी उसके साथ। "राजाहःसखिभ्यष्टच्" सूत्र से तत्पुरुष समासान्त सखि के बाद "टच्" प्रत्यय जुड़ा है। सत्यशौचयुक्तान्—सत्ययुक्तान् पुरुषान् तथा शौचयुक्तान् पुरुषान्। शौच—शुद्धि, ईमानदारी, तथा आचरण की पवित्रता आदि। सत्यं च शौचं च इति सत्यशौचे (द्वन्द्व) ताभ्यां युक्ताः इति सत्यशौचयुक्ताः तान् सत्यशौचयुक्तान् (तृ० त०)। विविधव्यञ्जनान्—नानावेषधारिणः, व्यञ्जनम्—वस्त्रम्। विविधानि नानाप्रकारकाणि व्यञ्जनानि वस्त्राणि येषां ते विविधव्यञ्जनाः तान् विविधव्यञ्जनान् (बहु०), विशेषण है 'गूढपुरुषान्' का, नाना प्रकार के वेष धारण करने वाले (गुप्तचरों को)। उदपादयम् (मैंने) पैदा किया (तैयार किया) अजनयम्। तेभ्यः—गूढपुरुषेभ्यः, गुप्तचरों से, उपलभ्य—ज्ञात्वा, प्राप्य, पाकर, यानी पता लगा कर, उप+लभ्+ल्यप्। लुब्धसमृद्धम्—लोभोपहतं धनयुक्तं च, लुब्धं च तत् समृद्धं च इति लुब्धसमृद्धम् (विशेषणोभयपदकर्मधारय), लोभी और धनाढ्य। अत्युत्सिक्तम्—उत्सिक्त—अभिमानयुक्त। अत्युत्सिक्तम्, अत्यन्तम् अभिमानयुक्तम्। अविधेयप्रायम्—विधेय—आज्ञाकारी, वशवर्ती, न विधेयम् इति अविधेयम्, प्रायेण अविधेयम् इति अविधेयप्रायम् अर्थात् प्रायशः अवशाकारी, विशेषण है 'प्रकृतिमण्डलम्', का। अविधेयप्रायं प्रकृतिमण्डलम्—ऐसा प्रकृतिमण्डल जिसमें अधिकांश लोग वशवर्ती

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

नहीं थे। प्रकृतिमण्डलम्—प्रकृतीनां मण्डलम् इति प्रकृतिमण्डलम् (ष० त०), प्रजामण्डलम्। अलुब्धताम्—लोभराहित्यम्, लुब्धस्य भावः लुब्धता, न लुब्धता इति अलुब्धता ताम् अलुब्धताम् (नञ् तत्पुरुष), लोभी न होने के गुण को। अभिख्यापयन्—घोषयन्, प्रकटीकुर्वन्, घोषित करता हुआ, अभि+ख्या+णिच्+शतृ। उद्भावयन्—वर्धयन्, बढ़ाता हुआ, उत्+भू+णिच्+शतृ। नास्तिकान्—नास्ति दिष्टम् इति मतिर्यस्य स नास्तिकः। परमात्मनि अविश्वासकारिणः, परमात्मा में अविश्वास करने वाले लोगों को। कदर्थयन्—पीडयन्, पीडित करता हुआ। कंटकान्—राज्ये विघ्नकरान् उपद्रवकरान् वा, शत्रून् इत्यर्थः, काँटों को यानी राज्य में उपद्रव पैदा करने वालों को। विशोधयन्—उन्मूलयन्, साफ करता हुआ, यानी नाश करता हुआ, वि+शुध्+णिच्+शतृ। अमित्रोपधीः—अमित्र—शत्रु। उपधिः—कपट। अमित्राणाम् उपधयः इति अमित्रोपधयः ताः अमित्रोपधीः, (ष० त०), अर्थात् शत्रुओं के कपट को। अपघ्नन्—हनन करता हुआ, कुचलता हुआ, अप+हन्+शतृ। चातुर्वर्ण्यम्—चत्वारः वर्णाः इति चतुर्वर्णाः, चतुर्वर्णाः एव चातुर्वर्ण्यम्, चतुर्वर्ण+ष्यञ् स्वार्थे, चारों वर्णों को, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र को। स्वधर्मकर्मसु—धर्मश्च कर्माणि च इति धर्मकर्माणि (द्वन्द्व), स्वस्य धर्म-कर्माणि इति स्वधर्मकर्माणि तेषु स्वधर्मकर्मसु (ष० त०)। अथवा यों विग्रह कीजिए—अपने-अपने धर्म और कर्मों में। धर्मयुक्तानि कर्माणि इति धर्म-कर्माणि (मध्यमपदलोपिकर्मधारय); स्वस्य धर्म-कर्माणि इति स्वधर्मकर्माणि तेषु स्वधर्मकर्मसु, अपने अपने धर्म-विहित कार्यों में। धर्म की दृष्टि से जिस वर्ण का जो कर्म है उस कर्म। धर्म की दृष्टि से चारों वर्णों के ये कर्म हैं—

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्॥
शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् ।
परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् ॥गी०॥

अभिसमाहरेयम्—सञ्चिनुयाम्, उपार्जयेयम्, इकट्ठा करूँ, उपाजन करूँ । अर्थान्—धनानि, अर्थमूलाः—धनाधीनाः; धन के अधीन, अर्थः एव मूलं येषां ते अर्थमूलाः (बहु०), विशेषण है "दण्डविशिष्ट-कर्मारम्भाः" का । दण्डविशिष्टकर्मारम्भाः—दण्डेन विशिष्टानि इति दण्डविशिष्टानि (तृ० त०), दण्डविशिष्टानि च तानि कर्माणि इति दण्डविशिष्टकर्माणि (कर्मधारय) दण्डविशिष्टकर्मणाम् आरम्भः इति दण्डविशिष्टकर्मारम्भः (ष० त०), जिन कामों में दण्ड देना पड़ता है ऐसे कार्यों का आरम्भ (धन पर ही निर्भर रहा करता है) अथवा धन के अधीन हुआ करता है । तत्र—उसमें, यानी अर्थोपार्जन में अथवा दण्डविशिष्ट कार्यों के आरम्भ करने में । दौर्बल्यात्—कमजोरी से, निर्बलत्वात्, दुर्बलस्य भावः दौर्बल्यम् तस्मात् दौर्बल्यात्, दुर्बल+ ष्यञ् । पापिष्ठम्--निकृष्टम्, अतिशयेन पापम् इति पापिष्ठम्, पाप+इष्ठन्, अर्थात् पापतमम् । दौर्बल्यात् अन्यत्—कमजोरी से भिन्न, कमजोरी के अतिरिक्त दूसरा । आकलय्य—विचार्य, विचार कर, आ+कल् चुरादि +ल्यप् । योगान्—विविधोपायान् ।

योगो युक्तौ च सङ्गत्यां कर्मणालभ्यलाभयोः ।
देहदार्ढ्ये प्रयोगे च विष्कम्भादौ तथात्मनि ॥
उपाये भेषजे विद्धिर्दृष्टिसंनहने धने ।
विश्रब्धघातिनि ध्याने युक्तिन्याये च योजने ॥

(पद चन्द्रिका)

"योग" शब्द के भिन्न-भिन्न अर्थ ये हैं—मिलना, या मिलाना, सङ्गति (सम्बद्धता, प्रासंगिकता), कर्म द्वारा अलभ्य वस्तु की प्राप्ति, देह की मज-बूती, प्रयोग, उपाय, दवाई, तैयारी, धन, विश्रब्धपुरुष का घातक, ध्यान, औचित्य, तथा व्याकरणसम्बन्धी योजना । अन्वतिष्ठम्—आचरम् (मैंने) किया, अकरवम्, अनु+स्था+लङ् उत्तमपुरुष एकवचन ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

A.K.S = 55644
A.
Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् ।
परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् ॥गी०॥

अभिसमाहरेयम्—सञ्चिनुयाम्, उपार्जयेयम्, इकट्ठा करूँ, उपार्जन करूँ । अर्थान्—धनानि, अर्थमूलाः—धनाधीनाः; धन के अधीन, अर्थः एव मूलं येषां ते अर्थमूलाः (बहु०), विशेषण है "दण्डविशिष्ट-कर्मारम्भाः" का । दण्डविशिष्टकर्मारम्भाः—दण्डेन विशिष्टानि इति दण्डविशिष्टानि (तृ० त०), दण्डविशिष्टानि च तानि कर्माणि इति दण्डविशिष्टकर्माणि (कर्मधारय) दण्डविशिष्टकर्मणाम् आरम्भः इति दण्डविशिष्टकर्मारम्भः (ष० त०), जिन कामों में दण्ड देना पड़ता है ऐसे कार्यों का आरम्भ (धन पर ही निर्भर रहा करता है) अथवा धन के अधीन हुआ करता है । तत्र—उसमें, यानी अर्थोपार्जन में अथवा दण्डविशिष्ट कार्यों के आरम्भ करने में । दौर्बल्यात्—कमजोरी से, निर्बलत्वात्, दुर्बलस्य भावः दौर्बल्यम् तस्मात् दौर्बल्यात्, दुर्बल+ष्यञ् । पापिष्ठम्—निकृष्टम्, अतिशयेन पापम् इति पापिष्ठम्, पाप+इष्ठन्, अर्थात् पापतमम् । दौर्बल्यात् अन्यत्—कमजोरी से भिन्न, कमजोरी के अतिरिक्त दूसरा । आकलय्य—विचार्य, विचार कर, आ+कल् चुरादि +ल्यप् । योगान्—विविधोपायान् ।

योगो युक्तौ च सङ्गत्यां कर्मणालभ्यलाभयोः ।
देहदार्ढ्ये प्रयोगे च विष्कम्भादौ तथात्मनि ॥
उपाये भेषजे विद्भिर्दृष्टिसंनहने धने ।
विश्रब्धघातिनि ध्याने युक्तिन्याये च योजने ॥

(पद चन्द्रिका)

"योग" शब्द के भिन्न-भिन्न अर्थ ये हैं—मिलना, या मिलाना, सङ्गति (सम्बद्धता, प्रासंगिकता), कर्म द्वारा अलभ्य वस्तु की प्राप्ति, देह की मजबूती, प्रयोग, उपाय, दवाई, तैयारी, धन, विश्रब्धपुरुष का घातक, ध्यान, औचित्य, तथा व्याकरणसम्बन्धी योजना । अन्वतिष्ठम्—आचरम् (मैंने) किया, अकरवम्, अनु+स्था+अनद्यतनभूत उत्तमपुरुष एकवचन ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

A.K.S = 55644
Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

संस्कृत की श्रेष्ठ पुस्तकें

Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri

विस्तृत व्याख्या, अनुवाद, आलोचना एवं टीका सहित

ऋक् सूक्त सुधा (ऋग्वेद से संकलित) सं० डा० सत्यनारायण पाण्डेय	५.००
रामायण मंजरी (श्लोक १६२ से ४१३ तक)	१.५०
अभिज्ञानशाकुन्तलम् (चतुर्थ अंक)--सं० आर० भट्ट	२.००
रघुवंशम्--१, ४, ५, ६, १३ तथा १४वाँ सर्ग--प्रत्येक सर्ग का	१.५०
रघुवंशम् (द्वितीय सर्ग)—	१.७५
कुमारसम्भवम्--प्रथम और पंचम सर्ग--क्रमश:	१.००, १.७५
मेघदूतम--पूर्व मेघ एवं उत्तर मेघ--क्रमश:	२.००, १.७५
मालविकाग्निमित्रम्--सं० तारिणीश झा	३.००
स्वप्नवासवदत्तम्---सं० पी० पी० शर्मा	२.२५
नीतिशतकम्--(भर्तृहरि-विरचित) सं० कृष्ण चन्द्र शुक्ल	१.५०
शुकनासोपदेश--(कादम्बरीत्)—सं० देवेन्द्र मिश्र	१.२५
प्रतिज्ञायौगन्धरायणम्—सं० रामचन्द्र शुक्ल	१.५०
विश्रुतचरितम्—सं० रामकृष्ण शुक्ल	१.५०
वेणीसंहार नाटकम्--सं० तारिणीश झा	१.५०
दशकुमारचरितम् (पूर्वपीठिका प्रथम उच्छ्वास)—	१.००
किरातार्जुनीयम्—प्रथम सर्ग तथा द्वितीय सर्ग--प्रत्येक का	१.२५
उत्तररामचरितम्--सं० तारिणीश झा	४.५०
उत्तररामचरितम्-- (केवल तृतीय अंक)	१.२५
शिशुपालवधम्—प्रथम सर्ग एवं द्वितीय सर्ग	२.००
भोजप्रबन्ध--सं० देवेन्द्र मिश्र	२.२५
रत्नावलीनाटिका—सं० देवेन्द्र मिश्र	३.५०
श्रीमद्भगवद्गीता--(द्वितीय अध्याय)--सं० तारिणीश झा	१.००
मुद्राराक्षसम्—सं० तारिणीश झा	४.५०
कादम्बरी कथामुखम्---सं० उपेन्द्र मिश्र	४.००
चारुदत्तम्—ले० चन्द्रभानु त्रिपाठी एम० ए०	२.५०
अपरीक्षित कारकम् (पञ्चतन्त्रम्) सं० तारिणीश झा	१.५०
प्रतिमा नाटकम्---सं० तारिणीश झा	

अन्य उपयोगी पु[…]

काले : हायर संस्कृत ग्रामर--हिन्दी में	
काले : स्मालर संस्कृत ग्रामर--हिन्दी में	
संस्कृत निबन्ध-पथ-प्रदर्शक—आप्टेकृत	
संस्कृत-साहित्य का इतिहास—ले० वी० वर्दा[…]	
संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ—संस्कृत से हिन्दी […]	

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

रामनारायणलाल बेनीप्रसा[…]